आत्मविश्वास से आत्म विकास गीताञ्जली

(गद्य-पद्यमय)

-आचार्य कनकनन्दी

: पुण्य-स्मरण :

ओबरी में शीतकालीन 3 महिना प्रवास के स्मरणार्थे

स्वैच्छिक अर्थ सौजन्य (ज्ञानदानी)

1. श्रीमती मीनादेवी श्री दिलीपजी पिता श्री रमणलालजी गोदावत, ओबरी
2. श्रीमती कैलाशदेवी श्री अरविन्दजी पिता श्री मगनलालजी गोदावत, ओबरी
3. दिगम्बर जैन महिला मण्डल, ओबरी

ग्रंथांङ्क-291 प्रतियाँ-500
संस्करण-प्रथम 2018 मूल्य-101/- रु.

प्राप्ति स्थान एवं सम्पर्क सूत्र

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा आशीर्वाद प्राप्त

(1) धर्म-दर्शन सेवा संस्थान

द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा

चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,
उदयपुर (राज.)-313001/मो. 097832-16418

(2) डॉ. नारायणलाल कछारा

सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001
फोन नं. 0294-2491422/मो. 092144-60622
E-mail:nlkachhara@yahoo.com

अनुक्रमणिका

विषय	पृ.स.
(1) धर्म सम्बन्धी मेरे अनुभव	3
(2) मेरे हेतु परम स्वाधीन व गणतन्त्र	4
(3) आत्म विकास हेतु मेरी प्रतिबद्धता	15
(4) मैं सतत आत्मविश्वास-आत्मानुभव-आत्मप्रशंसा करूँ	23
(5) अमूर्तिक द्रव्यों की श्रद्धा-प्रज्ञा	39
(6) पापसम पुण्य व मोक्षप्रद पुण्य	62
(7) स्व-हित-अहित पूर्वक होता पर-हित-अहित	71
(8) अच्छी भावना व कल्पना से महान् उपलब्धि	75
(9) दोषग्राही दुर्जन पतित व गुणग्राही सज्जन महान्	98
(10) सम्यग्दृष्टि जैन तथा मिथ्यादृष्टि(जैन बाह्य) का स्वरूप	109
(11) सम्यग्दृष्टि जैन होते निजशुद्धात्मा में अनुरक्त	114
(12) लौकिक जन श्/ल आध्यात्मिकजन	115
(13) खोटा भाव-कथन-काम-सुलभतम	119
(14) विकथा व सुकथा	124
(15) अमृत तथा विष (विषमता) की आत्मकथा	130
(16) शब्द शक्ति	133
(17) खजूर की आत्मकथा व आत्मव्यथा	134
(18) नारिकेल की आत्मकथा व परोपकारिता	137
(19) शाक (पत्ति) की आत्मकथा-आत्मव्यथा-शिक्षा	142
(20) मूल की आत्म कथा	153
(21) मैं ही मेरे संसार-मोक्ष का ईश्वर मैं हूँ	154
(22) परपरिणती त्याग से बनूँ परम स्वतंत्र-सुखी	157
(23) मेरे हेतु ग्राह्य-अग्राह्य-माध्यस्थ	158
(24) मेरी श्रद्धा यहाँ क्यों झुक जाती है	159

धर्म सम्बन्धी मेरे अनुभव

(दशविधधर्म व रत्नत्रय सम्बन्धी मेरे अनुभव व लाभ)

- आचार्य कनकनदी

(चालः- नगरी नगरी ...)

बडा सुख पाता आनंद आता...जब धर्म का अनुभव होता।
श्रद्धा बढ़ती व प्रज्ञा बढ़ती...समता-शांति-तृप्ति बढ़ती।।
क्षमा में /(से) पाता तनाव न होता...वाद-विवाद, कलह न होते।
मित्रता होती एकता बढती...सेवा-सहयोग-स्नेह बढ़ती।। (1)

मृदुता में /(से) पाता गौरव बढ़ता...अन्य प्रति न ईर्ष्या...द्वेष होते।
दिखावा-आडम्बर-ढोंग न होते...विनम्रता-सत्यग्राहिता होती।।
आर्जव में /(से) पाता सरलता आती...तन-मन-वचन में एकता होती।
छिपाना न होता द्वन्द्व न होता...संक्लेश-भय भी नहीं होते।। (2)

शुचिता में / (से) पाता लोभ न होता...संतुष्टि-तृप्ति-शान्ति मिलती।
ख्याति-पूजा-लाभ-प्रसिद्धि नशते...आकुलता-व्याकुलता-चिन्ता नशे।।
सत्य में /(से) पाता शक्ति को पाता...सत्य में ही सब समाहित पाता।
परम सत्य से ले लौकिक सत्य...नीति-नियम सदाचार पाता।।(3)

हित-मित-प्रिय-वचन होता...निन्दा-गप्प व विकथा न होते।
विभाव घटते स्वभाव प्रकटे...शुद्ध-बुद्ध-आनन्द को पाता।।
संयम में /(से) पाता अनुशासन आता...स्वावलम्बन से आगे बढ़ता।
तन-मन-इन्द्रियाँ संयमित होते...समय-शक्ति का सदुपयोग होता।।(4)

तप में /(से) पाता इच्छानिरोध होता...तृष्णा व आसक्ति दूर होती।
दोष भी नशते गुण प्रगटते...दीन-हीन-अहंकार नशते।।
त्याग में /(से) पाता विभाव घटता...प्रतिस्पर्द्धा-तुलना नहीं होती।
आत्मगुण बढते-गौरव बढ़े...आत्मावलम्बन व स्वाभीमान बढ़े।।(5)

उपर्युक्त गुणों से आकिंचन्य आता...आत्मिक अनंन्त गुणों का भाव होता।
स्वयं की पूर्णता व उपलब्धि हेतु...स्वयं में ही स्वयं को पाना होता।
इन सब गुणों से ब्रह्मचर्य होता...शुद्ध-बुद्ध व आनंद होता।
मोक्ष अवस्था या ब्रह्मलीनता होती...ऐसा अनुभव आंशिक मुझे होता।।(6)

श्रद्धा में / (से) पाता आत्मविश्वास होता...मैं हूँ सच्चिदानंद का लक्ष्य होता।
दीन-हीन व अहंकार से भी परे...स्व-अनन्त वैभव का गौरव होता।।
इस से ज्ञान भी सम्यक् होता...ऐसा मेरे अनुभव में आता।
हिताहित ज्ञान या वीतरागविज्ञान...ग्रहणीय-त्यजनीय का ज्ञान होता।।(7)

ज्ञान में /(से) पाता आत्मबल बढ़ता...अन्धानुकरण भी नहीं होता।
उदार-व्यापक भाव व्यवहार होते...क्रूर-कठोर व रूढ़ि भी नशे।।
इन सब से सदाचरण भी होता-सत्य-साम्य व सुख मिलता।
संकल्प-विकल्प-संक्लेश नशे...शोध-बोध व अनुभव बढे।।(8)

अस्त-व्यस्त संत्रस्त न होता...समय-शक्ति का दुरुपयोग न होता।
स्वयं में ही स्वयं में लीन हो जाता...बाह्य प्रपंच से मैं दूर हो जाता।।
इन सब से मुझे अनुभव होते...अन्य जीव भी स्वयमेव प्रभावित होते।
स्व-दोष त्यागते गुणों को बढ़ाते...स्वेच्छा से मम भक्त-शिष्य बनते।।(9)

सेवादान करते गौरव मानते...आत्मविश्वास से वे आगे बढ़ते।
निस्पृह-निराडम्बर-आंकिचन्य होकर...ज्ञान-ध्यान में 'कनक' रत होते।
ओबरी 16.01.2018 रात्रि 07:42

मेरे हेतु परम स्वाधीन व गणतन्त्र
(भारत के 69वें गणतन्त्र दिवस के उपलक्ष्य में)

- आचार्य कनकनदी

(चालः - 1. मन रे ! तू काहे न, 2. सायोनारा)

जिया रे ! तू स्वयं को जानो मानो ऽऽऽ

स्वयं का ही करो स्मरण-मनन, ध्यान अध्ययन व रमण ऽऽ(ध्रुव)

स्वं के गुण-दोष विश्लेषण करो, दोष हरण व करो गुण-ग्रहण ऽऽऽ
राग द्वेष मोह-ईर्ष्या तृष्णादि दोष, समता-शान्ति सहिष्णुतादि गुण ऽऽ
तू तो शुद्ध-बुद्ध-आनन्दकंद ऽऽऽ जिया रे। (1)

ऐसा विश्वास ही है आत्मविश्वास...तदनुकुल जो होता वह सम्यक् ज्ञान ऽऽ
दोष हरण गुण संवर्धन करना ही...जो होता वह ही होता सदाचरण ऽऽऽ
इससे ही मिलता परिनिर्वाण ऽऽऽ जिया रे (2)

इसके बिना सभी तप-त्याग-व्रत...ध्यान अध्ययन व अध्यापन ऽऽऽ
न होते कोई भी मोक्ष के कारण ऽऽऽ (यथा) ईकाई बिना शून्य न मूल्यवान् ऽऽऽ
ईकाई से युक्त-शून्य होता मूल्यवान... जिया रे (3)

दाणं पूया सीलं उपवासं बहुविंहपि खवणंपि।
सम्मजुदं मोक्खसुहं सम्मविणा दीह संसारं।। 10 (रयणसार)

णिय सुद्दप्पणुरत्तो बहिरप्पा वच्छवजिओ णाणी
जिण मुणि धम्मं मणाई गइ दुक्खी होई सद्दिट्ठी।। 6. (रयणसार)

निज शुद्धात्मा ही अनुरक्त रहो, बहि अन्तरंग बंधन से विरक्त।
जिनेन्द्र मुनीन्द्र धर्म में रत रहो ... (जिससे) बनोगे अतः दुःखमुक्त सुदृष्टि।।
एकत्वविभक्त ही शुद्धात्म दृष्टि ऽऽ...जिया रे (4)

यह ही तेरा धर्म यह ही सुधर्म है...अन्य सभी हैं कुधर्म व अधर्मऽऽ
ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि वर्चस्वऽऽ दीन हीन दंभ-द्वन्द्व क्लेशऽऽ
(परनिन्दा-अपमानादि भी अधर्म ऽऽ जिया रे (5)

आत्माधीन ही होते हैं स्वधर्म... पराधीन सभी ही हैं अधर्मऽऽ
शुद्ध-बुद्ध-आनन्द होना ही स्वधर्म...संक्लेश-द्वन्द्व व दुःख अधर्मऽऽ
'कनक' तेरा साध्य साधन सुधर्म।। जिया रे (6)
ओबरी दि 26.11.2018 गणतन्त्र दिवस रात्रि 7.49

संदर्भ -

मात्र भेष/लिंग से कल्याण नहीं

धरियउ वाहिरलिंगं परिहरियउ बाहिरक्खसोक्खं हि।
करियउ किरियाकम्मं मरिउ जमिउ वहिरप्पुजिउ।।68।। रयण.

अर्थ :- बहिरात्मा जीव-सम्यकत्व रहित बाह्य लिंग को धारण कर अर्थात् मुनि अवस्था को धारण करता है और प्रकट रूप से इन्द्रियों के बाह्य सुख का त्याग करता है, अनेक प्रकार के बाह्य कठिन व्रताचरण करता है परन्तु फिर भी बहिरात्मा मिथ्यादृष्टि जीव जन्म मरण के दारुण दुःखों को प्राप्त होता है।

भावार्थ :- सम्यग्दर्शन के बिना बाह्य मुनिलिंग और व्रताचरण से भी संसार का नाश नहीं होता है, जन्म मरण का नाश नहीं कर सकता है।

मिथ्यात्व के नाश बिना मोक्ष नहीं

मोक्खणिमित्तं दुक्खं वहेइ परलोयदिट्ठितणुदिट्ठी।।
मिच्छाभाव ण च्छिज्जइ किं पावइ मोक्खसोक्खं हि।। 69।।

अर्थः- अज्ञान मिथ्यादृष्टि बहिरात्मा जीव मिथ्यात्व भाव को छोड़ता नहीं, स्वर्ग की इच्छा करता है, अपने शरीर का पोषण करता है, मोक्ष पाने के लिए बहुत से काय क्लेश करता है, बाह्य अनेक प्रकार के तप करता है, कायक्लेश दुःखों को सहता है, ऐसे मिथ्यादृष्टि को मोक्ष सुख वास्तव में कैसे प्राप्त हो सकता है ? नहीं हो सकता।

भावार्थ :- मिथ्यादृष्टि जीव मोक्ष प्राप्ति के लिए अनेकविध व्रत तप आदि शरीर के माध्यम से करता है लेकिन भीतरी मिथ्याभाव को नहीं छोड़ता। मिथ्याभाव को त्याग किये बिना मोक्ष का, आत्मा का सुख कैसे प्राप्त होगा? नहीं होगा।

बामी को पीटने से क्या लाभ ?

ण हु दंडइ कोहाइं देहं दंडेइ कहं खवइ कम्मं।
सप्पो किं मुवइ तहा वम्मिउ मारिउ लोए।।70।।

अर्थ :- हे बहिरात्मा तू ! जब तक क्रोध, मान, मोह आदि कषाय दुर्भावों को नहीं छोड़ता है, उनका दमन शमन नहीं करता है, और शरीर को ही उपवास आदि के

द्वारा कष्ट देता है, दंड देता है, क्या इससे तेरे कर्म नष्ट होंगे ? नहीं होंगे। जैसे लोक व्यवहार में सर्प के बामी पीटता जाय तो भीतर बैठा हुआ सर्प मर जायेगा ? कभी नहीं मरेगा, उसी प्रकार जब तक भीतर के अपने क्रोधादि कषाय, विकार भाव, विपरीत भाव-परिणाम नष्ट नहीं होंगे, निर्मल नहीं होंगे तब तक मोक्ष की प्राप्ति नहीं होगी।

संयमी कौन ?

उपसम तव भाव जुदो णाणी सो भावसंजुदो होई।
णाणी कसायवसगो असंजदो होइ सो ताव।। 71।।

अर्थ :- उपशम भाव से व्रत तपश्चरण चारित्र आदि धारण किये जाये अर्थात् उपशम सम्यकत्व और उपशम चारित्र को धारण करने वाला ज्ञानी जीव कषायों का उपशम होने पर वह तपस्वी भाव संयत होता है।

परन्तु कषाय के वशीभूत होकर व्रत तपश्चरण उपवास चारित्र आदि धारण किये जाये तो वे असंयमभाव को ही प्राप्त होते हैं।

भावार्थ :- सम्यग्दृष्टि जीवों के उपशम भाव से जब तक व्रतादि होते हैं तब तक उनके संयम भाव होता है, परन्तु अनेक शास्त्रों का ज्ञाता महाज्ञानी पुरुष अपने-ज्ञान के अभिमान में कषायों से व्रतादिक को धारण करता है तब उस समय में उसके भावों में कलुषित, विकृत, कषाय रंजित भाव परिणाम होने से असंयत भाव ही रहते हैं।

ज्ञान मात्र से कर्म का क्षय नहीं हो सकता

णाणी खवेइ कम्मं णाणवलेणेदि सुबोलए अण्णाणी
विज्जो भेसज्जमहं जाणे इदि णस्सदे वाही ।।72।।

अर्थ :- कोई कहता है कि ज्ञानी पुरुष ज्ञान के बल से कर्मों को नष्ट कर देता है, सो वह कहने वाला अज्ञानी है। क्योंकि बिना चारित्र के अकेले ज्ञान मात्र से कभी कर्म, नष्ट नहीं हो सकते हैं। मैं वैद्य हूँ, सभी औषधि को जानता हूँ, ऐसे कहने मात्र से व्याधियाँ नष्ट नहीं होती है।

भावार्थ :- जिस प्रकार रोग और औषधि के जानने मात्र से व्याधि दूर नहीं होती है उस रोग और औषधि को जानकर समय पर प्रमाण मात्र से औषधि को पथ्य के साथ ग्रहण करने से व्याधि नष्ट होती है। वैसे ज्ञान होने पर भी जब तक चारित्र को यथायोग्य पालन नहीं करता तब तक कर्म नष्ट नहीं होता है।

मोक्षपथ का पथ्य

पुव्वं सेवइ मिच्छामल सोहणहेउ सम्मभेसजं।
पच्छा सेवइ कम्मामय णासण चरिय सम्म भेसज्जं।। 73।।

अर्थ :- प्रथम मिथ्यात्व महा भयंकर रोग है। भव्य जीवों को सबसे प्रथम मिथ्यात्वरूपी मल का शोधन सम्यकत्व रूपी रसायन से करना चाहिए। पश्चात् चारित्र रूपी औषध का सेवन करना चाहिए। इस प्रकार आचरण करने से चारित्र मोहनीय कर्मरूपी रोग का तत्काल ही नियम पूर्वक नाश होता है। तीर्थंकर के सम्यग्दर्शन, सम्यज्ञान होते हुए भी चारित्र को अपनाना ही पड़ा।

भावार्थ :- सम्यग्दर्शन बिना ज्ञान और चारित्र निष्फल है, कर्मों का नाश सम्यक्चारित्र से ही होता है? यदि सम्यग्दर्शन पूर्वक चारित्र है तो कर्मों के नाश होने में कुछ भी विलंब देरी नहीं है। सम्यग्दर्शन होने पर भी जब तक सम्यक्चारित्र पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं होता है तब तक कर्मों का नाश कदापि नहीं होता है। मिथ्यात्व के साथ चारित्र धारण किया जाय तो वह केवल संसार का ही वर्धक है कर्मों का नाश करने वाला नहीं है।

ज्ञानी और अज्ञानी

अण्णाणी विसय विरत्तादो होइ सयसहस्सगुणो।
णाणी कसायविरदो विसयासत्तो जिणुद्दिट्ठं ।।74।।

अर्थ :- मिथ्यादृष्टि (अज्ञानी) जीव पंचेन्द्रियों के विषय भोगों से विरक्त है और सम्यग्दृष्टि (ज्ञानी) पुरुष कषायों से विरक्त है, इनमें मिथ्यादृष्टि अज्ञानी की अपेक्षा सम्यग्दृष्टि ज्ञानी हजारों गुणा सुफल को प्राप्त करता है। ऐसा श्री जिनेन्द्र देव ने कहा है।

भावार्थ :- सम्यग्दृष्टि पुरुष की विषय भोगों को सेवन करते हुए भी,

मिथ्यादृष्टि जिनलिंग धारी की अपेक्षा से असंख्य गुणा कर्मों की निर्जरा होती है। प्रथम तो मिथ्यादृष्टि के कर्मों की निर्जरा होती ही नहीं है। कदाचित् वह मिथ्यादृष्टि मनुष्य मोहनीय कर्म के मंदोदय से श्री जिनेन्द्र भगवान् के कथन के अनुसार चारित्र को धारण भी करता है और समस्त प्रकार के विषय भोगों का त्याग भी करता है तो भी मिथ्यादृष्टि की कर्मों की निर्जरा नहीं होती है। हाँ संसार भ्रमण के पुण्य की प्राप्ति अवश्य होती है। तात्पर्य यह है कि मिथ्यादृष्टि की कर्मों की निर्जरा नहीं होती है और सम्यग्दृष्टि पुरुष के विषय भोगों का सेवन दीर्घ संसार का कारण नहीं है। (जैसे भरत चक्रवर्ती संसार भोगों में होते हुए भी दीर्घ संसार का कारण नहीं था।

वैराग्य के बिना भाव

विणओ भत्तिविहीणो महिलाणं रोयणं विणा णेहं।
चागो वेरग्ग विणा एदेदो वारिया भणिया ।। 75।।

अर्थ :- भक्ति के बिना विनय करना या दिखाना, स्नेह के बिना स्त्रियों का रोदन करना, वैराग्य भाव के बिना त्याग करना यह सब दिखावटी है, विडंबना है। भक्ति प्रेम रूदन आदि छल कपट से किया जाता है वह विडंबना है। उसी प्रकार बिना वैराग्य, अंतरंग भाव रहित घर परिवार का त्याग कर देना यह अपनी आत्मा की, जिनेन्द्र भगवान् ने कहे हुए मार्ग धर्म की विडंबना ही है।

भाव शून्य क्रिया से अलाभ

सुहडो सूरत्त विणा महिला सोहग्गरहिय परिसोहा।
वेरग्ग णाण संजमहीणा खवणा ण किं वि लब्भंते ।।76।।

अर्थ :- शूरत्व शक्ति के बिना शूरवीर-सुभट कहना, स्त्री की सौभाग्यत्व के बिना शोभायमान प्रसन्न मुख नहीं दिखाई देती है। उसी प्रकार संयम ज्ञान और वैराग्य के बिना मुनीश्वर की भी यथेष्ट सिद्धि नहीं होती है।

संयम ज्ञान वैराग्य भावना से ही मुनीश्वर को मोक्ष की सिद्धि होती है।

अज्ञानी और विषयासक्त जीवों की दशा

वत्थुसमग्गो मूढो लोहिय लब्भइ फलं जहा पच्छा।
अण्णाणी जो विसयासत्तो लहइ तहा चेव।।77।।

अर्थ :- अज्ञानी मूर्ख लोभी पुरुष आरंभ लोभ कषाय आदि क्रिया परिणामों से बहुत सा धन एकत्र करता है। वस्तु की परिपूर्णता होने पर भी आगे और भी लालसा रखते हुए कमाई में लगा रहता है। कमाया हुआ धन उसका फल भी भोग नहीं सकता। उसी प्रकार अज्ञानी मनुष्य विषयों में आसक्त होने पर भी उसका फल प्राप्त कर नहीं सकता केवल अभिलाषा ही करता है।

फल को कौन प्राप्त करता है ?

वत्थुसमग्गो णाणी सुपत्तदाणी फलं जहा लहइ।
णाणसमग्गो विसयपरिचत्तो लहइ तहा चेव ।। 78।।

अर्थ :- सम्यग्दृष्टि ज्ञानी पुरुष धन संपत्ति और वैभव को सुपात्र में दान देकर चक्रवर्ती तीर्थंकर इंद्र नागेन्द्रादि पद को प्राप्त कर, समस्त भोगोपभोगों की सामग्री सुख से भोग कर उस संपत्ति ऐश्वर्य आदि समस्त वस्तुओं का (परिग्रह का) समझ कर त्याग करते हैं। दिगम्बरत्व की दीक्षा धारण कर तपस्या के द्वारा मोक्ष को भी प्राप्त कर लेते हैं।

अर्थात् परिग्रहादि भोगों से विषय कषायों से विरक्त होकर चारित्र को पालन करते हैं और कर्मों का क्षय कर उसी भव में मोक्ष जाते हैं। बाह्य परिग्रहादि वैभव और अंतरंग कषायादि परिणाम इनको त्यागते हैं, वे ही सम्यग्ज्ञानी पुरुष चारित्र को धारण कर मोक्ष सुख को पाते हैं।

सम्यग्दृष्टि के सभी कार्य अलौकिक होते हैं।

समकित-ज्ञान वैराग्य औधधि

भू-महिला कणयाइ लोहि विसहरं कहं पि हवे।
सम्मत्तणाण वेरग्गोसहमंतेण जिणुद्दिट्ठं ।।79।।

अर्थ :- भूमि-राज्य, महल,महिला, स्वर्ण चांदी आदि विभूति के लोभ, क्रोध,मान, माया के कषाय रूप जहरी सर्प के विष का विनाश निवारण के लिए सम्यग्दर्शन युक्त ज्ञान चारित्र तथा वैराग्य भावरूपी अमोघ मंत्र से ही नष्ट हो सकता है। यही फलप्रद है ऐसा श्री जिनेन्द देव ने कहा है, उपदेश दिया है।

मुनि दीक्षा से पूर्व 10 का मुंडन आवश्यक

पुव्वं जो पंचिंदिय तणु मणु वचि हत्थपाय मुंडाउ।
पच्छा सिरमुंडाउ सिवगइ पहणायगो होइ ।। 80।।

अर्थ :- सबसे प्रथम अपनी पाँचों इन्द्रियों का निग्रह करना चाहिये। फिर क्रम से मन वचन काय और हाथ पैर इनको नियंत्रण में रखना चाहिए। फिर इनके बाद शिर का मुंडन करना चाहिए। इससे भव्य जीवों को मोक्षमार्ग की शीघ्र प्राप्ति होती है।

भावार्थ :- भव्य जीवों को दीक्षा से पूर्व ही सम्यग्दर्शन के भावों सहित दीक्षा धारण करने का प्रयास-प्रयत्न करना चाहिये। उसी के साथ साथ ही वैराग्य और ज्ञान भावना से पाँच इन्द्रिय और मन वचन काय तथा हाथ पैर इनको चारित्र पूर्वक वश में करना चाहिए। भाव चारित्र और द्रव्य चारित्र के द्वारा संवर भाव से कर्मों के आश्रव को रोकना चाहिए। (यदि भाव दीक्षा है तो द्रव्यदीक्षा उपयोगी सही है। केवल भाव दीक्षा को सही कहना अथवा केवल मात्र द्रव्य दीक्षा को सही कहना दोनों बात गलत है परन्तु द्रव्य दीक्षा से भाव दीक्षा प्रकट हो सकती है) परन्तु केवल मात्र भाव दीक्षा से ही मोक्ष प्राप्ति होती है, द्रव्यदीक्षा की आवश्यकता नहीं कहना और द्रव्यदीक्षा का निषेध करना यह कहने वाले के मिथ्याभाव है।

भक्ति बिना सब शून्य

पतिभत्ति विहीण सदी भिच्चो जिणसमयभत्ति हीण जई।
गुरुभत्तिविहीण सिस्सो दुग्गइ मग्गाणुलग्गणो णियमा ।। 81।।

अर्थ :- पति की भक्ति रहित स्त्री, स्वामी की भक्ति रहित नौकर, सेवक, जिन वचन-जिनागम शास्त्र की श्रद्धा भक्ति से रहित जैन श्रावक और यतिराज, तथा गुरु भक्ति रहित शिष्य ये सभी निंद्य व दुर्गति के पात्र है।

संकेत जो बताते हैं कि आप वर्तमान में नहीं जी रही

क्या आप वर्तमान में जीने की जरूरत के बारे में जानती हैं ? जवाब शायद हाँ ही होगा क्योंकि अब जीवन को लेकर समझदारी रखना महत्वपूर्ण

हो गई है और लोगों को इसकी जरूरत भी है।

वर्तमान में जीना संतुष्टि और संपूर्णता का अहसास करवाता है लेकिन क्या यह जानने के बाद भी आप वर्तमान में जीती हैं? या आप बिना सोचे-विचारे अपना जीवन व्यतीत कर रही हैं? अगर आप जानना चाहती हैं कि आप जो कर रही हैं, वह सही है या नहीं तो कुछ ऐसे संकेत हैं, जो आपको बताएंगे कि आप वर्तमान से दूर हैं।

आपका अहम आप पर हावी है

आपको हर वक्त सही होने, प्रथम आने या अपनी इच्छा का ही हासिल करने की जरूरत नहीं है। जब आप पर मैं हावी हो जाता है तो वह आपको वर्तमान के साथ-साथ अपने आस-पास के लोगों के साथ कनेक्ट करने से भी रोकता है। ध्यान रखें कि अहम एक दिमागी प्रोसेस है, आपका व्यक्तित्व नहीं। जब आप यह समझ जाएंगी कि जो आवाज आपको यह बताती है कि आपको क्या चाहिए या क्या करना है, वह सिर्फ आपके दिमाग का एक हिस्सा है तो समझ लीजिए, आप सचेत हो चुकी हैं।

आपके विचार निरंतर चलते रहते हैं

दिमाग के सोचने पर ही विचार पैदा होते हैं। रात में सोने की बजाय छत की ओर देखने वाला इस बात को अच्छी तरह समझ सकता है कि सोचना आपको किस तरह वर्तमान से दूर ले जाता है खासतौर से जब आपको यह अहसास होता है? कुछ ही देर में सुबह होने वाली है। सोचने, चिंता करने और पछताने से अच्छा होगा कि आप अपनी सांस पर ध्यान केंद्रित करें, परछाई की गहराई को देखें या अपनी चादर को फील करें। खुद को विचारों के साथ भविष्य की ओर बहने से रोकेंगी तो जल्दी सो पाएंगी।

सब कुछ बोरिंग है

यह एक तरह का विरोधाभास है। कुछ का सोचना है कि बोरियत को दूर करने का सबसे अच्छा तरीका है कुछ करना लेकिन यह केवल एक विचार मात्र है। अगर आप कपड़ों की तह करने जैसे साधारण से काम में मजा लेना चाहती है तो आपको उस पल में मौजूद होना होगा। आपको आवाजों, खुशबू और कपड़ों के टेक्सचर को महसूस करना होगा। ऐसा करके आप बोरियत को वाकई दूर कर पाएंगी।

झगडे की स्थिति को टालती है

अपने कम्फर्ट जोन में रहने के लिए आप मतभेद की स्थिति से बचती हैं। ऐसा करके आप सुरक्षित रहने का सोचती हैं और अपने विचारों की परिधि से बाहर नहीं निकलना चाहतीं। आप नए और असहज अनुभवों से बचना चाहती हैं। जबकि वर्तमान का अनुभव करने के लिए आपको कभी-कभार असहज भी महसूस करना होता है। सोशल होने के मौकों को नजरअंदाज करने की बजाय इनमें शामिल हों, रिस्क लें। दीवार गिराकर आप जिंदा और जागरूक महसूस कर सकेंगी।

क्या किया, याद नहीं रहता

अपनी इन्द्रियों को खोलना और वर्तमान समय का आनंद उठाना ही सचेत होना है। आपने दोपहर या कुछ दिन पहले क्या खाया, इसे याद रखकर ऐसा करना आसान हो सकता है। क्या आपको उस पल का स्वाद सुगंध, दृश्य और आवाजें याद हैं ? अगर याद नहीं आ रहा तो समझ लीजिए कि उस वक्त आप अपने विचारों में खोई हुई थी।

(साभार-परिवार परिशिष्ट)

खुद से यह सवाल कर, जानें अपना पैशन

वैसे तो किसी से जलन रखना सही नहीं होता लेकिन कुछ ऐसे तरीके हैं जो आपकी जलन को सही दिशा में ले जाते हैं। आपकी जलन यह बताती है कि आप कैसी बनना चाहती हैं या आप क्या चाहती हैं ? जब आप किसी से जलन रखती है तो यह जानने की कोशिश करिए कि उस शख्स की वह कौनसी चीज है जिससे आप जलती हैं। उसका पता लगने के बाद आपको पता चल सकेगा कि आप अपने लिए क्या चाहती हैं। यह आपको आपका वास्तविक पैशन ढूंढने में मदद कर सकती हैं। आइए जानते हैं कुछ ऐसे सवालों के बारे में जिनके जरिए आप अपने पैशन के बारे में जान सकती हैं -

आपके टॉप तीन रोल मॉडल्स कौन हैं ?

खुद से पूछिए कि वह तीन लोग कौन हैं जो आपको वाकई प्रेरणा देते हैं। उसके बाद यह जानने की कोशिश करिए कि उनकी कौनसी बात आपको प्रेरित करती है। इससे आपको खुद को समझने में मदद मिलेगी।

अपने किस पैशन को अपने मिड-20 में छोड़ दिया था ?

कई लोगों को उम्र के मिड-20 में कुछ मजबूरियों की वजह से अपना पैशन छोड़ना पड़ता है। खुद से पूछिए कि क्या आपने भी अपना कोई पैशन छोड़ा था ? आप उस पैशन को फिर से शुरू कर सकती है, भले ही कॅरियर के तौर पर या हॉबी के तौर पर।

अपना खाली समय कैसे बिताती हैं ?

यह सवाल आपको अपना पैशन जानने में काफी मदद करेगा। जब आप खुद से पूछेंगी कि आपको खाली समय में क्या करना पसंद है या आप खाली समय कैसे बिताती है, तब आपको खुद के बारे में काफी बातें पता चलेंगी। आप जान पाएंगी कि आपको वाकई क्या करना पसंद है। आप अपने खाली समय की ऐक्टिविटी से अपना पैशन जान सकती हैं।

तीन करीबी दोस्तों से पूछें, आपको क्या खास बनाता है ?

जब आप खुद अपनी तारीफ करने में हिचकती है, तब आपके दोस्त इसमें आपकी मदद कर सकते हैं। आप अपने करीबी दोस्तों से पूछें कि आपमें ऐसा क्या है, जो आपको उनके लिए खास बनाता है। इससे आपको पैशन के बारे में जानने में मदद मिलेगी।

आपकी जिंदगी के आम दिनों में से बेस्ट कौनसा था ?

अपनी जिंदगी के आम दिनों को याद करिए और खुद से पूछिए कि वह कौनसा आम दिन था, जो आपकी जिंदगी में बेस्ट रहा। उस दिन के बारे में विस्तार से लिखिए, करीब 10 मिनट तक। यकीन मानिए कि आपको खुद के भीतर झांकने का मौका मिलेगा और आप जान पाएंगी कि वह आम दिन आपके लिए क्यों इतना खास रहा।

खर्च के लिए लाखो रुपए दिए जाएं, आप उन्हें कैसे खर्च करेंगी ?

खुद से पूछें कि अगर आपको खर्च करने के लिए लाखों रुपए दिए जाएं तो

आप उन्हें किस तरह से और किस चीज पर खर्च करेंगी। इससे आपको खुद के बारे में जानने को मिलेगा। साथ ही आप बेहतर तरह से जान सकेंगी कि आपको जिदंगी में क्या करना है।

आत्मविकास हेतु मेरी प्रतिबद्धता

(आत्म विश्वास से आत्म विकास करूँ, अन्य को विवश न करूँ व अन्य की विवशता से अप्रभावी रहूँ!

- आचार्य कनकनदी

(चालः- 1. मन रे! तू काहे न धीर धरे ... 2. सायोनारा)

जिया रे ! तू स्वयं का विकास करो ऽऽऽ
अनादिकाल से चौरासी लक्ष योनि में ...न कर पाया स्व-विकास ऽऽऽ
जिया रे !...(स्थायी)...

चतुर्गति में बना मनुष्य से देव तक... एकेन्द्रिय से पञ्चेन्द्रिय तक ऽऽऽ
शरीर इन्द्रिय व भोगोपभोग हेतु...किया अनन्तानन्त कुपुरुषार्थ ऽऽऽ
न कर पाया एक बार आत्म विकासऽऽऽ जिया (1)

जितना किया कुपुरुषार्थ पूर्व में ...उसका अनन्तवाँ भाग सुपुरुषार्थ से ऽऽऽ
अभी तक तेरा हो जाता (आत्म) विकास ...बन जाता शुद्ध बुद्ध आनन्दऽऽऽ
सच्चिदानन्दमय परमात्म रूप ऽऽऽ जिया (2)

इसे प्राप्त करने हेतु चक्री तक भी...त्यागते हैं षटखण्ड वैभव ऽऽऽ
निस्पृह निराडम्बर व एकान्त मौन में ...करते स्व को पावन श्रेष्ठ-ज्येष्ठ ऽऽऽ
करते राग द्वेष मोह को विनष्ट ऽऽऽ जिया (3)

ऐसा ही तू करो स्वयं को पावन ...जिससे बनोगे श्रेष्ठ ज्येष्ठ ऽऽऽ
अन्य सभी बाह्य प्रपञ्च द्वन्द्व त्यागो...सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि-वर्चस्वऽऽऽ
पर प्रतिस्पर्द्धा व परावलम्बन ऽऽऽ /(अन्य हेतु न करो आत्म मलिन ऽऽऽ)
जिया (4)...

'टार्च' के समान न बनो (तू) ज्ञानी ...'गधे' के सम न ढो पर सामान ऽऽऽ

'धोबी' के सम न करो पर मल साफ...'तोता' के सम न बनो उपदेशी ऽऽऽ
मील के पत्थर सम न बनो मार्गदर्शी ऽऽऽ
/(ये सब क्रीतदास सम काम ऽऽऽ) जिया ...(5)...
स्वयं को तू मानो...स्वयं को मनाओ...स्वयं को करो आदर्श-समर्थ ऽऽऽ
पर अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा त्यागकर...स्व का स्व द्वारा करो उद्धार ऽऽऽ
अन्य के (संकल्प) विकल्प-संक्लेश से दूर ऽऽऽ
/(अन्य हेतु न करो राग द्वेष मोह ईर्ष्या ऽऽऽ) जिया ...(6)

विश्व मंगल की भावना (तू) सदाकर ...किन्तु न बनो कर्त्ता-धर्ता-विधाता ऽऽऽ
हर जीव (प्रायः) स्वयं को ही सही माने...अन्य को माने दोषी व पामर ऽऽऽ
न मानते अन्य के हित उपदेश ऽऽऽ
/('कनक') तू स्व-पर प्रकाशी बनो ऽऽऽ) जिया ... (7)...

माने तो स्वागत न माने तो आशीष ... सभी करे आध्यात्मिक विकास ऽऽऽ
न मानने वालों से न करो आग्रह ...आग्रह से होता राग-द्वेष गर्व ऽऽऽ
इससे होता आध्यात्मिक विनाश ऽऽऽ
/(निर्बाधकर 'कनक' आत्मविकास ऽऽऽ) जिया ... (8)...
ओबरी, दि. 27.1.2018, रात्रि 8.08 /

लोग क्या सोचेंगे, इस बात की चिंता करने की बजाय क्यों ना कुछ ऐसा करने में समय लगाएं जिसे प्राप्त करने पर लोग आपकी प्रशंसा करें।
- डेल कार्नेगी

सन्दर्भ :-

''इत्याद्यनेक, धर्मत्वं, बन्धमौक्षौ तयोः फलम्।
आत्मा स्वीकुरूते तत्तकारणेःस्वयमेव तु '' ।। 9।।

कर्मबन्ध भवभ्रमण मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम से आस्रव बन्ध तत्त्व के रूप में होता है और सम्यक्त्व, ज्ञान चारित्र, द्वारा संवर निर्जरा की प्रक्रिया से मोक्ष होता है। आत्मा स्वयं विभिन्न कारणों से बन्ध या मोक्ष की प्रक्रिया किया करता है। तथा चोक्तम् -

स्वयं कर्म करोत्यात्मा, स्वयं तत्फलमश्नुते।
स्वयं भ्रमति संसारे, स्वयं तस्माद्विमुच्यते।।

यह आत्मा स्वयं अपने रागद्वेष मोह आदि भावों के द्वारा ज्ञानावरण, दर्शनावरण,वेदनीय,मोहनीय आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय कर्मों का बन्ध किया करता है और जब कर्म का उदय होता है तो आत्मा स्वयं करके अच्छे या बुरे फल को भोगा करता है, चारों गतियों में जन्म मरण भी यह आत्मा अपने कर्मों के अनुसार किया करता है। तथा निर्बन्ध-गुरु द्वारा जिनवाणी सुनकर जब यह शरीर आत्मा के भेदभाव समझकर आत्म का श्रद्धालु बनता है, संसार शरीर और विषय-भोगों से विरक्त होता है- यह सम्यग्दृष्टि बनकर स्वयं कर्मों से मुक्त होने के मार्ग पर चल पड़ता है। अपनी आत्मचर्या सम्यक्चारित्र को उन्नत करता हुआ संवर निर्जरा की पद्धति से शुक्लध्यान द्वारा समस्त कर्मों से छूटकर, जन्म मरण का सदा के लिये विनाश करके मुक्त भी अपने आप होता है। यानी यह आत्मा स्वयंकर्त्ता, भोक्ता, भ्रमणकर्त्ता और मुक्त होता है।

कर्त्ता यः कर्मणा भोक्ता, तत्फलानां स एव तु।
बहिरन्तरूपायाभ्यां, तेषां मुक्तत्वमेव हि।। 20।।

जीव को संसार में घुमाने वाला, उसको सुख दुख देने वाला तथा संसार और कर्मों से जीव को मुक्त करने वाला कोई व्यक्ति नहीं है, यह समस्त कार्य आत्मा स्वयं करता है। यह आत्मा स्वयं अपने मिथ्यात्व, रागद्वेष, मोह, ममतादि भावों से शरीर, परिवार, धन मकान आदि को अपना करके कर्मबन्ध किया करता है तथा कर्मों के उदय आने पर उन कर्मों का फल आत्मा को स्वयं भोगना पड़ता है। आत्मा तथा कर्म, नोकर्म (शरीर) का भेद-विज्ञान हो जाने पर सम्यक्त्व, सत्-ज्ञान स्वयं होता है तथा अन्तरंग बहिरंग तपश्चर्या द्वारा कर्मों से मुक्त भी आत्मा स्वयं होता है। प्रायः साक्षरी व्यक्ति स्वावलम्बी के परिवर्तन में परावलम्बी, परोपकारी के बदले परोपजीवी/परशोषक, सदाचारी के बदले में भ्रष्टाचारी/पापाचारी, सरल सहज सादा जीवन उच्च विचार के बदले में धूर्त, चालाक, फैशनी-व्यसनी आदि बनता है, उससे अच्छा निरक्षरी होकर स्वावलम्बी, परोपकारी, सदाचारी, सरल सहज उच्च विचारवान् बनना है। क्या मूल्य से प्राप्त शराब, विष, नशीली वस्तुओं से सहज प्राप्त शुद्ध पानी,

सूर्य-रश्मि, प्राणवायु गुणकारी नहीं है ? क्या बिना धन, जन साधन हानि से प्राप्त सुख शान्ति उस युद्ध, कलह आतंकवाद, आदि से श्रेष्ठ नहीं है ? जिसमें धन जनादि की हानि होती है।

मैने जो बाल्यकाल में विद्यार्थी से लेकर आचार्य जीवन तक देश विदेश के विभिन्न विधाओं के साहित्यों के विश्लेषणात्मक अध्ययन, विभिन्न देश विदेश के विभिन्न जाति, धर्म, कार्यक्षेत्र के लाखों व्यक्तियों का शोध-बोध अनुभव किया है उसके आधार पर यह सब लिखा है। निष्कर्ष रूप से मेरा अनुभव है कि केवल साक्षरता (लौकिक या धार्मिक) से कोई संस्कारवान्/सामर्थवान्/सक्षम नहीं बन जाता है। कुछ साक्षरी अच्छे होते है तो कुछ बुरे उसी प्रकार कुछ निरक्षरी अच्छे होते हैं तो कुछ बुरे। कुछ निरक्षरी अपनी सरलता सहजता के कारण अपनी महत्ता/गुणवत्ता का ज्ञान-भान, मूल्यांकन स्वयं नहीं कर पाते हैं, इसका बखान नहीं कर पाते हैं। जिससे कुछ साक्षरी/राक्षस उनका दुरुपयोग करते हैं और स्वयं की कमियों को, त्रुटियों को अपनी गुणवत्ता/महानता मानकर अहंकारी, उश्रृंखल, आलसी, शोषणकारी भ्रष्टाचारी बन जाते हैं। अतएव केवल साक्षरता को ही महत्व देकर निरक्षरता को पाप मानना अयथार्थ है, अयोग्य है। कहा भी है।

''पोथी पढ - पढ जग मुआ पण्डित भया न कोय।
ढाइ आखर प्रेम (आत्मा/सत्य) का पढे सो पण्डित होय'' ।।
पंडिय पंडिय पंडिय कण छोडिय तुसहु खंडिय।
सद्दो अत्थोसि मुढसि परमत्थु ण जाणइ मुढसी।। 1
जे यावि होइ निविग्गो भद्धे अणिग्गहे।
अभिक्खणं उल्लवइ अविणीए अबहुस्सुए।। 2।।

जो विद्या रहित है, विद्यावान् होते हुए भी अहंकारी है, जो (धन, नाम, रसादि में) लुब्ध (गृद्ध) है, जो अजितेन्द्रिय है, बार-बार असम्बद्ध बोलता (बकता) है तथा जो अविनीत है, वह अबहुश्रुत है, साक्षर मूर्ख है।

अह पंचहि ठाणेहिं जेहिं सिक्खा न लब्भई।
थम्मा कोहा पमाएणं रोगोणाऽऽलस्सएण य ।। 3

1. अभिमान 2. क्रोध 3. प्रमाद 4. रोग और 5. आलस्य (इन्हीं पाँच कारणों

से बहुश्रुतता नहीं होती है)

यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा शास्त्र तस्य करोति किम्।
लोचनानां विहीनस्य दर्पणं किं करिष्यति ।। (चाणक्य)

अर्थात् जिस की स्वयं की प्रज्ञा/अनुभूति/योग्यता नहीं है उसके लिए शास्त्र क्या कर सकता है ? जैसा कि दर्पण के द्वारा भी अन्धा स्वयं को नहीं देख सकता है।

कबीर ने यथार्थ से अनुभव से कहा है -

तुमने कहा कागद लिखी मैंने कहा आँखन देखी।

परीक्षण - निरीक्षण, अध्ययन, शोध-बोध, अनुभव से जैसे ज्ञात होता है और प्रायोगिक रूप से जो उपर्युक्त सुगुण-दुर्गुण उपलब्ध होते हैं उसके लिए निम्नोक्त कारण यथायोग्य संभव है -

(1) जो केवल साक्षात्कार/पुस्तकें रटन्त (लौकिक या धार्मिक) को भी ज्ञान मान लेते हैं वे यथार्थ ज्ञान से अपरिचित रह जाते हैं, जिससे वे ज्ञान का जो फल सदाचारादि है, उसको प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

(2) जो समय, शक्ति, बुद्धि,धनादि का खर्च साक्षरता में करने के कारण वे अन्य सद्गुणादि की उपलब्धि से वंचित रह जाते हैं। वे कागजी नक्शे को छोड़कर वास्तविक धरातल पर नहीं उतरते हैं जिससे प्रायोगिक जीवन में वे अयोग्य सिद्ध होते हैं।

(3) साक्षरता के अहंभाव से पूर्ण व्यक्ति में अच्छे गुण प्रवेश नहीं कर पाते हैं और योग्यता के अभाव से हीन-ग्रंथि से युक्त हो जाता है जिससे वह अक्षम हो जाता है किंतु उपर्युक्त दुर्गुणों से रहित व्यक्ति संस्कारवान् सक्षम होता है।

जस्स गुरुमि न भत्तो, न य बहुमाणो न गाउरवं न भयम्।
न वि लज्जा नहि नेहो गुरुकुलवासेन किं तस्स ।। (75)

जिस शिष्य में गुरु महाराज के प्रति न तो विनय-भक्ति हो, न बहुमान हो यानि हृदय में प्रेम न हो, न गुरु के प्रति गुरुबुद्धि हो, और न ही भय, लज्जा या किसी प्रकार का स्नेह, ऐसे शिष्य के गुरुकुलवास में रहने या रखने से क्या लाभ है ?अर्थात ऐसे शिष्य का गुरु के पास रहना या रखना व्यर्थ है।

रूसइ चोइज्जति, वहइ हियएण अणुसयं भणिओ।

न य कसिं करणिजे गुरुस्स आलो न सो सीसो ।।(76)

'जो शिष्य गुरु के द्वारा प्रेरणा करने पर रोष करता है, सामान्य हित की शिक्षा देने पर भी गुरु के सामने बोलकर उन्हे डांटने लगता है, तथा जो गुरु के किसी काम नहीं आता, वह शिष्य नहीं है। वह तो केवल कलंकरूप है। जो सत् शिक्षा ग्रहण करे वही शिष्य कहलाता है।

उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये।

पयः पानाहिं भुजंगानां केवलं विषवर्धनम्।।

मूर्खों को दिया गया उपदेश उनके क्रोध को बढ़ाने के लिए ही होता है, न कि शांति के लिए। जिस प्रकार सर्पो को दूध पिलाने से उनके विष का ही वर्धन होता है।

उपदेशो न दातव्यो यादृशे तादृशे जने।

पश्य वानरमूर्खेण सुगृही निगृही कृतः।। (421)

जैसे-तैसे व्यक्ति को उपदेश न देना चाहिए। देखों, मूर्ख बन्दर ने एक उत्तम गृहस्थ को घर से शून्य बना दिया।

अपि शास्त्रेषु कुशला लोकाचार विवर्जिताः।

सर्वे ते हास्यतां यान्ति, यथा ते मूर्ख पण्डिताः।। (38)

शास्त्रों में कुशल रहने पर भी लोकव्यवहार से अनभिज्ञ व्यक्ति उसी प्रकार उपहास के पात्र होते हैं जैसे लोकव्यवहार से हीन पण्डित मूर्ख बने थे।

यस्य नास्ति विवेकस्तु केवलं यो बहुश्रुतः।

न स जानाति शास्त्रार्थान् दर्वी पाक रसानिव।।

जो हिताहित विवेक से रहित होकर बहुश्रुतज्ञ है वह शास्त्रों के रहस्य को नहीं जान सकता है। जैसे चम्मच विभिन्न रसयुक्त व्यंजनों से लिप्त होने पर भी रस को जान नहीं सकती।

किसका गला दबाया

जीवन प्रबंधन क्षेत्र की एक लोकप्रिय वेबसाइट अपने हर लेख के साथ यह भी बताती है कि यदि आप उसके सूत्रों को अपनाएंगे, तो साल में कितना समय बचा

लेंगे। ऐसा वह भावनाओं के प्रबंधन से जुड़े लेखों में भी करती है। यानी, अगर आप गुस्से या ईर्ष्या अथवा आलोचना से निबटने के तरीके सीख लेते हैं, तो साल में आपके कितने घंटे या कितने दिन बच जाएंगे। गौर करने वाली बात है कि यह गणना केवल कोरे समय की नहीं है। इस वक्त में आपकी खुशियां भी समाहित है। कहा जता है कि गुस्से में बिताया गया एक मिनट आपको 60 सेकंड की खुशियों से वंचित कर देता है। अब इसे उल्टे तरीके से देखें। गुस्से (या किसी भी नकारात्मक भावना) को त्यागकर बिताया गया एक मिनट आपके 60 सेकंडों को आनंद से भर देता है। यदि आनंद न दे, तो भी यह आपके समय को सहजता और शांति से तो भर ही देता है। और ये कोई कम आनंददायक स्थिति नहीं होती।

आम-खास के बीच अंतर...

एक छोटी-सी बात पर विचार कीजिए। दुनिया में जिस एक व्यक्ति को आपकी बात माननी ही चाहिए, वह व्यक्ति आप स्वयं है। आप सबसे पहले और सबसे सरलता में स्वयं को समझा सकते हैं। लेकिन अधिकांश समय यही सबसे कठिन होता है। आप बाकी दुनिया को समझाने पर भिड़े रहते हैं, परंतु खुद को समझा लेने के बारे में ख़्याल ही नहीं आता। खुद की भावनाओं को समझने और अपने मन को समझाने की योग्यता कहलाती है, इक्यू। **आईक्यु,** यानि दिमागी योग्यता पुरानी अवधारणा है, 21वीं सदी **इक्यू** यानी भावनात्मक योग्यता की है। सबसे पहले यह अपनी ही भावनाओं का प्रबंधन है। यह सफलता से आगे की चीज़ है। अपने-अपने क्षेत्र में सफल तो बहुत से लोग होते हैं, लेकिन आप जिन सफल लोगों का सम्मान करते हैं, जिनके जैसा बना चाहते हैं, वे ईक्यू से संपन्न होते हैं। वे बेहद तनावजन्य परिस्थितियों के बीच काम करते हैं। उनके कंधों पर बहुत बड़ा दारोमदार होता है। बहुत सारे मौकों पर उनका पूरा कॅरिअर और प्रतिष्ठा भी दांव पर लगी होती है। इसके बावजूद वे आमतौर पर शांत और सहज दिखते हैं। आप टीवी पर मैचे देखते हैं, पर आपकी हालत यह होती है कि अगर मैदान में पहुंच जाएं, तो शायद दुश्मन देश के खिलाड़ी का गला ही दबा दें। लेकिन क्या सचिन तेंदुलकर ने कभी ऐसा किया ? आप किसी खास राजनीतिक विचारधारा को पसंद करते हैं। उसके विरोधी आपको फूटी आंख भी नहीं सुहाते। लगता है कि वे सामने आ जाएं, तो आप उनका मुंह नोंच ले।

लेकिन क्या परिपक्व राजनेता ऐसा करते है ? कुछ अपवाद के अवसरों पर खिलाड़ी, नेता या नामचीन लोग भी अपना आपा खो देते हैं, लेकिन वे आमतौर पर शिखर पर बैठे लोग नहीं होते।

फट पड़ने में क्या फ़ायदा

दूसरी तरफ, आप क्या करते हैं ? कभी बस या ऑटो में जाना हो और एक अनजान-सा ड्राइवर/कंडक्टर या सह यात्री जरा-सी असभ्यता से बात क्या कर लेता है, उसी के बारे में सोच-समझकर और अपने दिमाग के भीतर जवाब देते-देते सारा दिन खराब कर लेते हैं। विचारों की शृंखला चलती रहती है। उस कंडक्टर को तरह-तरह से अपमानित करने, उसकी 'औकात' बताने की कल्पनाएं करते हैं। इससे भी आगे बढ़कर, सारी कंडक्टर जमात को कोसने में जुट जाते हैं। और ठीक इसी समय वह कंडक्टर या सहयात्री क्या कर रहा होता है ? वह आपके मन में अपने अपमान और बर्बादी से बेख़बर, अपना काम कर रहा होता है। हम पटाखों की लड़ी की तरह व्यवहार करते हैं। हमें बस माचिस दिखाए जाने का इतंजार होता है। कभी पति/पत्नी की कोई बात माचिस का काम करती है, कभी बच्चे की कोई हरक़त और कभी बॉस या सहकर्मी की कोई टिप्पणी। जब हम फूटते हैं, चाहे जोरदार आवाज़ करके या बेआवाज, तो दूसरे भी प्रभावित होते हैं, किंतु सबसे ज़्यादा असर हम पर ही पड़ता है। फूटने के उन तमाम क्षणों में हम पूर्णतः निरर्थक और व्यर्थ होते हैं। इस फूटने-फटने में हमारी ही खुशियाँ, उत्पादकता,शांति और समय स्वाहा होते हैं।

बहरहाल, कई बार तो माचिस दिखाए जाने की जरुरत भी नहीं होती। ईर्ष्या, द्वेष और प्रतिस्पर्धा की भावनाएं किसी की कामयाबी, खुशी, उपलब्धि या बेहतरी देखकर ही सुलग उठती हैं और हम मन ही मन उसे अपने से कमतर साबित करने या उसकी उपलब्धि को निरर्थक बताने में जुट जाते हैं।

खुश और मस्तमौला क्या करते हैं...

आपने ग़ौर किया होगा, सबसे ख़ुश और मस्तमौला नजर आने वाले लोग वही होते हैं, जिन्हें 'कोई फर्क नहीं पड़ता ' ये लोग अपनी भावनाओं के खिलाड़ी होते हैं। किसी अप्रिय बात पर तत्काल प्रतिक्रिया देने से बचते हैं। उसकी तह में जाते हैं, उसे

सामने वाले के नजरिए से भी समझने का प्रयास करते हैं। उस शख्स को मन ही मन बार-बार पटखनी देते रहने के बजाय आगे बढ़ जाते हैं।...तो आनंद का सबसे बड़ा सूत्र है, अपनी भावनाओं पर नियंत्रण। यह सुख-शांति पर लिखी गई लाखों किताबों और मानवीय इतिहास के हज़ारों बरसों के ज्ञान का निचोड़ है। इसके लिए किसी बहुत बड़ी योग्यता या विशेषज्ञता की दरकार नहीं है। जब कभी आपने मन में नकारात्मक भावनाएं घर कर रही हों, छोटी-सी बात से शुरु हुआ आपका गुस्सा बढ़ता जा रहा हो, सामने वाले से सारा संग्राम आपके मन में ही चल रहा हो, आप किसी को मन ही मन अपमानित किए जा रहे हों, किसी की खुशी या उपलब्धि आपको बेचैन कर रही हो, किसी की कोई बात आपको बहुत खल रही हो, तो अपने विचारों पर लगाम लगाएं। एक लंबी सांस लें और गौर करे कि आप ही उफन और उबल रहे हैं। यह गर्मी आपको ही जला रही है।

सब भूल जाएं, केवल यह याद रखें :

मन आपका है, आप ही उसे समझेंगे, आप ही उसे समझाएंगे। आपके मन में नकारात्मकता की लहर उठी (जो कि स्वाभाविक है), और उस क्षण में सजग होकर आपने अपने मन को समझा लिया, तो फिर दुनिया की कोई ताकत आपके आनंद, सुख और शांति को चुरा नहीं सकती।

मैं सतत आत्मविश्वास-आत्मानुभव-आत्मप्रशंसा करूँ

(आत्म विकास हेतु मेरे लिए करणीय व त्यजनीय)

- आचार्य कनकनदी

(चालः- मन रे ! तू काहे... सायोनारा)

जिया रे! तू आत्मविश्वास कर ऽऽऽ
आत्मविश्वास युक्त आत्मानुभव कर ऽऽऽ आत्मप्रशंसा भी (तू) कर ऽऽऽ (ध्रुव)
तू तो सच्चिदानन्दमय अमूर्त आत्मा ऽऽऽ ऐसा तू विश्वास कर ऽऽऽ
इससे भिन्न (तू) न हो तन-मन-इन्द्रिय(अक्ष) ऽऽऽ राग-द्वेष-मोहादि न तेरा रूप ऽऽऽ
अनुभव भी ऐसा ही कर ऽऽऽ (जिया) (1)

इस हेतु ही कर ध्यान-अध्ययन ऽऽऽ तप-त्याग व चिन्तन ऽऽऽ

लेखन-प्रवचन-शंका-समाधान ऽऽऽ शोध-बोध व अध्यापन ऽऽऽ
अनुप्रेक्षा व आत्मविश्लेषण ऽऽऽ (जिया) (2)

आत्मा की चर्चा व आत्मप्रशंसा कर ऽऽऽ आत्मा के गुणगण कथन-कीर्तन ऽऽऽ
इस में ही रहो अस्त-व्यस्त-मस्त ऽऽऽ आनंद-उत्सव से आत्मरमण ऽऽऽ
इस हेतु ही तू बना श्रमण ऽऽऽ (जिया) (3)

इस हेतु त्यागो तू बाह्य प्रपंच...ख्याति-पूजा-लाभ व प्रसिद्धि ऽऽऽ
ढोंग-पाखण्ड व आडम्बर-दंभ...गाजा-बाजा व भीड प्रभृति ऽऽऽ
ये सब है अनात्म प्रवृत्ति ऽऽऽ (जिया) (4)

रागी-द्वेषी-मोही-स्वार्थी जन सम ...तू न करो भाव-व्यवहार ऽऽऽ
वे तो शरीर को 'स्व' /(मैं) रूप मानते ... इन्द्रिय(व) मन को मानते निज रूप ऽऽऽ
धन-मान-नाम में आसक्त ऽऽऽ (जिया) (5)

इस में होता उन्हें आत्मविश्वास ...जो कि इच्छा-तृष्णा-स्वार्थ युक्त ऽऽऽ
इस का ही वे करते आर्त्त-रौद्र ध्यान...प्रशंसा से चर्चा व आचरण ऽऽऽ
भोगोपभोग व फैशन-व्यसन ऽऽऽ (जिया) (6)

वे होते मोहान्ध व स्वार्थान्ध ऽऽऽ कामान्ध-मदान्ध जन ऽऽऽ
उन्हें चाहिए सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि ऽऽऽ भोगोपभोग मान-सम्मान ऽऽऽ
ये सभी तो अनात्म काम ऽऽऽ संसार वर्द्धक घोराति पापकर्म ऽऽऽ (जिया) (7)

वे न जानते व नहीं मानते ऽऽऽ आत्मविश्वास से आत्म प्रशंसा ऽऽऽ
इसे वे घमण्ड व बडबोला मानते ऽऽऽ सूर्य को यथा न जानते जन्मान्ध ऽऽऽ
अन्धेरा व ज्योति को न जानते भिन्न ऽऽऽ (जिया) (8)

इनका भी तू कल्याण ही चाहो ऽऽऽ किन्तु इनसे रहो तू अप्रभावी
भद्र होने पर उन्हें उपदेश दो ऽऽऽ नहीं तो रहो मौन-साम्यधारी ऽऽऽ
'कनक' तू आत्मस्वभाव स्वीकारो ऽऽऽ (जिया) (9)

ओबरी 20.01.2018 रात्रि 02:07

(जो लोग पढ़ाई, नौकरी, व्यापार शादी शरीर आदि की भी प्रशंसा करते हैं, घमण्ड करते हैं, अच्छा मानते हैं, वे भी आत्मविश्वास आध्यात्मिक गुणों की प्रशंसा व गौरव को घमण्ड मानते हैं, गलत मानते हैं, उनके कारण यह कविता बनी)

'अच्छी यादें करती हैं मूड फ्रेश

'साइकोलॉजी टुडे' में डिप्रेशन एंग्जायटी, एंगर और स्ट्रेस जैसी मानसिक समस्याओं से जूझ रहे लोगों को सलाह दी गई है कि हर रोज कम से कम 20 मिनट तक अपने जीवन के उन लम्हों को याद करें, जिन्हें आप खुशनुमा मानते हैं। लोयोला यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने पाया है कि ऐसा करने से इंसान का मूड फ्रेश रहता है और मानसिक शांति भी महसूस होती है। मनोविज्ञानी सोंजा ल्यूबेमिस्की ने कहा कि पॉजिटिव इवेंट्स में मेजिक पावर होता है।

टाइम मैनेजमेंट काम टालना भी है बिजी होना

'बिजी हूँ कहना भी देता है आत्मिक सुख और आजादी

'बिजी हूँ' कहना भी सम्मान हासिल करने का तरीका बनता जा रहा है। 'लोग इस सोच के जाल में फंसते चले जा रहे हैं कि बिजी रहना ही जीवन का मकसद है। जबकि शोध ये बताते हैं कि खुद के लिए समय निकालना भी बहुत जरूरी है। पूरे वक्त काम करते रहने से हम जल्दी खत्म होने लगते हैं। हाल ही में जो शोध के परिणाम सामने आए हैं, उनके अनुसार लगातार बिजी रहने से सेहत और दिमाग पर नकारात्मक असर होता है। काम की मांग है इसलिए लंबे समय तक काम करते हैं या ये आपका चुनाव है, ये जान लेना चाहिए। हालांकि शोध ये भी बताते है कि हफ्ते में 60 से 70 घंटे तक काम करके हम शॉर्ट-टर्म गोल तो हासिल कर लेते हैं। लेकिन ऐसा थोड़े समय के लिए ही संभव हो पाता है क्योंकि लागतार इस तरह काम करना व्यवहारिक नहीं है। न इस वर्क कल्चर को ज्यादा लंबा खींचा भी नहीं जा सकता है। बहुत से शोध ये भी बताते हैं कि हफ्ते में 40 घंटे से ज्यादा काम

करना हमारी उत्पादकता को काफी हद तक कम कर देता है। इसलिए अपने काम करने के तरीके पर गौर करना चाहिए। इसके लिए टाइम ऑडिट बनाया जा सकता है जिससे ये पता चले कि आपकी ऊर्जा असल में जा कहां रही है। अपने वीकली शेड्यूल में उस काम को तलाशने की कोशिश करें जिसे आप आसानी से हटा सकते हैं। ऐसी कौन सी मीटिंग हैं जिन्हें आप आगे खिसका सकते हैं, कितने ट्रेवल हैं जिन्हें कॉन्फ्रेंस कॉल में बदल सकते है। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में हुए शोध में ये खोजने की कोशिश की गई कि क्यों हमें 'बिजी हूँ' कहना अच्छा लगता है। दरअसल 'बिजी' कहना भी हमें वही सुख देता है जो खाना और पैसा देता है। आजादी देता है।

हर पल की तारीफ करने से जिंदगी बनेगी खूबसूरत

- अक्सर कहा जाता है कि जिंदगी को लंबा नहीं बड़ा बनाएं। कैसे ? इनमें से कुछ तरीके सीखने से आप जिंदगी को बड़ा और खूबसूरत बना सकते हैं।
- जिंदगी को जोश के साथ जीएं और हर पल की तारीफ करना सीखें।
- संभावनाओं (मौकों) को काम से हकीकत बनाएं। लक जैसा कुछ नहीं होता है।
- किसी से ईर्ष्या की भावना न रखें। नई चीजों और बातों से खुद को प्रभावित करें।
- बात करते वक्त दूसरे सदस्य को गंभीरता से सुनें। जैसे आप उसे कभी दोबारा बात करते हुए नहीं सुन पाएंगे।
- अपनी बेटियों को बताएं कि वह अपने लिए जीवन साथी कैसे ढूंढे। उन्हें मां के साथ सही व्यवहार के बारे में भी बताएं।
- खुद से सच बोलें। इससे दूसरे लोग खुद से सच और विश्वास करना सीखेंगे।
- खुद को बेहतर बनाने के लिए लगातार सीखते रहें। इससे आप बेहतर बनेंगे और दूसरों को अच्छी सर्विस दे सकेंगे।
- हर संभावना को बच्चे की तरह देखें और उसे जानने की जिज्ञासा दिखाएं।
- बच्चों को निडर और नियम-कानूनों से आजाद होकर लेकिन सही तरह से जीवन जीने की कला सिखाएं।

- डर किसी काले अंधेरे से ज्यादा कुछ नहीं है।
- जो काम पूरे आत्मविश्वास से करते हैं उसकी गहराई में उतरने की कोशिश करें। ऐसा करने से उस काम से संबंधित कोई नकारात्मक विचार आपके दिमाग में नहीं आएगा।
- आगे बढ़ते रहें। अपने सफर में परफेक्शन न तलाशें। जब आप काम में आगे बढेंगे तो परफेक्शन खुद ब खुद मिल जाएगा।
- एक बात याद रखें कि जीवन की सबसे जरूरी चीजों जैसे प्यार, दोस्ती, नम्रता, सम्मान को हासिल करने के लिए पैसे नहीं देने पड़ते।
- कुछ भी हो जाए पर आस न छोड़ें और काम जितना मुश्किल हो, कभी हार न मानें।

(हार्वर्ड बिजनेस रिव्यू)

खुद को दें बदलाव का तोहफा

हम चीजों या वस्तुओं को सर्वश्रेष्ठ समझते हैं। जबकि जिंदगी में वस्तुओं की कोई जगह नहीं है। अगर आप खुद को कुछ देना चाहते हैं तो पैसे खर्च करके कोई तोहफा न दें। इनमें से कोई एक बदलाव खुद को तोहफे में दें...

- सबसे मुश्किल काम खुद को किसी दूसरे की तरह पेश करना या मुखौटा पहनना है। इस मुखौटे को उतार कर फेंक दें। आप जैसे हैं वैसे रहें। किसी दूसरे व्यक्ति की नकल ना करें। खुद को अपने असली चेहरे से मुलाकात कराने का तोहफा दें।
- सीखने वाली बात कुछ है तो वह ये कि जिंदगी हर पल बदलती है। आने वाले कल में दुनिया आज से अलग दिखाई देगी। जो लोग कल्पना करते हैं वे सिर्फ जीते नहीं मगर नए-नए आविष्कार भी करते हैं। इसलिए खुद को कल्पना करने का तोहफा दें।
- आप हर दिन नए लोगों से मिलेंगे जो आपको नया सिखाएंगे या बताएंगे। इन सभी चीजों को सीखने के लिए दिमाग खुला रखें। इससे आप पल-पल की अहमियत समझ सकेंगे और परिस्थितियों को नए नजरिए से देख सकेंगे। आप

नई संभावनाओं को देखने की कोशिश करेंगे। खुद को खुले दिमाग के मालिक बनाने का तोहफा दें।

- विफल होना सूर्यास्त की तरह है। मगर, जो चीजें टल नहीं सकती उन्हें टालने की कोशिश भी न करें। ऐसी परिस्थितियों को गले लगाएं। विफलताओं को अपनाएं। इससे आप कुछ ऐसे काम कर सकेंगे जिन्हें करने से डरते हैं।
- 'शब्द' सर्वश्रेष्ठ है। शब्दों से कुछ बन सकता है तो बिगड़ भी सकता है। अपने बारें में बात करते वक्त साधारण शब्दों का प्रयोग करें। इससे सकारात्मक सोच मिलेगी। खुद को सही शब्दों का चुनाव करने का तोहफा दें।
- जो लोग हंसते हैं वे लंबा और खुशहाल जीवन व्यतीत करते हैं। हंसने से समस्याओं का सामना करना आसान बन जाता है। आप-पास रहने वाले लोगों और खुद के लिए रोज हंसे और जोर-जोर से हंसे।
- आप जिस काम को बदल सकते हैं उसकी शिकायत न करें। उसे अपने मुताबिक बदल लें। क्योंकि एक्शन लेना महत्वपूर्ण हैं। आप जो काम अच्छा कर सकते हैं उसे बार-बार करें।

आइडिया जनरेशन

सोचें कि दस साल बाद जिंदगी कैसी होगी ?

ऐसा भी वक्त आता है जब सर्वाधिक रचनात्मक व्यक्ति भी ऐसी गली में पहुंच जाता है, जिसका दूसरा छोर बंद है। इस बंद छोर को खोलने के कुछ तरीके :

मनोवैज्ञानिक दूरी : कुछ सूझ नहीं रहा हो तो घूम-फिरकर आने को कहा जाता है पर मनोवैज्ञानिक दूरी भी उपयोगी है। एक स्टडी में भागीदारों को टास्क से दूर होने की कल्पना करने को कहा तो उन्होंने उन लोगों से दोगुनी समस्याएं सुलझाई, जिन्होंने ऐसा नहीं किया।

- रचनात्मक चुनौती से दूर होने की कल्पना करें। इससे उच्चस्तर की थिकिंग बढ़ेगी।

समय में आगे जाएं : समय में दूरी से भी रचनात्मकता बढ़ती है। एक स्टडी

में भागीदारों से कहा गया कि वे एक साल बाद की अपनी जिंदगी के बारे में सोचें। उन्होंने समस्याओं के अधिक रचनात्मक उपाय सोचे।

- चुनौती को एक, दस, सौ साल की दूरी से देखें।

ऊंटपटांग या अनर्गल बातें : दिमाग अनुभव का अर्थ लगाने के लिए बेचैन रहता है। अनुभव जितना निरर्थक या ऊटपटांग होगा, अर्थ निकालने में इसे उतनी ही मेहनत करनी पड़ेगी। स्टडी में भागीदारों ने फ्रेंज कापका की ऊटपटांग कहानियां पढ़ने के बाद पैटर्न खोजने की पहेलियाँ आसानी से हल कर ली।

एलिस इन वंडरलैंड, काफ्का की मेटाकॉफसिस या कोई भी ऊटपटांग मास्टरपीस पढ़े 'अर्थ लगाने की चुनौती' रचनात्मकता बढ़ाती है।

विरोधी विचारों को जोड़े : हर क्षेत्र के नोबेल विजेताओं के इंटरव्यू में एक समानता थी- कई विरोधी बातों को एक साथ सोचना भौतिकशास्त्री नील्स बोहर ने इसी सोच से प्रकाश को कण व तरंग दोनों बताया था, जो सही है पर दोनों रूप एकसाथ नहीं होतें।

-अजीब-अजीब सी जोड़िया बनाएं, असंभव विपरीत चीजों को जोड़ें।

परमयोगी ही मोक्षमार्ग एवं मोक्ष स्वरूप है

सम्मं विदिदपदत्था चत्ता उवहिं बहित्थमज्झत्थं।
विसयेसु णावसत्ता जे ते सुद्ध त्ति णिद्दिट्ठा।। (273) (प्र.सा.)

फ्राब्ल्ज, ळाप्गळ पाग्श्ज उ्याल्भ्ज्छ ग्न ळाप्तफ्ज्ल. भ्ख्भ्ज्यन्ह, पाग्श्ज ट्ज्फब्यफ्च्ज्छ (ग्ळळाग्चाप्ज्फळ इ्ब्ट) ज्स्ळज्यफ्ग्न ग्फ्छ त्फळज्यफ्ग्न भ्याभ्पाज्यफ्छत्न्त ग्फ्छ ग्ट्ज फ्ळळ ल्ळज्ज्भ्ज्छ त्फ भ्न्ज्ल्व्ज्ल ब्ङ ल्ज्फल्ज्ल, ग्ट्ज चन्न्ज्छ ळाप्ज भ्व्ज्ज ब्ङ दरईईॠअ.

(जे) जो (समं विविदपदत्था) भले प्रकार पदार्थों को जानते वाले हैं और (बहित्थम) बाहरी क्षेत्रादि परिग्रह (मज्झत्थं) और अंतरंग रागादि (उवहिं) परिग्रह को (चत्ता) त्यागकर (विसयेसु) पाँचों इन्द्रियों के विषयों में (णावसत्ता) आसक्त नहीं है। (ते) वे साधु (सुद्धति णिद्दिट्ठा) शुद्ध साधक हैं ऐसे कहे गये हैं।

जो साधु संशय, विपर्यय, अनध्ववसाय तीन दोषों से रहित ऐसा अनतंज्ञान, उस अनंतज्ञानादि स्वभाव वाले निज-परमात्म पदार्थ को आदि लेकर सर्व वस्तुओं

के विचार में चतुर-चित्त होकर उससे प्रकट जो अतिशय सहित परम विवेकरूपी ज्योति उसके द्वारा भले प्रकार पदार्थों के स्वरूप को जानने वाले हैं तथा पंचइन्द्रिय विषयों के अधीन न होकर निज परमात्म तत्त्व की भावना रूप परम समाधि से उत्पन्न जो परमानंदमय सुखरूपी अमृत उसका स्वाद भोगने के फल से पाँचों इन्द्रियों के विषयों में रंचमात्र भी आसक्त नहीं है और अपने स्वरूप का ग्रहण करके जिन्होंने बाहरी क्षेत्रादि अनेक प्रकार और भीतरी मिथ्यात्वादि चौदह प्रकार परिग्रह को त्याग दिया है, ऐसे महात्मा, शुद्धात्मा-शुद्धोपयोगी ही मोक्ष की सिद्धि कर सकते है ऐसा कहा गया है अर्थात् ऐसे परमयोगी ही अभेदनय से मोक्षमार्ग स्वरूप जानने योग्य है।

समीक्षा - यह गाथा आध्यात्मिक दृष्टि से आत्मसाधक मोक्षमार्गी के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि इस गाथा में मोक्ष के परम साधक को ही मोक्षमार्ग तथा मोक्ष बताया गया है। वस्तुतः द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म से मुक्त एवं शुद्ध रत्नत्रय से युक्त जीव ही मोक्षमार्गी है एवं वही मोक्ष को प्राप्त करता है। इसलिये ऐसे साधक ही निश्चय से मोक्षमार्ग एवं मोक्ष स्वरूप हैं। द्रव्य संग्रह में कहा भी है-

सम्मद्दंसणणाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे।
ववहारा णिच्छयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा।। (39)

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनों के समुदाय को व्यवहार से मोक्ष का कारण जानो तथा निश्चय से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र स्वरूप जो निज आत्मा है उसको मोक्ष का कारण जानो।

रयणत्तयं ण वट्टइअप्पाणं मुइत्तु अण्णदवियम्हि।
तम्हा तत्तियमइउ होदि हु मोक्खस्स कारणं आदा।। (40)

आत्मा को छोड़कर अन्य द्रव्य में रत्नत्रय नहीं रहता। इस प्रकार उस रत्नत्रयमयी जो आत्मा है वही निश्चय से मोक्ष का कारण है। परमात्मप्रकाश में भी योगेन्द्र देव ने कहा है कि विषय कषाय से रहित निर्मल भाव ही मोक्ष का कारण है और मोक्ष स्वरूप भी है। यथा -

जेण णिरंजणि मणु धीरउ विसय-कसायहिँ जंतु।
मोक्खहँ कारण एत्तडउ अण्णु ण तंतु ण मंतु ।। (गा. 123)

जिस पुरुष ने विषय कषायों में जाते हुए मन को कर्मरूपी अंजन से रहित

भगवान् में रखा और ये ही मोक्ष के कारण है दूसरा कोई भी तंत्र नहीं है और न मंत्र है। तंत्र नाम शास्त्र व औषध का हैं, मंत्र नाम मंत्राक्षरों का है। विषय कषायादि पर पदार्थों से मन को रोककर परमात्मा में मन को लगाना, यही मोक्ष का कारण है।

जो जिणु सो अप्पा मुणहु इहु सिद्धंतहँ सारू।
इउ जाणेविण जोइयहो छंडहु मायाचारू।। (21) (योगसार)

जो जिन भगवन् है वही आत्मा है- यही सिद्धांत का सार समझो। इसे समझकर हे योगीजनों ! मायाचार को छोड़ो।

जो परमप्पा सो जि हउँ जो हउँ सो परमप्पु।
इउ जाणेविणु जोइया अण्णु म करहु वियप्पु।। (22)

जो परमात्मा हैं वही मैं हूँ तथा जो मैं हूँ वही परमात्मा है यह समझकर हे योगिन! अन्य कुछ भी विकल्प मत करो।

राय-रोस बे परिहरिवि जो अप्पाणि वसेइ।
सो धम्मु वि जिण-उत्तियउ जो पंचम-गइ णेइ।। (48)

जो राग और द्वेष दोनों को छोड़कर निज आत्मा में वास करना है, उसे ही जिनेन्द्र देव ने धर्म कहा है वह धर्म पंचमगति (मोक्ष) को ले जाता है।

जइया मणु णिग्गंथु जिय तइया तुहुँ णिग्गंथु।
जइया तुहुँ णिग्गंथु जिय तो लब्भइ सिवपंथु।। (73)

हे जीव! जब तेरा मन निर्ग्रन्थ हो गया तो तू भी निर्ग्रन्थ हो गया और जब तू निर्ग्रन्थ हो गया, तो उससे मोक्षमार्ग मिल जाता है।

जो जिण सो हउँ सो जि हउँ एहउ भाउ णिभंतु।
मोक्खहँ कारण जोइया अण्णु ण तंतु ण मंतु ।। (75)

जो जिनदेव हैं वह मैं हूँ, वही मैं हूँ -इसकी भ्रांति रहित होकर भावना कर। हे योगिन् ! मोक्ष का कारण कोई अन्य मंत्र-तंत्र नहीं है।

अप्पा दंसणु णाणु मुणि अप्पा चरणु वियाणि।
अप्पा संजमु सील तउ अप्पा पच्चक्खाणी ।। (8)

आत्मा को ही दर्शन और ज्ञान समझो, आत्मा ही चारित्र है और संयम, शील, तप और प्रत्याख्यान भी आत्मा को ही मानो।

रणयत्तय-संजुत्त जिउ उत्तिमु तित्थु पवित्तु।
मोक्खहँ कारण जोइया अण्णु ण तंतु ण मंतु।। (83)

हे योगिन् ! रत्नत्रय युक्त जीव ही उत्तम पवित्र तीर्थ हैं, और वही मोक्ष का कारण है। अन्य कुछ मंत्र-तंत्र मोक्ष का कारण नहीं है।

णिच्छयणयेण भणिदो तिहि तेहिं समाहिदो हु जो अप्पा।।
ण कुणदिकिंचि वि अण्णं ण मुयदि सो मोक्खमग्गो त्ति।। (161) पंचास्ति.

जो आत्मा सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र से एकाग्र होकर अपने आत्मिक भाव के सिवाय क्रोधादि भावों को नहीं करता है और न आत्मा के आश्रय में रहने वाले अनंतज्ञान आदि गुणसमूह को त्यागता है वही निश्चय मोक्षमार्ग स्वरूप है।

अपने ही शुद्ध आत्मा की रूचि निश्चय सम्यग्दर्शन है उसी का ज्ञान निश्चय सम्यग्ज्ञान है तथा उसी शुद्ध आत्मा का निश्चल अनुभव सो निश्चय सम्यक्चारित्र है। इन तीनों की एकता निश्चय मोक्षमार्ग है-इसी का साधक व्यवहार मोक्षमार्ग है जो किसी अपेक्षा अनुभव में आने वाले अज्ञान की वासना के विलय होने से भेद रत्नत्रय स्वरूप है।

इस व्यवहार मोक्षमार्ग का साधन करता हुआ गुणस्थानों के चढ़ने के क्रम से जब यह आत्मा अपने ही शुद्ध आत्मिक द्रव्य की भावना से उत्पन्न नित्य आनंद स्वरूप सुखामृत रस के आस्वाद से तृप्ति रूप परम कला का अनुभव करने के द्वारा अपने ही शुद्धात्मा के आश्रित निश्चय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्रमयी हो एक रूप से परिणमन करता है तब निश्चयनय से भिन्न साध्य और भिन्न साधक भाव के अभाव से यह आत्मा ही मोक्षमार्ग रूप हो जाता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि सुवर्ण एवं सुवर्ण पाषाण की तरह निश्चय और व्यवहार मोक्षमार्ग में साध्य और साधक भाव भले प्रकार संभव है। मूलाचार में रत्नत्रय को मोक्षमार्ग कहा है और अनंत सुखादि की उपलब्धि को मोक्षमार्ग का फल कहा है। यथा-

मग्गो मग्गफलं ति य दुविहं जिणसासणे समक्खादं।
मग्गो खलु सम्मत्त मग्गफलं होइ णिव्वाणं ।। (202) मूलाचार

मार्ग और मार्गफल इस तरह दो प्रकार ही जिनशासन में कहे गये हैं निश्चित रूप से सम्यक्त्व है मार्ग और मार्ग का फल है निर्वाण। अकलंक देव ने स्वरूप

संबोधन में मोक्ष की सातों विभक्तियाँ एवं षट्कारक स्वयं की आत्मा में ही घटाकर सिद्ध किया है कि आत्मा ही मोक्ष के लिए कर्त्ता, कर्म, करण, संप्रदान, अधिकरण संबोधादि है। यथा-

स्वः स्वं स्वेन स्थितं स्वस्मै स्वस्मात्वस्याविनश्वरम्।
स्वस्मिन् ध्यात्वा लभेत् स्वोत्थमानन्दमामृतं पदम् ।। (24)

अपनी आत्मा, अपने द्वारा, अपने स्वरूप को, अपने लिए, अपने आत्मा सें, अपने आत्मा का, अपने आत्मा में उत्पन्न हुआ अविनाशी आनंद - अमृतमय पद अपने आत्मा में ध्यान करके प्राप्त करें। इस गाथा में आचार्यश्री ने कहा है कि वह जीव मोक्षमार्गी एवं मोक्ष स्वरूप जो शुद्ध स्वरूप है। जो वस्तु-स्वरूप को यथार्थ जानता हुआ सम्पूर्ण अंतरंग, बहिरंग परिग्रह को त्याग करके विषय-सुख से अनासक्त होता है। इससे आचार्य ने यह सिद्ध किया है कि जो परिग्रह धारण करते हुए, विषयों का भोग करते हुए स्वयं को शुद्धोपयोगी, शुद्धात्मा का अनुभव करने वाला शुक्ल ध्यानी मानता है उसकी मान्यता मिथ्या है। अध्यात्म अमृत कलश में कहा भी है-

अतो हताः प्रमादिनो गताः सुखसीनतां
प्रलीनं चापलं, उन्मूलितमालम्बनम्।
आत्मन्येवालानितं चित्तं
आसंपूर्ण विज्ञानघनोपलब्धेः ।। (188)

उक्त कथन के अनुसार जो रागादि प्रमाद के वश हो कर्मजन्य आकुलता को ही सुख मानकर उसमें निमग्नता को प्राप्त है वे मोक्षमार्ग से भ्रष्ट हुए। उनका तिरस्कार किया। किन्तु यहाँ इस उपदेश से उनकी चपलता मिटाई पर द्रव्य के आलम्बन को जड़ से उखाड़ फेंकने का उपदेश दिया तथा अपने मन को अपने स्वात्मा में ही लीन किया उससे ही संबद्ध किया। उनको ही पूर्ण घट की तरह संपूर्ण ज्ञान की ठोस उपलब्धि होती है अथवा सम्पूर्ण ज्ञानघन स्वरूप आत्मा की उपलब्धि होने से चपलता छूटी, परावलम्ब छूटा और स्वात्माश्रितता आई ऐसा जानना चाहिए। महात्मा बुद्ध ने भी कहा है कि निर्वाण वह प्राप्त करता है जो समस्त राग-द्वेष कामना को त्याग करता है। यथा-

सिञ्च भिक्खु! इमं नावं सित्ता ते लहुमेस्सति।
छेत्वा रागञ्च दोसञ्च ततो निब्बानमेहिसि।। (10)

भिक्षु! इस नाव को उलीचो, उलीचने पर यह तुम्हारे लिए हल्की हो जायेगी। राग और द्वेष को छिनकर, फिर तुम निर्वाण को प्राप्त होओगे।

पञ्च छिन्दे पञ्च जहे पञ्च चुत्तरि भावये।
पञ्च सङ्गातिगो भिक्खु ओघतिण्णोति वुच्चति।। (1)

(सत्कायदृष्टि, विचिकित्सा, शीलव्रत परामर्श, कामराग और व्यापाद इन) पाँच(अवर भागीय संयोजनों) को काटे, (रूप राग, अरूप राग, मान, औद्धत्य और अविद्या इन) पाँच (ऊर्ध्वभागीय संयोजनों) को छोड़ दे। (उनके प्रहाण के लिए श्रद्धा, वीर्य, स्मृति, समाधि और प्रज्ञा इन) पाँच (इन्द्रियों की) भावना करें, (राग, द्वेष, मोह, मान और मिथ्यादृष्टि इन) पाँच के संसर्ग को अतिक्रमण कर चुका भिक्षु (काम, भव, दृष्टि, अविद्या के) ओघों (बाढ़ों) से पार हुआ कहा जाता है। गीता में कहा भी है-

योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम्।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय।।

जिसने समत्वरूपी योग द्वारा कर्मो को अर्थात् कर्मफल का त्याग किया है और ज्ञान द्वारा संशय को छिन्न कर डाला है वैसे आत्मदर्शी को, हे धनंजय ! कर्मबंधन रूप नहीं होते।

जह फलिहमणिविसुद्धो ण सयं परिणदि रायमादीहिं।
राइज्जदि अण्णेहिं दु सो रत्तादीहिं दव्वेहिं।। (300) पृ. 270
एवं णाणी सुद्धो ण सयं परिणमदि रायमादीहिं।
राइज्जदि अण्णेहिं दु सो रागादीहिं दोसेहिं।। (301)

जैसे स्फटिकमणि जो कि निर्मल होता है वह किसी बाहरी लगाव के बिना अपने आप ही लाल आदि रूप परिणमन नहीं करता है किन्तु जपा पुष्पादि बाह्य दूसरे-दूसरे द्रव्य के द्वारा वह लाल आदि बनता है उसी प्रकार ज्ञानी जीव भी उपाधि से रहित अपने चिच्चमत्कार रूप स्वभाव से वह शुद्ध ही होता है जो कि जपा-पुष्प स्थानीय कर्मोदय

रूप उपाधि के बिना रागादि रूप विभावों के रूप में परिणमन नहीं करता है। हाँ, जब कर्मोदय से होने वाले रागादि रूप-दोष भावों से अपनी सहज स्वच्छता से च्युत होता है तब वह रागी बनता है इससे यह बात मान लेनी पड़ती है कि जो रागादिक हैं वे सब कर्मोदय जनित हैं किन्तु ज्ञानी जीव के स्वयं के भाव नहीं है।

मोक्षपायो भवति यमिनां शुद्धरत्नत्रयात्मा।
ह्यात्मा ज्ञानं न पुनरपरं दृष्टिन्याऽपि नैव।
शीलं तावत्र भवति परं मोक्षुभिः प्रोक्तमेतद्।
बुद्ध्वा जन्तुर्नपुनरुदरं याति मातुः स भव्यः।। ।। नियमसार

शुद्ध रत्नत्रय स्वरूप से परिणत अपनी आत्मा मुनियों के लिए मोक्ष प्राप्ति का उपाय है क्योंकि आत्मा ही ज्ञान है, किन्तु उससे भिन्न अन्य कुछ ज्ञान नहीं है, आत्मा ही दर्शन है भिन्न दर्शन भी कुछ नहीं है एवं शील भी अन्य कुछ नहीं है अर्थात् आत्मा ही शील है। ऐसा मुक्ति इच्छुक-मोक्ष को प्राप्त होने वाले श्रीअरिहंत देव ने कहा है ऐसा जानकर वह भव्य जीव पुनः माता के गर्भ में नहीं आता है। पंचाध्यायी में शुद्धोपयोग को ही चारित्र कहा गया है और उसे ही उत्कृष्ट व्रत भी कहा है क्योंकि इससे ही जीव को मोक्ष मिलता है तथा-

ततःशुद्धोपयोगो यो मोहकर्मोदयादृते।
चारित्रापरनामैतद् व्रतंनिश्चयतः परम्।। (758)

इसलिये मोहनीय कर्म के उदय से रहित जो आत्मा का शुद्धोपयोग है उसी का दूसरा नाम चारित्र है और वही निश्चय से उत्कृष्ट व्रत हैं।

चारित्रं निर्जराहेतुर्न्यायादप्यस्त्यवाधितम्
सर्वस्वार्थक्रियामर्हन्सार्थकनामस्ति दीपवत्।। (758)

चारित्र निर्जरा का कारण है यह बात न्याय से अबाधित सिद्ध है वह चारित्र ही स्वार्थ क्रिया करने में समर्थ है। जिस प्रकार दीपक प्रकाशन क्रिया से सार्थनामा (यथार्थ नाम वाला) है उसी प्रकार चारित्र भी कर्म नाश क्रिया से सार्थनामा है।

कर्मादानक्रियारोधःस्वरूपाचरणं च यत्।
धर्मःशुद्धोपयोगः स्यत् सैष चारित्रसंज्ञकः।। (764)

कर्म के ग्रहण करने की क्रिया का रूक जाना ही स्वरूपाचरण चारित्र है वही धर्म है, वही शुद्धोपयोग, वही चारित्र है।

ननुसद्दर्शनज्ञानचारित्रैर्मोक्षपद्धतिः।

समस्तैरेव न व्यस्तैस्तत्किं चारित्र मात्रया।।

शंकाकार का कहना है कि सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और चारित्र तीनों मिलकर ही मोक्षमार्ग कहलाता है। फिर केवल चारित्र के कहने से क्या प्रयोजन है ?

सत्यं सद्दर्शन ज्ञानं चारित्रान्तर्गतं मिथः।

त्रयाणामविनाभावदिदं त्रयमखण्डितम्।।

आचार्य कहते हैं कि सामान्य दृष्टि से सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान दोनों ही चारित्र में गर्भित है परन्तु तीनों का अविनाभाव होने से तीनों ही अखण्डित है। गीता में भी यज्ञ, अर्पण एवं समिधा ब्रह्म को ही कहा है और ऐसे जो ब्रह्म यज्ञ करता है वह ब्रह्म को प्राप्त करता है। यथा-

ब्रह्मार्पणं ब्रह्मा हविब्रह्मग्नौ ब्रह्मणा हुतम्।

ब्रह्मोव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना।। (24)

यज्ञ में अर्पण ब्रह्म है, हवन की वस्तु-हविब्रह्मा है, ब्रह्मा रूपी अग्नि में हवन करने वाला भी ब्रह्मा है, इस प्रकार कर्म के साथ जिसने ब्रह्मा का मेल साधा है वह ब्रह्मा को ही पाता है।

खुद की योग्यताओं पर न करें कभी संदेह

जीवन में तमाम ऊंचाइयां छूने के बावजूद कई सफल लोगों को ऐसा लगता है कि वे काफी बनावटी हैं और लोग जल्दी ही उनकी सफलता के रहस्य का पता लगा लेंगे। उन्हें एक बड़ा डर इस बात का भी लगा रहता है कि यदि उन्होंने और ज्यादा मेहनत नहीं की तो वे पिछड़ जाएंगे। अपनी जिंदगी में तमाम चुनौतियों को स्वीकार करते हुए सफलता की सीढ़ियों पर खड़े होकर भी इन्हें कई बार ऐसा लगता है कि आज किसी काम में इन्होंने जो सफलता हासिल की है, शायद ये इसे दोबारा दोहरा न पाएं। ऐसा किसी बड़ी शख्सियत से लेकर किसी छोटी सी फर्म के मालिक के साथ भी हो सकता है। यदि आपके दिमाग में भी ऐसा कोई भय घर कर गया है तो

इसे निकालने के लिए यहां बताए गए कुछ तरीकों को आजमाकर जरूर देखें।

चुप्पी नहीं है हल

आमतौर पर ऐसे भय से ग्रस्त लोग खुद को साथियों से दूर रखने लगते हैं और चुपचाप खुद को परेशानी देते रहते हैं। यदि आप वाकई अपने इस डर को भगाना चाहते हैं तो सबसे पहले यह जान लीजिए कि आपके चुप रहने से यह समस्या अपने आप हल होने वाली नहीं है। अपने किसी विश्वसनीय दोस्त, मेंटर, साथी या किसी थैरेपिस्ट से अपने डर के बारे में खुलकर बात करें। आप चाहें तो किसी पत्रिका में अपने डर का खुलकर इजहार कर सकते हैं।

सही बनाएं साथ...

अपना यकीन खुद में बनाए रखने के लिए ऐसे लोगों से दोस्ती करें जिनके मूल्य आपके मूल्यों से मिलते हों। अपने नजरिए व मूल्यों का खाका खीचें व उनमें यकीन रखिए। यदि खुद ही अपने मूल्यों पर यकीन नहीं रखेंगे तो कोई और कैसे आपमें यकीन रखेगा ? आपको सही लोगों के साथ उठना-बैठना चाहिए। आपके आस-पास ऐसे लोग होने चाहिए जो आपको आगे बढ़ने के लिए मोटिवेट करते रहें।

समझें अपनी सफलता

अपनी पॉजिटिव स्किल्स, सफलताओं और अनुभवों की सूची बनाने के बाद अपनी सफलता का क्रम और उनकी प्रकृति को समझने की कोशिश करें। जब अपनी सफलता का आकलन करेंगे तो खुद को ही अपने भीतर से एक स्वीकार्यता मिलेगी। आपने जो भी सफलता प्राप्त की है, अपने बूते प्राप्त की है। इस बात को समझने के बाद हर संदेह दूर हो जाएगा।

हंसना है जरूरी

अपनी योग्यताओं पर संदेह से घिरे लोग अक्सर इस डर से हंसी-मजाक नहीं करते कि कहीं उन्हें निकम्मा न मान लिया जाए। असल क्षमताओं को जिंदा रखने के लिए जरूरी है कि अपने भीतर के इंसान को खुशमिजाज बनाकर रखा जाए। ऐसा न समझें कि हंसी-मजाक के कारण आपको कमतर माना जाएगा।

कोई नहीं परफेक्ट

खुद को कमतर आंकने की इस सनक से उबरने के लिए दूसरों को देखें। उनके गुणों के साथ-साथ दोषों को भी समझें। जब दूसरों के गुण व दोष दोनों को देखेंगे तो खुद पर भी परफेक्ट बनने का बोझ नहीं थोपेंगे। तब खुद के साथ प्यार और सहानुभूति से पेश आ सकेंगे। अपनी योग्यता को पहचानें।

करें खुद का आकलन

अपनी योग्यताओं पर संदेह कराने वाले इस भय से निपटने के लिए अपना आकलन करें। आकलन में उन चीजों को कागज पर लिखें, जो लोगों को आकर्षित करती है। अपनी सभी स्किल्स के बारे में लिखिए, जो आज आपको यहां तक लेकर आएं हैं। इन सभी खासियतों को लिखने से आप जान पाएंगे कि आज जो बेवजह की खामियां खुद में ढूंढ-ढूंढकर खुद को कम आंक रहे हैं, वे तो असल में हैं ही नहीं।

दिल की सुनें

क्या किसी अन्य व्यक्ति से ज्यादा काम करके आप खुद को ज्यादा योग्य महसूस कर सकते हैं ? अगर दिल ऐसा मानता है तो ज्यादा मेहनत वाले काम को करके खुद को असल योग्यताओं से परिचित करवा दीजिए। जब मेहनत करते हैं और सफलता प्राप्त करते हैं तो योग्यताओं पर यकीन होने लगता है।

सराहना को सराहें

बहुत बार खुद को प्रशंसाओं से परे दिखाने के चक्कर में आप अपने किसी काम के लिए मिली तारीफ पर भी कुछ खास नहीं रिएक्ट करते। अगली बार जब किसी काम के लिए तारीफ मिले तो सब कुछ भूलकर उस तारीफ को स्वीकारें। आप चाहें तो अपने व्यक्तित्व की अच्छी बातों के बारे में किसी विश्वसनीय दोस्त से भी पूछ सकते हैं। (साभार - मी नेक्स्ट)

जैन सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में...

अमूर्तिक द्रव्यों की श्रद्धा-प्रज्ञा

(भौतिक वैज्ञानिक तक को क्यों नहीं होती है अमूर्तिक श्रद्धा-प्रज्ञा ?)

- आचार्य कनकनन्दी

(चालः- 1. आत्मशक्ति...2. क्या मिलिए...3 सायोनारा)

शक्ति (द्रव्य) रूप में होते हैं (भले) हर जीव अनन्त ज्ञानी (व) सुखमय ....
तथापि कर्मबन्ध के कारण व्यक्ति (अभिव्यक्ति) रूप में,
न होते अनन्त ज्ञानी (व) सुखमय...(ध्रुव)

यथा वट बीज में शक्ति रूप में, हजारों टन का विशाल वृक्ष निहित...
तथापि द्रव्य क्षेत्र काल आदि के अभाव से, वट बीज नहीं विशाल वृक्ष...
स्थूल कुछ उदाहरण भी ज्ञातव्य, यथा भ्रूण व प्रौढ़ ज्ञानी मानव...
सूक्ष्म जीव से विज्ञानी तक सभी जीव, तो भी सभी में न सम अभिव्यक्ति...(1)

हर मानव में समान नहीं अभिव्यक्ति, भले माता-पिता वातावरण सम हो...
शिक्षा-संस्कृति-संस्कार-खान-पान, वेशभूषादि भी क्यों न सम हो...
इसके सम्पूर्ण सही कारण भी, जानते हैं सर्वज्ञ भगवान् ही...
उनसे उपदिष्ट आगम वर्णित, कतिपय कारण वर्णन निम्न में भी...(2)

जो कुछ वर्णन निम्न में है, ऐसा मैं न पढ़ा अन्य धर्म में भी...
प्राणी विज्ञान से मनोविज्ञान, जिनोम सिद्धान्त में न पढ़ा अभी तक भी...
जब तक मानव में (भी) अनन्तानुबन्धी,क्रोध मान माया लोभ मोह(मिथ्यात्व)उदय है...
तब तक वह मानव (भी) नहीं, जान/(मान) सकता अमूर्तिक द्रव्य को है ...(3)

भले वह शिक्षित हो या अशिक्षित, किसी धर्म-जाति-भाषा-राष्ट्र का हो...
दार्शनिक हो या वैज्ञानिक-न्यायाधीश, या हो साधु से आचार्य भी...
मनन-चिन्तन या ध्यान-अध्ययन, शोध-बोध या अनुसन्धान से...

तथापि अमूर्तिक द्रव्यों को न जान सकता, किसी भी यन्त्रों के प्रयोग से ...(4)

अमूर्तिक द्रव्य होते हैं शुद्ध जीव, धर्म-अधर्म-आकाश व काल द्रव्य...
स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण(वजन) रहित, अनादि अनन्त व शाश्वतिक...
केवल पुद्गल द्रव्य ही होता मूर्तिक, जिसमें होते स्पर्श से भार तक...
परमाणु से ले सम्पूर्ण भौतिक विश्व, जो कुछ जानते वैज्ञानिक अभी तक...(5)

जैसे पूर्ण अस्वच्छ दर्पण में न, पड़ता प्रतिबिम्ब विशाल पर्वत का...
तथाहि अनन्तानुबन्धी क्रोध से मिथ्यात्व युक्त, जीव न जाने/(माने)अमूर्तिक द्रव्य...
इनके उपशम-क्षयोपशम या क्षय से, होती अमूर्तिक द्रव्यों की भी श्रद्धा-प्रज्ञा...
इसे ही सर्वज्ञ ने कहा ''तत्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शन'' रूपी श्रद्धा व प्रज्ञा...(6)

ये सभी सम्भव होता आत्मविशुद्धि रूपी, साधनामय ध्यान-अध्ययन से...
ईर्ष्या तृष्णा घृणा काम क्रोध मोह, स्वार्थादि मलिनता रूपी कर्म नाश से...
उत्तरोत्तर आत्मविशुद्धि से जब क्षय, होते संपूर्ण ज्ञानावरणादि घाती कर्म...
तब जीव बनता सर्वज्ञ जिससे, ज्ञात होता सर्व मूर्तिक-अमूर्तिक द्रव्य ...(7)

अतः सम्पूर्ण ज्ञान व अनन्त सुख हेतु, आत्मविशुद्धि ही सर्वश्रेष्ठ उपाय...
इसे ही कहते आध्यात्मिक विकास, जिस हेतु 'कनक सूरी' करे प्रयत्न...(8)
ओबरी, दि. 28.1.2018, रात्रि 9.25

नोट - इस कविता सम्बन्धी विशेष परिज्ञान हेतु कवि कृत ''जैन तथ्य (भारतीय तथ्य) जो आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से परे'' का स्वाध्याय करे।)

मिच्छत्तं वेदतो जीवो विवरीयदंसणो होदि।
ण य धम्मं रोचेदि, हु महुरं खु रसं जहा जरिदो।। 17।।
मिच्छाइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं ण सद्दहदि।
सद्दहदि असब्भावं उवइट्ठं वा अणुवइट्ठं।। 18।। जी. जीव.

आगे अतत्त्व श्रद्धान रूप मिथ्यात्व का कथन करते हैं - उदय में आये मिथ्यात्व का वेदन अर्थात् अनुभवन करने वाला जीव विपरीत दर्शन अर्थात् अतत्त्वश्रद्धा से युक्त होता है। वह न केवल अतत्त्व की ही श्रद्धा करता है, अपितु अनेकान्तात्मक

धर्म अर्थात् वस्तु स्वभाव को अथवा मोक्ष के कारणभूत रत्नत्रयात्मक धर्म को भी पसन्द नहीं करता है। इसमें दृष्टान्त देते हैं- जैसे पित्त ज्वर से ग्रसित व्यक्ति मीठे दूध आदि रसको पसन्द नहीं करता। उसी तरह मिथ्यादृष्टि को धर्म नहीं रूचता।।17।।

इसी वस्तुस्वभाव के अश्रद्धान को स्पष्ट करते हैं - मिथ्यादृष्टि जीव 'उपदिष्ट' अर्थात् अर्हन्त आदि के द्वारा कहे गये, 'प्रवचन' अर्थात् आप्त आगम और पदार्थ ये तीन इनका श्रद्धान नहीं करता है। प्रवचन अर्थात् जिसका वचन प्रकृष्ट हैं, ऐसा आप्त, प्रकृष्ट का वचन प्रवचन अर्थात् परमागम, प्रकृष्टरूप से जो कहा जाता है अर्थात प्रमाण के द्वारा कहा जाता है, वह प्रवचन अर्थात् पदार्थ। इन निरूक्तियों से प्रवचन शब्द से आप्त, आगम और पदार्थ तीनों कहे जाते हैं। तथा वह मिथ्यादृष्टि असद्भाव अर्थात् मिथ्यारूप प्रवचन यानी आप्त आगम पदार्थ का 'उपदिष्ट' अर्थात् आप्ताभासों के द्वारा कथित अथवा अकथितका भी श्रद्धान करता है।

सिद्धान्त में कहा है 'घट, पट, स्तम्भ आदि पदार्थों में मिथ्यादृष्टि जानने के अनुसार श्रद्धान करते हुए भी अज्ञानी कहा जाता है, क्योंकि उसको जिनवचन में श्रद्धान नहीं है।' इस सिद्धान्त वाक्य में कहे मिथ्यादृष्टि लक्षण को जानकर उस मिथ्यात्व को छोड़ना चाहिए। उस मिथ्यादर्शन परिणाम के भेद भी इसी सिद्धान्त वाक्य से जानने चाहिए। जो इस प्रकार है- **आत्मा में अवस्थित कोई मिथ्यादर्शनरूप परिणाम रूपादि की उपलब्धि होने पर भी कारण विपर्यास, भेदाभेद विपर्यास और स्वरूपविपर्यास को पैदा करता है। उनमें से कारण विपर्यास इस प्रकार है- कोई मानते हैं कि रूपादि का कारण एक अमूर्त नित्य तत्त्व है। दूसरे कहते हैं कि परमाणु पृथ्वी आदि जाति के भेद से भेदवाले हैं। पृथ्वी जाति के परमाणुओं में रूप-रस-गन्ध-स्पर्श चारों गुण होते हैं। जल जाति के परमाणुओं में रस-रूप-स्पर्श तीन गुण होते हैं। तेजो जाति के परमाणुओं में रूप और स्पर्श दो गुण होते हैं।**

वायु जाति के परमाणुओं में केवल एक स्पर्श गुण होता है तथा पृथ्वी जाति के परमाणु से पृथ्वी ही बनती है, जल जाति के परमाणुओं से जल ही बनता है। इस तरह से परमाणु समान जातीय कार्यों को ही उत्पन्न करते हैं। दूसरा भेदाभेदविपर्यास इस प्रकार है - कारण से कार्य भिन्न ही या अभिन्न

ही होता है, ऐसी कल्पना भेदाभेदविपर्यास है। स्वरूप विपर्यास इस प्रकार है- रूप आदि निर्विकल्प हैं अथवा नहीं है अथवा उनके आकार रूप से परिणत ज्ञान ही है, उसका आलम्बन बाह्य वस्तु नहीं है। इस प्रकार कुमतिज्ञान के साहाय्य से कुश्रुतज्ञान के विकल्प होते हैं। इन सबका मूल कारण मिथ्यात्व कर्म का उदय ही है, ऐसा निश्चय करना चाहिए (18.)

सासादन गुणस्थान का स्वरूप

आदिमसम्मत्तद्धासमयादो छावलित्ति वा सेसे ।
अणअण्णदरूदयादो णासियसम्मो त्ति सासणक्खो सो ।।19।।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के काल में जघन्य से एक समय और उत्कृष्ट से छह आवली शेष रहने पर अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ में से किसी एक कषाय का उदय होने पर जिसका सम्यक्त्व नष्ट हो जाता है, वह ससादन कहा जाता है। 'वा' शब्द से द्वितीय उपशम सम्यक्त्व के काल में भी सासादन गुणस्थान की प्राप्ति होती है, ऐसा कषाय प्राभृतका अभिप्राय है ।।19।।

सम्मत्तरयणपव्वयसिहरादो मिच्छभूमिसमहिमुहो।
णासियसम्मत्तो सो सासणणामो मुणेयव्वो।। 20।।
सम्मामिच्छुदएण य जत्तंतरसव्वघादिकज्जेण।
ण य सम्मं मिच्छं पि य सम्मिस्सो होदि परिणामो।। 21।।

जो जीव सम्यक्त्व परिणामरूप रत्नपर्वत के शिखर से मिथ्यात्व परिणामरूपी भूमि के सम्मुख होता हुआ मध्य के काल में जो एक समय से छह आवलि पर्यन्त है, रहता है, वह जीव सम्यक्त्व के नष्ट हो जाने से सासादन होता है। अर्थात् पर्वत से गिरा व्यक्ति भूमि में आने से पहले गिरता हुआ कुछ समय अन्तराल में रहता है। वैसे ही जो सम्यक्त्व के नष्ट होने पर मिथ्यात्व रूप भूमि को प्राप्त न करके छह आवलिमात्र अन्तराल काल में रहता है, वह सासादन सम्यग्दृष्टि है ।।20।।

जात्यन्तर सर्वघाति के कार्यरूप सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से जीव के एक साथ सम्यक्त्व और मिथ्यात्वरूप मिला-जुला परिणाम होता है, अतः सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से मिथ्यात्व कर्म के उदय की तरह न केवल मिथ्यात्व परिणाम होता

है और न सम्यक्त्व प्रकृति के उदय की तरह सम्यक्त्व-परिणाम होता है। इस कारण से उस सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का कार्य जुदी ही जातिरूप सम्यग्मिथ्यात्व रूप मिला हुआ परिणाम होता है।। 21 ।।

दहिगुडमिव वामिस्सं पुहभावं णेव कारिदुं सक्कं।
एवं मिस्सयभावो सम्मामिच्छो त्ति णादव्वो।।22।।
सो संजमं ण गिण्हदि देसजमं वा ण बंधदे आउं।
सम्मं वा मिच्छं वा परिवज्जिय मरदि णियमेण।।23।।

जैसे मिले हुए दही, गुड़ को अलग-अलग करना शक्य नहीं है उसी प्रकार मिला हुआ सम्यग्मिथ्यात्व परिणाम भी केवल सम्यक्त्व रूप से या केवल मिथ्यात्वभाव रूप से अलग-अलग व्यवस्थापित करना शक्य नहीं है। इस कारण उसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि जानना चाहिए। समीचीन और मिथ्या सम्यग्मिथ्यादृष्टि जिसके होती है वह सम्यग्मिथ्यादृष्टि है। इस व्युत्पत्ति से भी पहले ग्रहण किए हुए अतत्त्वश्रद्धान को त्यागे बिना उसके साथ तत्त्वश्रद्धान भी होता है क्योंकि उस प्रकार के कारण का सद्भाव है ।। 22।।

वह सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सकल संयम अथवा देशसंयम को ग्रहण नहीं करता; क्योंकि उनको ग्रहण करने योग्य परिणाम उसमें नहीं होते। तथा वह चारों गतियों में ले जाने का कारण जो चार आयुकर्म हैं, उनका भी बन्ध नहीं करता है। तथा मरण काल आने पर नियम से सम्यग्मिथ्यारूप परिणाम को त्यागकर असंयत सम्यग्दृष्टिपने अथवा मिथ्यादृष्टिपनेको नियम से प्राप्त करने के पश्चात् ही मरता है ।।23।।

सम्मत्तमिच्छपरिणामेसु जहिं आउगं पुरा बद्धं।
तहिं मरणं मरणंतसमुग्घादो वि य ण मिस्सम्मि।। 24।।

सम्यक्त्व परिणाम और मिथ्यात्व परिणाम में से जिस परिणाम में सम्यग्मिथ्यादृष्टिपने की प्राप्ति से पहले परभवसम्बन्धी आयुकर्म का बन्ध किया था, उसी सम्यक्त्व रूप या मिथ्यात्व रूप परिणाम में जाने पर ही जीव का मरण होता है- यह नियम है। अन्य आचार्यों के अभिप्राय से नियम नहीं है। उनके मतसे सम्यकत्व परिणाम में वर्तमान कोई जीव उसके योग्य पर भव की आयु का बन्ध करके पुनः

सम्यग्मिथ्यादृष्टि होकर पीछे सम्यक्त्व या मिथ्यात्व को प्राप्त करके मरता है। मिथ्यात्व में वर्तमान कोई जीव उसके योग्य उत्तर भवकी आयु का बन्ध करके पुनः सम्यग्दृष्टि होकर पीछे सम्यक्त्व या मिथ्यात्व को प्राप्त करके मरता है। यह कथन बद्धायुष्क के लिये है। तथा मिश्र गुणस्थान में मारणान्तिक समुद्धात भी नहीं होता है ।। 24।।

सम्मत्तदेसघादिस्सुदयादो वेदगं हवे सम्मं।
चलमलिणमगाढं तं णिच्चं कम्मक्खवणहेदू।। 25।।

आगे असंयत गुणस्थान का स्वरूप कहते हैं - अनन्तानुबन्धी कषायों का प्रशस्त उपशम नहीं होता। इसलिए उनका अप्रशस्तोपशम अथवा विसंयोजन होने पर तथा दर्शनमोहनीय के भेद मिथ्यात्व कर्म और सम्यग्मिथ्यात्व कर्म का प्रशस्त उपशम अथवा अप्रशस्त उपशम अथवा क्षय होने के सम्मुख होते और सम्यक्त्व प्रकृति रूप देशघाति स्पर्द्धकों का उदय रहते हुए ही जो तत्त्वार्थ श्रद्धान रूप सम्यक्त्व होता है, उसका नाम वेदक है। उस सम्यक्त्व प्रकृति के उदय में देशघाति स्पर्द्धकों का उदय तत्त्वार्थ के श्रद्धान को विनष्ट करने की शक्ति से शून्य होने से वह सम्यक्त्व चल, मलिन और अगाढ़ होता है। क्योंकि सम्यकत्व प्रकृति का उदय तत्त्वार्थ श्रद्धान में मल उत्पन्न करने मात्र में व्यापार करता है। इसी कारण से वह देशघाति है। इस प्रकार सम्यक्त्व प्रकृति के उदय को अनुभवन करने वाले जीव के होने वाला तत्त्वार्थ श्रद्धान वेदक सम्यक्त्व कहा जाता है। इसी का नाम क्षायोपशमिक सम्यक्त्व है, क्योंकि दर्शन मोह के सर्वघाति स्पर्द्धकों का उदयाभाव रूप क्षय होने पर देशघाती स्पर्द्धक रूप सम्यक्त्व प्रकृति का उदय होने पर और उसी के ऊपर के अनुदय प्राप्त निषेकों का सदवस्था रूप उपशम होने पर वेदक सम्यकत्व होता है। 'नित्य' विशेषण से यद्यपि वेदक सम्यक्त्व का जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है, तथापि छियासठ सागर प्रमाण स्थितिमात्र दीर्घकाल तक स्थायी होने से उत्कृष्ट विवक्षासे नित्य कहा है। नित्य से वह सदाकाल रहता है ; ऐसा अर्थ नहीं लेना चाहिए। 'कर्मक्षपणहेतु' अर्थात् वह सम्यक्त्व कर्मों के क्षपण का कारण है, इस विशेषण से यह सूचित किया है कि मोक्ष के कारण सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्ररूप परिणामों में सम्यक्त्व ही मुख्य कारण है। वेदक सम्यक्त्व के शंका आदि मल भी यथासम्भव सम्यग्क्त्व को मूल से नष्ट करने में असमर्थ सम्यक्त्व प्रकृति के उदय से उत्पन्न होते

हैं। औपशमिक और क्षायिक सम्यक्त्व में मल को उत्पन्न करने में कारण सम्यक्त्व प्रकृति के उदय का अभाव होने से निर्मलता सिद्ध है, ऐसा जानो।

चल आदिका लक्षण कहते हैं - अपने ही नाना विशेषों में अर्थात् आप्त, आगम और पदार्थ विषयक श्रद्धान के विकल्पों में चलित होता है, उसे चल कहते हैं। जैसे, अपने द्वारा कराये गये जिनबिम्ब आदि में 'यह मेरे देव है' इस प्रकार अपनेपन से और दूसरों द्वारा कराये गये जिनबिम्ब आदि में 'यह पराया है' इस प्रकार भेद करने से चल दोष कहा है। इसमें दृष्टान्त देते हैं कि नाना जल की तरंगों में जल एक ही अवस्थित है, तथापि नाना रूप से चल है। उसी तरह मोह से अर्थात् सम्यक्त्व प्रकृति के उदय से श्रद्धान भ्रमण रूप चेष्टा करता है। अब मलिन दोष को कहते हैं- जैसे मलके योग से शुद्ध स्वर्ण मलिन हो जाता है, वैसे ही सम्यक्त्व प्रकृति के उदय से अपने माहात्म्य को न पाकर मलके संग से मलिन होता है। अब अगाढ दोष को कहते हैं - स्थान अर्थात् आप्त आगम और पदार्थ श्रद्धान रूप अवस्था में ही रहते हुए भी जो काँपता है, स्थिर नहीं रहता, उसे अगाढ़ कहते हैं। जैसे, सब अर्हन्त परमेष्ठियों में अनन्त शक्तिपना समान रूप से स्थित होते हुए भी 'इस शान्तिक्रिया में शान्तिनाथ भगवान् समर्थ हैं, इस विघ्न विनाश आदि क्रिया में पार्श्वनाथ भगवान् समर्थ हैं, इत्यादि प्रकार से रुचि में शिथिलता होने से तीव्र रुचि से रहित होता है। जैसे वृद्ध पुरुष के हाथ की लकड़ी शिथिल होने से अगाढ़ होती है, वैसे ही वेदक सम्यक्त्व भी आगाढ़ होता है ।। 25।।

औपशमिक और क्षायिक सम्यकत्व की उत्पत्ति का कारण और स्वरूप

सत्तण्हं उवसमदो उवसमसम्मो खयादु खइयो य।
बिदियकसायुदपादो असंजदो होदि सम्मो हु ।। 26।।

जिसका अन्त नहीं है, उसे अनन्त कहते हैं। अनन्त अर्थात् मिथ्यात्व, उसका आश्रय पाकर जो बँधती है, वह अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ तथा मिथ्यात्व, सम्यक् मिथ्यात्व और सम्यक्त्वप्रकृति नामक तीन दर्शनमोह, इन सात प्रकृतियों के सर्वोपशम से औपशमिक सम्यक्त्व उत्पन्न होता है। तथा उन्हीं सात प्रकृतियों के क्षय से क्षायिक सम्यक्त्व होता है। ये दोनों भी सम्यक्त्व निर्मल होते हैं। इनमें शंकादि मलका लेश भी उत्पन्न नहीं होता। तथा निश्चल होते हैं; क्योंकि आप्त, आगम और पदार्थ श्रद्धान

के विकल्पों में कही भी स्खलन नहीं होता। तथा गाढ़ होते हैं ; क्योंकि आप्त आदि में तीव्र रुचि होती है। इन तीनों मलों के न होने का हेतु यह है कि इन दोनों सम्यक्त्वों में सम्यक्त्व प्रकृति के उदय का अत्यन्ताभाव है। इस प्रकार ऊपर कहे गये तीन प्रकार के सम्यक्त्वों से परिणाम सम्यग्दृष्टि दूसरी कषाय अप्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया लोभ से किसी एक कषाय का उदय होने से असंयत होता है ।। 26।।

तत्त्वार्थ श्रद्धान के ग्रहण और त्याग का अवसर

सम्माइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं तु सद्दहदि!
सद्दहदि असब्भावं अजाणमाणो गुरुणियोगा।। 27।।
सुत्तादो तं सम्मं दरिसिज्जंतं जदा ण सद्दहदि।
सो चेव हवइ मिच्छाइट्ठी जीवो तदो पहुडि।।28।।

जो जीव अर्हन्त आदि के द्वारा उपदिष्ट प्रवचन अर्थात, आप्त, आगम और पदार्थ इनकी श्रद्धा रखता है, साथ ही उनके विषयों में असद्भाव अर्थात् अतत्त्व भी स्वयं के विशेष ज्ञान से शून्य होने से, केवल गुरु के नियोग से कि जो गुरु ने कहा, वही अर्हन्त भगवान् की आज्ञा है, श्रद्धान करता है, वह भी सम्यग्दृष्टि ही है। अर्थात् अपने को विशेष ज्ञान न होने से और गुरु भी अल्पज्ञानी होने से वस्तु स्वरूप अन्यथा कहे और यह सम्यग्दृष्टि उसे ही जिनाज्ञा मानकर अतत्त्व का श्रद्धान कर ले, तब भी वह सम्यगदृष्टि ही है; क्योंकि उसने जिनाज्ञा का उल्लंघन नहीं किया ।।27।।

उक्त प्रकार से असत् अर्थका श्रद्धान करता हुआ आज्ञासम्यग्दृष्टि जीव जब अन्य कुशल आचार्यों के द्वारा पूर्व में उसके द्वारा गृहीत असत्यार्थ से विपरीत तत्त्व गणधर आदि के द्वारा कथित् सूत्रों को दिखाकर सम्यक रूप से बतलाया जावे और फिर भी दुराग्रहवश उस सत्यार्थ का श्रद्धान न करें, तो उस समय से वह जीव मिथ्यादृष्टि होता है ; क्योंकि गणधर आदि के द्वारा कथित सूत्र का श्रद्धान न करने से जिन आज्ञा का उल्लंघन सुप्रसिद्ध है। इसी कारण वह मिथ्यादृष्टि है ।। 28।।

णो इंदिएसुविरदो णो जीवे थावरे तसे वापि।
जो सद्दहदि जिणुत्तं सम्माइट्ठी अविरदो सो ।। 29।।
पच्चक्खाणुदयादो संयमभावो ण होदि णवरिं तु।
थोववदो होदि त्तदो देसवदो होदि पंचमओ।।(30)

जो इन्द्रियों के विषयों में 'नोविरत' अर्थात् विरतिरहित है, तथा स्थावर और त्रस जीव की हिंसा में भी नोविरत अर्थात त्रस-स्थावर जीव की हिंसा का त्यागी नहीं है ; केवल जिन भगवान् के द्वारा कहे हुए प्रवचन का श्रद्धान करता है, वह जीव अविरत सम्यग्दृष्टि होता है। इससे जो असंयत है, वही सम्यग्दृष्टि है इस प्रकार सामानाधिकरण्य का समर्थन किया है। 'अपि' शब्द से संवेग आदि सम्यक्त्व के गुणों को सूचित किया है। उससे अनुकम्पा भी सूचित होती है। यहाँ जो अविरत विशेषण है, वह अन्त्यदीपक होने से नीचे के गुण स्थानों में भी लगाना चाहिए। यहाँ तक सब अवरित होते हैं। 29।।

देशसंयत गुणस्थान

अन्तानुबन्धी तथा अप्रत्याख्यानावरणरूप आठ कषायों के उपशम से, और प्रत्याख्यानावरण कषायों के देशघाती स्पर्धकों के उदय होते हुए सर्वघाती स्पर्धकों के उदयभावरूप क्षय से सकल संयमरूप भाव नहीं होता। किन्तु इतना विशेष है कि स्तोकव्रतरूप देशसंयम होता है अर्थात् प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय में सकल चारित्र रूप परिणाम नहीं होता है, क्योंकि प्रत्याख्यान अर्थात् सकल संयम को जो आवरण करती है, उस कषाय को प्रत्याख्यानावरण कहते हैं। देशसंयम से युक्त जीव पंचम गुणस्थानवर्ती होता है।।(30)

जो तसवहाओ विरदो अविरदओ तह य थावरवहाओ।
एक्कसमयम्मि जीओ विरदाविरदो जिणेक्कमई ।। 31।।
संजलणणोकसायाणुदयादो संजमो हवे जम्हा।
मलजणणपमादो वि य तम्हा हु पमत्तविरदो सेा।। 32।।

वही देशसंयत विरताविरत भी कहा जाता है; क्योंकि एक ही काल में जो जीव त्रसहिंसा से विरत है, वही जीव स्थावरहिंसा से अविरत है। इस तरह जो विरत है, वही अवरित है। विषय भेद की अपेक्षा कोई विरोध न होने से 'विरताविरत' व्यपदेश के योग्य होता है। तथा 'च' शब्द से प्रयोजन के बिना स्थावर हिंसा भी नहीं करता है, ऐसा व्याख्यान करना योग्य है। उसकी रुचि एकमात्र जिन भगवान् में होने से वह जिनैकमति होता है। इससे देशसंयत्त के सम्यग्दृष्टित्व विशेषण का कथन किया है। यह विशेषण आदि दीपक है अतः आगे के भी गणुस्थानों में विशेष रूप से इसका

सम्बन्ध करना चाहिए।। 31।।

जिस कारण से संज्वलनकषाय के सर्वघाती स्पर्द्धकों का उदयभाव लक्षण रूप क्षय होने पर और बारह कषायों का तथा उदय को न प्राप्त सञ्ज्वलनकषाय और नोककषाय के निषेकों का सदवस्थारूप उपशम होने पर तथा संज्वलन और नोककषाय के देशघाती स्पद्धकों का तीव्र उदय होने पर संयम के साथ मलको उत्पन्न करने वाला प्रमाद भी उत्पन्न होता है, तिस कारण से छठे गुणस्थानवर्ती जीव को प्रमत्त और विरत अर्थात् प्रमत्तसंयत कहते हैं।

शंका-संज्वलन और नोकषायों का प्रयोजन तो विवक्षित संयम को क्षायोपशमिक रूप से उत्पन्न करना है, अर्थात् उनके क्षयोपशम से विवक्षित संयम उत्पन्न होता है; क्योंकि वे चारित्र की विरोधी हैं। यहाँ गाथाओं में उन कषायों को चारित्र का उत्पादक कैसे कहा हैं ?

समाधान-संज्वलन और नोकषाय देशघाती हैं। अतः उनमें अपने प्रतिपक्षी संयम गुण को निर्मूलन करने की शक्ति नहीं है। इससे उनका उदय रहते हुए भी अपना कार्य करने में असमर्थ है। अतः गाथा में उन्हें संयम का हेतु उपचार से कह दिया है। वास्तव में तो वे अपना कार्य ही करते हैं। वह कार्य है-मलको उत्पन्न करना। 'अपि' अवधारणा अर्थ में आया है, अतः इनसे संयम में मलको उत्पन्न करने वाला प्रमाद ही उत्पन्न होता है, इससे उसे प्रमत्तविरत कहते हैं ।। 32।।

वत्तावत्तपमादे जो वसइ पमत्त संजदो होदि।
सयलगुणसीलकलिओ महव्वई चित्तलायरणो।। 33।।
विकहा तहा कसाया इंदियणिद्दा तहेव पणयो य।
चदु चदु पणमेगेगं होंति पमादा हु पण्णरसा।। 34।।

व्यक्त अर्थात् जो स्वयं के द्वारा जानने में आवे, और अव्यक्त अर्थात् जो प्रत्यक्ष ज्ञानियों के द्वारा ही जानने योग्य हैं, ऐसे प्रमाद में जो संयत रहता है, वह चारित्र मोहनीय के क्षमोपशम के माहात्म्य से समस्त गुण और शील से युक्त महाव्रती भी होता है। यहाँ जो सकल संयमीपना और महाव्रतीपना है, वह देशसंयत की अपेक्षा जानना। इसी से प्रमत्तसंयत को चित्रलाचरण कहा। चित्र अर्थात् प्रमाद से मिले हुए रूप को जो लाता है, वह चित्रल है। और जिसका आचरण चित्रल है वह चित्रलाचरण है।

अथवा जो चित्त को लाता है, वह चित्तल है। और जिसका आचरण चित्तल है, वह चित्तलाचरण है। यह विशेष निरूक्ति भी जानना।। 33।।

प्रमादों के नाम और संख्या

संयमविरूद्ध कथाओं को विकथा कहते हैं। जो संयम गुण को 'कषन्ति' अर्थात् घातती हैं, वे कषाय हैं। समय विरोधी इन्द्रियों के व्यापार अर्थात् विषयों में प्रवृत्ति का नाम इन्द्रियाँ हैं। स्तयानगृद्धि आदि तीन कर्मों के उदय से निद्रा होती है। अथवा प्रचलाके तीव्र उदय से उत्पन्न जीव की स्व और अर्थ के सामान्य ग्रहण को, रोकनेवाली जडतारूप अवस्था को निद्रा कहते हैं। बाह्य पदार्थों में ममत्वरूप भाव प्रणय है। ये क्रम से विकथा चार कषाय चार, इन्द्रियाँ पाँच, निद्रा एक, स्नेह एक सब मिलकर प्रमाद पन्द्रह होते हैं। गाथा में आया पहला 'तथा' शब्द 'ये सब प्रमाद हैं, ऐसा साधारण ज्ञान कराने के लिए है और दूसरा 'तथा' शब्द समुच्चय के लिए है ।। 34।।

प्रमादों के प्रकारान्तर से संख्या आदि। प्रमाद के आलापकी उत्पत्ति में निमित्त अक्षसंचार के विशेष हेतु को संख्या कहते हैं। इनके स्थापना नाम प्रस्तार है। अक्षसंचारका नाम परिवर्तन है। संख्या रखकर अक्ष लाना नष्ट है। अक्ष रखकर संख्या निकालना उद्दिष्ट है। इस तरह संख्या, प्रस्तार, परिवर्तन, नष्ट तथा उद्दिष्ट ये पाँच प्रकार प्रमाद के व्याख्यान में जानना चाहिए।। 35।।

भगवान् का स्वरूप

सर्वज्ञ का स्वाधीन सुख आदि गुण

पक्खीणदिघाकम्मो अणंतवरवीरिओ अधिकतेजा।
जादो अणिंदिओ सो णाणं सोक्खं च परिणमदि।। (19) प्रवचनसार

आगे शिष्य ने प्रश्न किया कि इस आत्मा के विकार रहित स्वसंवेदन लक्षण शुद्धोपयोग के प्रभाव से सर्वज्ञपना प्राप्त होने पर इन्द्रियों के द्वारा उपयोग तथा भोग के बिना किस तरह ज्ञान और आनन्द हो सकते हैं ?

इसका उत्तर आचार्य देते हैं-

(सो) वह सर्वज्ञ आत्मा जिसका लक्षण पहले कहा है (पक्खीणघाइकम्मो) घातियाकर्मों को क्षयकर अर्थात् अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख, अनंतवीर्य इन

चतुष्टय रूप परमात्मा द्रव्य की भावना के लक्षण को रखने वाले शुद्धोपयोग के बल से ज्ञानावरणादि घातियाकर्मों को नाशकर (अणंतवरवीरियो) अंत रहित और उत्कृष्ट वीर्य को रखता हुआ। (अहियेतेजो) व अतिशय तेज को धरता हुआ अर्थात् केवलज्ञान केवलदर्शन को प्राप्त हुआ (अणिंदियो) अतीन्द्रिय अर्थात् इन्द्रियों के विषयों के व्यापार से रहित (जादो) हो गया (च) तथा ऐसा होकर (णाणं) केवलज्ञान को (सोक्खं) और अनंतसुख को (परिणमदि) परिणमन करता है।

इस व्याख्यान में यह कहा है कि आत्मा यद्यपि निश्चय से अनंतज्ञान और अनंतसुख के स्वभाव को रखने वाला है तो भी व्यवहार से संसार की अवस्था में पड़ा हुआ है, जब इसका केवलज्ञान और अनंतसुख स्वभाव कर्मों से ढका हुआ है, तब तक पाँच इन्द्रियों के आधार से कुछ अल्पज्ञान व कुछ अल्पसुख में परिणमन करता है। फिर जब कभी विकल्प रहित स्व-सम्वेदन या निश्चय आत्मानुभव के बल से कर्मों का अभाव होता है, तब क्षयोपशम ज्ञान के अभाव होने पर इन्द्रियों के व्यापार नहीं होते हैं, उस समय अपने ही अतीन्द्रिय ज्ञान और सुख को अनुभव करता है, क्योंकि स्वभाव के प्रगट होने में पर की अपेक्षा नहीं है, ऐसा अभिप्राय है।

समीक्षा - स्वभावतः प्रत्येक जीव अनंतज्ञान, अनंतसुख,अनंतवीर्यादि अनंत गुणों का अखण्ड पिण्ड है तथापि कर्मों के आवरण के कारण वे गुण आत्मा में ही सुप्तरूप में छिपे हुए हैं। कुन्दकुन्द देव ने समयसार में कहा भी है-

सो सव्वणाणदरसी कम्मरयेण णियएणवच्छण्णो।
संसारसमावण्णो णवि जाणदि सव्वदो सव्वं।। (67)

वह सर्वज्ञ, सर्वदर्शी जीव कर्मरज से आवृत होकर संसार में पतित हुआ है और सर्वदा सबको नहीं जनता है परन्तु जब वही कर्मरज रूपी आवरण हट जाता है तब वह सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, अनंतसुख एवं अनंतवीर्य सम्पन्न बन जाता है इसलिए वस्तुतः ज्ञान या सुख, पर से प्राप्त नहीं होता है परन्तु सहज आत्मोत्थ है। केवली (अरहंत सिद्ध भगवान्) के सुख का वर्णन पूज्यपाद स्वामी ने सिद्धभक्ति में निम्न प्रकार किया है-

आत्मोपादानसिद्धं, स्वयमतिशयवद्वीतबाधं विशालं,
वृद्धिह्रासव्यपेतं, विषयविरहितं, निःप्रतिद्वन्द्व भावम्।

अन्यद्रव्यानपेक्षं निरूपममभितं शाश्वतं सर्वकालं,
उत्कृष्टानन्तसारं, परमसुखमतस्तस्य सिद्धस्यजातम्।। (7)

सिद्ध का सुख (1) आत्मा से ही उत्पन्न होता है। (2) वह सुख स्वयं अतिशय युक्त होता है। (3) समस्त बाधाओं से रहित होता है। (4) अत्यन्त विशाल व विस्तीर्ण होता है। (5) वृद्धि एवं ह्रास से रहित (6) इन्द्रिय विषयों से रहित स्वभाविक होता है (7) दुःख रूप विरोधी धर्म से सदा रहित है। (8) अन्य बाह्य निमित्त या सामग्रियों की अपेक्षा से रहित है। (9) उपमा रहित है। (10) अनंत है (11) विनाश रहित है इसलिये सदा बना रहता है। (12) उस सुख का महात्म्य सर्वोत्कृष्ट है और वह अनंतकाल तक रहता है। (13) इन्द्रादिक के सुख से भी बढ़कर है इसलिए कर्मों के सर्वथा नाश होने से वह सिद्ध भगवान् के ही होता है।

नार्थःक्षुत्तृट्विनाशाद् विविधरसयुतैरन्नपानैरशुच्या।
नास्पृष्टेर्गन्धमाल्यै र्न हि मृदुशयनै, ग्लानिनिद्राद्यभावात्।।
आतंकार्तेरभावे, तदुपशमनसद्भेषजानर्थतावद्।
दीपानर्थक्यवद्वा व्यपगततिमिरे, दृश्यमाने समस्ते ।। (8)

सिद्ध भगवान् के क्षुधा और तृष्णा के नाश हो जाने से अनेक प्रकार के रसयुक्त अन्न तथा पान से कोई प्रयोजन नहीं है। अशुचि अर्थात् अपवित्र पदार्थों के स्पर्श नहीं होने से सुगंधित पदार्थों से प्रयोजन नहीं है। ग्लानि और निद्रादि के नहीं होने से कोमल शय्या से भी प्रयोजन नहीं, रोग की पीड़ा के अभाव होने के कारण उस रोग को दूर करने के साधन रूप औषधि भी व्यर्थ है, जैसे कि समस्त दिखाई देने वाले अन्धकार के चले जाने पर दीप की कोई आवश्यकता नहीं रहती।

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्।
उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम्।। (27) गीता पृ. 76)

जिसका मन भलीभाँति शांत हुआ है, जिसके विकार शांत हो गये हैं, ऐसा ब्रह्ममय हुआ निष्पाप योगी अवश्य उत्तम सुख प्राप्त करता है।

यञ्जुन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते। (28)

आत्मा के साथ निरन्तर अनुसंधान करते हुए पाप-रहित हुआ यह योगी सरलता से ब्रह्मप्राप्ति-रूप अनंत सुख का अनुभव करता है।

स्वयंवेदन सुव्यक्तस्तनुमात्रो निरत्ययः।

अत्यंतसौख्यवानात्मा लोकालोकविलोकनः।। (21 इष्टोपदेश)

यह आत्मा आत्म-अनुभव द्वारा स्पष्ट प्रगट होता है यानि-जना जाता है, वह शरीर के बराबर है, अविनाशी है- कभी इसका नाश नहीं होता। अनन्तसुख वाला है ऊर्ध्व, मध्य, पाताल का यानि समस्त जगत् का तथा जगत् के बाहर अनन्त अलोकाकाश जानने-देखने वाला है।

सामग्रीविशेष विश्लेषिताखिलावरणमतीन्द्रियमशेषतो मुख्यम्। (11)

(प्रमेयरत्नमाला)

सामग्री की विशेषता से दूर हो गये हैं समस्त आवरण जिसके, ऐसे अतीन्द्रिय और पूर्णतया विशद ज्ञान को मुख्य प्रत्यक्ष कहते हैं।

ऐश्वर्यमप्रतिहतं सहजो विरागस्तृप्तिर्निसर्गजनिता वशितेन्द्रियेषु।

आत्यान्तिकं सुखमनावरणा च शक्तिर्ज्ञानं च सर्वविषयं भगवंस्तथैवा।। पृ. 102

तथा सन्यासियों के गुरु अवधूत के भी वचन उसके विषय में इस प्रकार है-

हे भगवान्! आपका ऐश्वर्य अप्रतिहत (अखण्ड) है, वैराग्य स्वाभाविक है, तृप्ति नैसर्गिक है, इन्द्रियों में वशिता है अर्थात् आप जितेन्द्रिय हैं, आपका सुख आत्यान्तिक अर्थात् चरम सीमा को प्राप्त है शक्ति आवरण रहित है और सर्व विषयों को साक्षात् करने वाला ज्ञान भी आपका ही है।

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः। (पतञ्जली योगदर्शन)

अविद्या, अस्मिता, राग,द्वेष तथा अभिनिवेशरूप क्लेशों से, शुभाशुभकृतियों से जन्य पुण्य पाप रूप कर्मों से, पुण्य-पाप के फल-जाति, आयु तथा भोग प्रतिनिधि सुख दुःख रूप विपाक से और सुख-दुःखात्मक भोग से जन्य विविध वासनाओं से अस्पष्ट, जीवरूप अन्य पुरुषों से विशिष्ट, चेतन ईश्वर है।

सत्वपुरुषान्यताख्यातिमात्रस्य सर्वभावधिष्ठातृत्वं सर्वज्ञातृत्वं च। (49)

पुरुष (आत्मा) एवं प्रकृति (कर्म) के भेदज्ञान से सम्पन्न योगी को सम्पूर्ण

पदार्थों के अधिष्ठातृत्व (अर्थात् सम्पूर्ण पदार्थों के नियन्त्रित करने के सामर्थ्य का) और समस्त पदार्थों के ज्ञातृत्व का (अर्थात् सम्पूर्ण पदार्थों को ठीक-ठाक जान लेने की शक्ति का) लाभ होता है।

तद्वैराग्यादपि दोषबीजक्षये कैवल्यम्। (50)

विवेक ख्याति की निष्ठा द्वारा, विवेक ख्यातिजन्य सिद्धिविषयक परम वैराग्य की प्राप्ति हो जाने से, पर वैराग्यजन्य असम्प्रज्ञात समाधि द्वारा, रागादि दोषों के मूल कारण अविद्या के समाप्त हो जाने पर पुरुष को कैवल्य भी प्राप्त हो जाता है।

सत्त्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यम। (55)

बुद्धि एवं पुरुष की शुद्धि के समान रूप से हो जाने पर मोक्ष हो जाता है।

जिघच्छा परमा रोगा, संखारा परमा दुखा।

एवं ञत्वा यथाभूतं निब्बानं परमं सुखं।। (धम्मपद 7)

भूख सबसे बड़ा रोग है, संस्कार सबसे बड़े दुःख हैं, इसे यथार्थ (रूप से) जानकर निर्वाण सबसे बड़ा सुख है।

केवली के शारीरिक सुख दुःख नहीं

सोक्खं वा गुण दुक्खं केवलणाणिस्स णास्थि देहगदं।

जम्हा अदिंदियत्तं जादं तम्हा दु तं णेयं (20) (प्र.सा.)

आगे कहते है कि अतीन्द्रियपना होने से ही केवलज्ञानी के शरीर के आधार से उत्पन्न होने वाला भोजनादि का सुख तथा क्षुधा आदि का दुःख नहीं होता है (पुण) तथा (केवलणाणिस्स) केवलज्ञानी के (देहगदं) देह से होने वाला अर्थात् शरीर के आधार में रहने वाली जिह्वा इन्द्रिय आदि के द्वारा पैदा होने वाला (सोक्खं) सुख (वा दुक्खं) और दुःख अर्थात् असातावेदनीय आदि के उदय से पैदा होने वाला क्षुधा आदि का दुःख (णत्थि) नहीं होता है। (जम्हा) क्योंकि (अदिंदियत्तं) अतीन्द्रियपना अर्थात् मोहनीय आदि घातिया कर्मों के अभाव होने पर पाँचों इन्द्रियों के विषय सुख के लिए व्यापार का अभावपना ऐसा अतीन्द्रियपना (जाद) प्रगट हो गया है (तम्हा) इसीलिए (तं दु) वह अर्थात् अतीन्द्रियपना होने के कारण से अतीन्द्रिय ज्ञान और अतीन्द्रिय सुख तो (णेयं) जानना चाहिए।

भाव यह है कि जैसे लोहे के पिंड की संगति को न पाकर अग्नि हथौड़े की चोट नहीं सह सहती है तैसे यह आत्मा भी लोहपिंड के समान इन्द्रियग्रामों का अभाव होने से अर्थात् इन्द्रियजनित ज्ञान के बन्द होने से सांसारिक सुख तथा दुःख का अनुभव नहीं करता है।

यहाँ किसी ने कहा है कि केवलज्ञानी के भोजन है। क्योंकि औदारिक शरीर की सत्ता है तथा असाता वेदनीय कर्म के उदय का सद्भाव है, जैसे हम लोगों के भोजन होता है। इसका खंडन करते हैं कि श्री केवलीभगवान् के औदरिक शरीर नहीं है किन्तु परम औदारिक शरीर है, जैसे कि कहा है-

अर्थात् दोष-रहित केवलज्ञानी के शुद्ध स्फटिक मणि के समान परमतेजस्वी तथा सात धातु से रहित शरीर होता है। और जो यह कहा है कि असातावेदनीय के उदय के सद्भाव से केवली के भूख लगती है और वे भोजन करते हैं सो भी ठीक नहीं है, क्योंकि धान्य जौ आदि धान्य का बीज, जलादि सहकारी कारण सहित होने पर ही अंकुर आदि कार्य को उत्पन्न करता है तैसे ही असाता वेदनीय कर्म मोहनीय कर्मरूप सहकारी कारण के साथ ही क्षुधा आदि कार्य को उत्पन्न करता है, क्योंकि कहा है 'मोहस्स बलेण घाददे जीवं' वेदनीय कर्म मोह के बल को पाकर जीव को घात करता है। यदि मोहनीय कर्म के अभाव होने पर भी असातावेदनीय कर्म क्षुधा आदि परिषह को उत्पन्न कर दे तो वध रोग आदि परीषह भी उत्पन्न हो जावे सो ऐसा होता नहीं है क्योंकि कहा है 'भुक्त्युपसर्गाभावात्' केवली के भोजन व उपसर्ग नहीं होते और भी दोष यह आता है कि यदि केवली को क्षुधा की बाधा है, तब क्षुधा के कारण शक्तिक्षीण होने से अनन्तवीर्य नहीं बनेगा। तैसे ही क्षुधा द्वारा जो दुःखी होगा उसके अनन्त सुख भी नहीं हो सकेगा तथा रसना इन्द्रिय द्वारा ज्ञान में परिणमन करते हुए मतिज्ञानी के केवलज्ञान का होना भी सम्भव न होगा अथवा और भी हेतु है। असातावेदनयीय के उदय की अपेक्षा केवली के सातावेदनीय का उदय अनन्तगुणा है। इस कारण से जैसे शक्कर के ढेर में नीम का कण अपना असर नहीं दिखलाता है वैसे अनन्तगुणे सातावेदनयीय के उदय में असातावेदनीय का असर नहीं प्रगट होता तैसे ही और भी बाधक हेतु हैं। जैसे प्रमत्तसंयमी आदि साधुओं के वेद का उदय रहते हुए भी मन्द-मोह के उदय से अखण्ड ब्रह्मचारियों के स्त्री परिषह की बाधा नहीं होती है तथा-नव-

ग्रैवेयक आदि के अहमिन्द्रों के वेद का उदय होते हुए भी मन्दमोह के उदय से स्त्री-सेवन सम्बन्धी बाधा नहीं होती है, तैसे ही श्री केवली अरहंत के असातावेदनीय का उदय होते हुए भी सम्पूर्ण स्नेह का अभाव होने से क्षुधा की बाधा नहीं हो सकती है। मैं घटकों अपने आपके द्वारा जानता हूँ। यहाँ पर 'अहं' पद कर्त्ता है, 'घट' कर्म है, 'आत्मना' पद करण है और 'वेद्मि' यह क्रिया है। जैसे जानने वाला पुरुष अपने आपके द्वारा घटको जानता है, वैसे ही अपने आपको भी जानता है।

प्रदीपवत्। (12)

दीपक के समान। जिस प्रकार दीपक की प्रकाशता और प्रत्यक्षता को स्वीकार किये बिना उससे प्रतिभासित हुए घटादिक पदार्थ की प्रकाशता और प्रत्यक्षता सम्भव नहीं है उसी प्रकार यदि प्रमाणस्वरूप ज्ञान की भी प्रत्यक्षता न मानी जाय, तो उसके द्वारा प्रतिभासित पदार्थ की भी प्रत्यक्षता माननी सम्भव नहीं है। अतः दीपक के समान ज्ञान की भी स्वयं प्रकाशता और प्रत्यक्षता माननी चाहिए। यहाँ यह तात्पर्य है - ज्ञान अपने आपके प्रतिभास करने अर्थात् जानने में अपने से अतिरिक्त (भिन्न) सजातीय अन्य पदार्थों की अपेक्षा से रहित है, क्योंकि पदार्थ को प्रत्यक्ष करने के गुण से युक्त होकर अदृष्ट-अनुयायी करनेवाला है, जैसे दीपक का भासुराकार। नियम सार में अमृतचन्द्र सूरि ने कहा है-

'यथावद्वस्तुनिर्णीतिः सम्यग्ज्ञानं प्रदीपवत्।
तत्स्वार्थव्यवसायात्म कथंचित् प्रतिमेः पृथक।।

यथार्थ रूप से वस्तु का निर्णय होना सम्यग्ज्ञान है, वह प्रदीप के समान स्व और पर अर्थ का निश्चय कराने वाला है, तथा प्रमिति- जानने रूप क्रिया से कथंचित् भिन्न है।'

जदि सव्वमेव णाणं णाणा-रूवेहि संठिदं एक्कं।
तो ण वि किं पि विणेयं विणा कहं णाणं।। (247)

यदि सब वस्तु ज्ञानरूप ही है और एक ज्ञान ही नाना पदार्थों के रूप में स्थित है तो ज्ञेय कुछ भी नहीं रहा। ऐसी स्थिति में बिना ज्ञेय के ज्ञान कैसे रह सकता है ?

अथ सर्वमेव ज्ञानमेकं ज्ञानद्वैतं नानारूपेण घटपटादिपदार्थमन्तरेण

घटपटादिज्ञानरूपेण संस्थितं यदि चेत् तो तर्हि किमपि ज्ञेयं ज्ञेयपदार्थवृन्दं घटपटादिलक्षणं नैव नास्येव। भवतु नाम ज्ञेयेन पदार्थेन किं भवेदिति चेत् ज्ञेयेन विना ज्ञातुं योग्येन गृहगिरिभूमिजलाग्निवातादिना विना तेषां गृहघटादीनां ज्ञानं कथं सिद्धयति तदो णेय परमत्थं ततः ज्ञेयमन्तरेण ज्ञानानुत्पतेः परमार्थभूतं ज्ञेय अंगीकर्तव्यम्।

ज्ञानाद्वैतवादी बाह्य घट, पट आदि पदार्थों को असत् मानता है और एक ज्ञान को ही सत् मानना है। उसका कहना है कि अनादि वासना के कारण हमें बाहर में ये पदार्थ दिखाई देते हैं। किन्तु वे वैसे ही असत्य हैं जैसे स्वप्न में दिखाई देने वाली बातें असत्य होती हैं। इस पर आचार्य का कहना है कि यदि सब ज्ञानरूप ही तो ज्ञेय तो कुछ भी नहीं रहा और जब ज्ञेय ही नहीं है तो बिना ज्ञेय के ज्ञान कैसे रह सकता है, क्योंकि जो जानता है उसे ज्ञान कहते हैं और जो जाना जाता है उसे ज्ञेय कहते हैं। जब जानने के लिये कोई है ही नहीं तो ज्ञान कैसे हो सकता हैं ?

घट-पड-जड-दव्वाणि हि णेय-सरूवाणि सुप्पसिद्धाणि।
णाणं जाणेदि जदो अप्पादो भिण्णरूवाणि।।(248)

घट पट आदि जड़ द्रव्य ज्ञये रूप से सुप्रसिद्ध हैं। उनको ज्ञान जानता है। अतः ज्ञान से वे भिन्न रूप हैं।

जं सव्व-लोय-सिद्धं देहं-गेहादि-बाहिरं अत्थं।
जो तं पि णाण मण्णादि ण मुणदि सो णाण-णामं पि।। (249)

जो शरीर मकान वगैरह बाह्य पदार्थ समस्त लोक में प्रसिद्ध है उनको भी जो ज्ञानरूप मानता है वह ज्ञान का नाम भी नहीं जानता।

ज्ञान त्रिकाल की अवस्थाओं को जानता

तक्कालिगेव सव्वे सदसब्भूदा हि पज्जया तासिं।
वट्ठन्ते ते णाणे विसेसदो दव्वजादीणं।। (37)

अन्न प्ब्छत्ड्न्त्च्ळत्ब्फ, भ्ट्ज्ल्ज्फ्ळ गफ्छ गघ्ल्ज्फ्ळ ब्ङ गन्न ळण्ब्ल्ज ळहभ्ज्ल ब्ङ ल्ध्ल्ळाफ्च्ज्ल, गळाफ्छ ज्ल्ल्ज्फ्ळत्न्ह(य्ज्ङ्न्ज्च्ळज्छ) त्फ ळाण्ज धफ्ब्न्ज्छञ्ज, गल त्ङ त्फ ळाण्ज भ्ट्ज्ल्ज्फ्ळ.

आगे कहते हैं कि आत्मा के वर्तमान ज्ञान में अतीत और अनागत पर्यायें

वर्तमान के समान दिखती हैं-

(तासि दव्वजादीणं) उन प्रसिद्ध शुद्ध जीव द्रव्यों की व अन्य द्रव्यों की (ते) वे पूर्वोक्त(सव्वे) सर्व (सदसब्भूदा) सद्भूत और असद्भूत अर्थात् वर्तमान, भूत तथा भविष्यकाल की (पज्जया) पर्यायें (हि) निश्चय से या स्पष्ट रूप से (णाणे) केवलज्ञान में (विसेसदो) विशेष करके अर्थात् अपने-अपने प्रदेश, काल, आकार भेदों के साथ संकर, व्यतिकर दोष के बिना (तक्कालिगेव) वर्तमान पर्यायों के समान (वट्टंते) वर्तती हैं अर्थात् प्रतिभासती हैं या स्फुरायमान होती हैं।

भाव वह है कि जैसे छद्मस्थ अल्पज्ञानी मति श्रुतज्ञानी पुरुष के भी अंतरंग में मन से विचारते हुए पदार्थों की भूत और भविष्य पर्यायें प्रगट होती हैं अथवा जैसे चित्रमयी भींत पर बाहुबली भरत आदि के भूतकाल के रूप तथा श्रेणिक तीर्थकर आदि भावीकाल के रूप वर्तमान के समान प्रत्यक्ष रूप से दिखाई पड़ते हैं तैसे भींत के चित्र समान केवलीज्ञान में भूत और भावी अवस्थाएं भी एक साथ प्रत्यक्ष रूप से दिखाई पड़ती हैं इसमें कोई विरोध नहीं है। तथा जैसे यह केवली भगवान् पर द्रव्यों की पर्यायों को उनके ज्ञानाकार मात्र से जानते हैं, तन्मय होकर नहीं जानते हैं, परन्तु निश्चय करके केवलज्ञान आदि गुणों का आधारभूत अपनी ही सिद्ध पर्याय को ही स्वसंवेदन या स्वानुभव रूप से तन्मयी हो जानते हैं, तैसे निकट भव्य जीव को भी उचित है कि अन्य द्रव्यों का ज्ञान रखते हुए भी अपने शुद्ध आत्म द्रव्य की सम्यक् श्रद्धान, ज्ञान तथा चारित्र रूप निश्चयरत्नत्रयमयी अवस्था को ही सर्व तरह से तन्मय होकर जाने तथा अनुभव करे, यह तात्पर्य है।

समीक्षा - त्रैकालिक पर्यायों का समूहभूत द्रव्य है। किसी न किसी समय में द्रव्य किसी न किसी अवस्था में रहेगा ही। ऋजुसूत्र नय की अपेक्षा द्रव्य में एक समय में एक ही पर्याय रहती है। भूत एवं भावी पर्यायें वर्तमान द्रव्य में प्राग्भाव एवं प्रध्वंसाभाव रूप में रहती है। केवलज्ञान विशुद्ध, निरपेक्ष, प्रत्यक्ष, अनंतानंत ज्ञान प्रतिच्छेद से युक्त होने के कारण वह केवलज्ञान वर्तमान पर्याय के माध्यम से भूत एवं भविष्यत् पर्यायों को भी जान लेता है। एक लौकिक उदाहरण से प्रस्तुत इस महान् गूढ रहस्य का विशदकरण कर रहा हूँ। जैसे-अल्पज्ञ (छद्मस्थ) व्यक्ति एक किशोर को देखकर अपने क्षयोपशमिक ज्ञान से यह अनुमान लगाता है कि यह किशोर पहले माता

के गर्भ में था, जन्म लेकर शिशु से बढ़ता-बढ़ता किशोर हुआ है। एवं यह आयुक्रम से बढ़ता हुआ, युवक, प्रौढ़, वृद्ध होकर मृत्यु को भी प्राप्त करेगा। यदि इसकी आयु कम है तो यह युवक, प्रौढ़, वृद्ध बने या न बने पर निश्चित रूप से मृत्यु को प्राप्त करेगा और भी एक उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ-रोटी को देखकर हमें पहले यह ज्ञान होता है कि पहले गेहूँ को खेत में बोया गया था, फिर अंकुर होकर पौधा बनकर गेहूँ आया तथा पका हुआ उस गेहूँ को काटछाँट कर गेहूँ को अलग किया गया, पश्चात गेहूँ को(पीसकर) रोटी बनाई गई यह हुआ भूत से वर्तमान का ज्ञान। वह अनुमान से जानता है कि यदि कोई इसको भक्षण करेगा तो यह रूधिर रूप में परिवर्तित होगी और यदि कोई भक्षण नहीं करेगा तो सड़-गल जायेगी। छद्मस्थ व्यक्ति अल्पज्ञ होने के कारण द्रव्य की कुछ पर्यायों को जान सकता है परन्तु सर्वज्ञ अनंत ज्ञानी होने से सम्पूर्ण द्रव्य की सम्पूर्ण पर्यायों को जानते हैं। दिगम्बर महाश्रमण आचार्य उमास्वामी ने कहा भी है-

मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्व पर्यायेषु अ.1, तत्त्वार्थ सूत्र (26)

मति ज्ञान और श्रुतज्ञान की प्रवृति कुछ पर्यायों से युक्त सब द्रव्यों में होती है।

रूपिष्वधेः। (27) अ.1

अवधि ज्ञान की प्रवृत्ति रूपी पदार्थों में होती है।

तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य। (28)

मनः पर्ययज्ञान की प्रवृत्ति अवधिज्ञान के विषय के अनन्तवें भाग में होती है।

सर्वद्रव्य पर्यायेषु केवलस्य (29)

केवल की प्रवृत्ति सब द्रव्य और उनकी सब पर्यायों में होती हैं। कालिकाल सर्वज्ञ, तार्किक चूडामणि, बहुभाषा विद् 'महाप्रज्ञ' वीरसेन स्वामी ने जयधवला तथा धवला में इस सिद्धान्त का वर्णन बहुत ही तर्कसबद्ध आगामोक्त रूप में किया है-

असहाय ज्ञान को केवलज्ञान कहते हैं, क्योंकि वह इन्द्रिय, प्रकाश और मनस्कार अर्थात् मनो व्यापार की अपेक्षा से रहित होता है।

शंका - केवलज्ञान आत्मा के सहायता से होता है, इसलिए उसे केवल अर्थात् असहाय नहीं कह सकते हैं ?

समाधान - नहीं, क्योंकि ज्ञान से भिन्न आत्मा नहीं पाया जाता है, इसलिए केवलज्ञान को अर्थात् असहाय कहने में कोई आपत्ति नहीं है।

शंका- केवलज्ञान अर्थ की सहायता लेकर प्रवृत्त होता है, इसलिये उसे केवल अर्थात् असहाय नहीं कह सकते हैं ?

समाधान- नहीं, क्योकि नष्ट हुए अतीत पदार्थों में और उत्पन्न न हुए अनागत पदार्थों में भी केवलज्ञान की प्रवृत्ति पाई जाती है, इसलिये केवलज्ञान अर्थ की सहायता से होता है यह नहीं कहा जा सकता है।

शंका- यदि विनष्ट और अनुत्पन्न रूप से असत् पदार्थ में केवलज्ञान की प्रवृत्ति होती है तो खर विषाण में भी उसकी प्रवृत्ति होओ?

समाधान- नहीं, क्योंकि खर विषाण का जिस प्रकार वर्तमान में सत्त्व नहीं पाया जाता है उसी प्रकार उस का भूत शक्ति और भविष्यत् शक्ति रूप से भी सत्त्व नहीं पाया जाता है अर्थात् जैसे वर्तमान पदार्थ में उसकी अतीत पर्यायें, जो कि पहले हो चुकी हैं, भूत शक्ति रूप से विद्यमान हैं और अनागत पर्यायें, जो कि आगे होनेवाली हैं, भविष्यत् शक्ति रूप से विद्यमान हैं उस तरह खर विषाण-गधे का सींग यदि पहले कभी हो चुका होता तो भूत शक्ति रूप से उसकी सत्ता किसी पदार्थ में विद्यमान होती अथवा वह आगे होने वाला होता तो भविष्यत् शक्ति रूप से उसकी सत्ता किसी पदार्थ में विद्यमान रहती। किन्तु खर-विषाण न तो कभी हुआ है और न कभी होगा अतः उस में केवलज्ञान की प्रवृत्ति नहीं होती है।

शंका- जबकि अर्थ में भूत पर्यायें और भविष्यत् पर्याय भी शक्ति रूप से विद्यमान रहती है तो केवल वर्तमान पर्यायों को ही अर्थ क्यों कहा जाता हैं ?

समाधान - नहीं क्योंकि जो जाना जाता है उसे अर्थ कहते हैं इस व्युत्पत्ति के अनुसार वर्तमान पर्यायों में ही अर्थपना पाया जाता है।

शंका - यह व्युत्पत्त्यर्थ अनागत और अतीत पर्यायों में भी समान है अर्थात् जिस प्रकार पूर्व में कही गई व्युत्पति के अनुसार वर्तमान पर्यायों में अर्थपना पाया जाता है उसी प्रकार अनागत और अतीत पर्यायों में भी अर्थपना संभव हैं ?

समाधान - नहीं, क्योंकि अनागात और अतीत पर्यायों का ग्रहण वर्तमान अर्थ के ग्रहण पूर्वक होता है। अर्थात् अतीत और अनागात पर्यायों भूत शक्ति और भविष्यत् शक्ति रूप से वर्तमान अर्थ में ही विद्यमान रहती हैं। अतः उनका ग्रहण वर्तमान अर्थ के ग्रहणपूर्वक ही हो सकता है, इसलिये उन्हें 'अर्थ' यह संज्ञा नहीं दी जा सकती हैं। अथवा केवलज्ञान आत्मा और अर्थ से अतिरिक्त किसी इन्द्रियादिक सहायक की अपेक्षा से रहित है इसलिये भी वह केवल अर्थात् असहाय हैं। इस प्रकार केवल अर्थात् असहाय जो ज्ञान है उसे केवलज्ञान समझना चाहिए। **जय धवला, पु. 1 21 वीरसेनाचार्य**

केवलणाणं णाम, सव्व दव्वाणि अदीदाणागय-वट्टमाणाणि सपज्जयाणि पच्चक्खं जाणदि।। धवला, पु. 1 पृ. 95

जो अतीत, अनागत और वर्तमान पर्यायों सहित सम्पूर्ण द्रव्यों को प्रत्यक्ष जानता है उसे केवलज्ञान कहते हैं।

नमः श्री वर्द्धमानाय निर्धूत कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते।। (1) श्रावकाचार

जिनकी आत्मा ने कर्म रूप कलङ्क को नष्ट कर दिया है अर्थात् जो वीतराग है, अथवा जिनकी आत्मा ने हितोपदेश देकर अन्य आत्माओं-जीवों को कर्म कलङ्क से रहित किया है अर्थात् जो हितोपदेशी हैं और जिनका केवलज्ञान अलोक सहित तीनों लोकों के विषय में दर्पण के समान आचरण करता है अर्थात् जो सर्वज्ञ हैं उन अन्तिम तीर्थंकर श्रीवर्द्धमान स्वामी को अथवा अनन्त चतुष्टय रूप लक्ष्मी से वृद्धि को प्राप्त होने वाले चौबीस तीर्थंकरों को नमस्कार करता हूँ।

असद्भूत पर्यायों को भी ज्ञान जानता

जदि पच्चक्खमजादं पज्जायं पलयिदं च णाणस्स।
ण हवदि वा तं णाणं दिव्वं त्ति हि के परूवेंति।। (39)

[illegible]

आगे इसी बात को दृढ़ करते हैं कि असद्भूत पर्यायें ज्ञान में प्रत्यक्ष हैं- (जदि) यदि (अजादं) अनुत्पन्न जो अभी पैदा नहीं हुई है ऐसी भावी (च पलइयं) तथा जो चली गई ऐसी भूत (पज्जायं) पर्याय (णाणस्स) केवलज्ञान के (पच्चक्खं) प्रत्यक्ष (णहवदि) न हो (वा) तो (तं णाणं) उस ज्ञान को (दिव्वत्ति) दिव्य अर्थात् अलौकिक अतिशय रूप (हि) निश्चय से (के) कौन (परूवंत्ति) कहें ? अर्थात कोई भी न कहें। भाव यह है कि यदि वर्तमान पर्याय की तरह भूत और भावी पर्याय को केवलज्ञान क्रमरूप इन्द्रियज्ञान के विधान से रहित हो साक्षात् प्रत्यक्ष न करे तो वह ज्ञान दिव्य न होवे। वस्तु स्वरूप की अपेक्षा विचार करें तो वह शुद्ध ज्ञान भी न होवे। जैसे यह केवली भगवान् परद्रव्य व उसकी पर्यायों को यद्यपि ज्ञानमात्रपने से जानते हैं तथापि निश्चय करके सहज ही आनंदमयी एक स्वभाव के धारी अपने शुद्ध तन्मयीपने से ज्ञान क्रिया करते है तैसे निर्मल विवेकी मनुष्य भी यद्यपि व्यवहार से परद्रव्य और उसके गुण पर्याय का ज्ञान करते हैं तथापि निश्चय से विकार रहित स्वसंवेदन पर्याय में अपना विषय रखने से उसी पर्याय का ही ज्ञान या अनुभव करते हैं यह सूत्र का तात्पर्य है।

समीक्षा - इस गाथा के पहले-पहले आचार्य कुंदकुद ने केवलज्ञान की अलौकिकता, विशिष्टता, दिव्यता, अनंतशक्ति सम्पन्नता, त्रिकालज्ञता, प्रत्यक्षता का वर्णन आगमोक्त सर्तक रूप से करने के बाद यहाँ प्रश्नात्मक रूप से उसको ही दृढ़ीकरण किया है। उनका प्रश्नात्मक रूप में उत्तर देना यह है कि यदि इन्द्रियज्ञान परोक्षज्ञान, क्षायोपशमिक ज्ञान के समान केवल भी कुछ निश्चित पर्यायों द्रव्यों को जानेगा और भावी एवं भूत पर्यायों को समग्रता से नहीं जानेगा तो केवलज्ञानी, दिव्यज्ञानी कैसे होगा ? अर्थात् ऐसा ज्ञान दिव्यज्ञान या केवलज्ञान नहीं हो सकता है इसलिये केवलज्ञान निश्चय से समस्त ज्ञेय एवं उनकी समस्त पर्यायों को जानता है।

पापसम पुण्य व मोक्षप्रद पुण्य

(पापानुबन्धी पुण्य से परे मैं आत्मोपलब्धि हेतुक पुण्य करूँ।)

(धन-नाम-मानादि हेतु किया गया पुण्य संसार भ्रमण के कारण अतः यह पुण्य पाप के सम त्याजनीय है)

- आचार्य कनकनदी

(चालः- मन रे ! तू काहे... सायोनारा...)

जिया रे ! तू सातिशय पुण्य करो !
पापानुबन्धी पुण्य से परे...पुण्यानुबन्धी-पुण्य करो ऽऽऽ (ध्रुव)

सम्यग्दृष्टेः पुण्यं न भवति संसारकारणं नियमात्।
मोक्षस्य भवति हेतुः यदि चि निदानं न स करोति।। (भावसंग्रह 404)
अकृत निदान सम्यग्दृष्टि पुण्यं कृत्वा ज्ञानचरणस्यः।
उत्पद्यते दिविलोके शुभपरिणामः सुलेश्योऽपि ।। (405)

निदान रहित व श्रद्धा-प्रज्ञा युक्त... करो तू शुभपरिणाम ऽऽऽ
शुभलेश्यायुक्त आर्त्त-रौद्र मुक्त...करो तू ध्यान व अध्ययन ऽऽऽ
ख्याति-पूजा-लाभ से शून्य ऽऽऽ (जिया) (1)

अन्यथा तेरे सभी धार्मिक कार्य...तप त्याग व ध्यान-अध्ययन ऽऽऽ
धर्म प्रभावना से होंगे पापानुबन्धी पुण्य... जो होते हैं संसार कारण ऽऽऽ
भले मिले कुदेवादि में जन्म ऽऽऽ(जिया) (2)

धन के हेतु या प्रसिद्धि हेतु...अथवा भोगोपभोग निमित्त ऽऽऽ
इहलोक/(या) परलोक हेतु निदान ...सभी से होता आत्मपतन ऽऽऽ
न मिले उत्तम देव में भी जन्म ऽऽऽ (जिया)(3)

जिस कार्य में ऐसा होता है निदान...उस से भी रहो तू माध्यस्थ ऽऽऽ
अन्यथा पाप बंध तुझे भी होगा...नवकोटि से होता पाप बन्ध ऽऽऽ
अनावश्यक न करो पापबन्ध ऽऽऽ(जिया)(4)

पंचम/(कलि) काल में प्रायः धार्मिक काम...पूजा-आराधना-विधान-प्रतिष्ठा ऽऽऽ
तीर्थयात्रा से ले प्रवचन-वर्षायोग...सभी में होती धन-नाम की कामना ऽऽ
ये तो साक्षात् निदान की भावना ऽऽऽ(जिया)(5)

तूझे न चाहिए धन-नाम-निर्माण...ढोंग-पाखण्ड व आडम्बर ऽऽऽ
माईक मंच व पत्रिका होर्डिंग ....गाजे बाजे व भीड़-प्रदर्शन ऽऽऽ
तुझे चाहिए समता-शान्ति-ध्यान ऽऽऽ(जिया) (6)

अन्धानुकरण (पर) प्रतिस्पर्द्धा त्यज...अन्य से न करो स्व-मूल्यांकन ऽऽऽ
तेरा मूल्यांकन स्व-आत्मवैभव से करो ...तुझ में अनन्त ज्ञान-सुख-वीर्य ऽऽऽ
'कनक' तू सब-वैभव हेतु करो पुण्य ऽऽऽ(जिया) (7)

ओबरी 17.01.2018 रात्रि 07:56
(यह कविता आर्यिका सुवत्सलमती माताजी के कारण भी बनी।)

सन्दर्भ :-

शुभः शुभानुबन्धीति बन्धच्छेदाय जायते।
पारंपर्येण यो बन्धः स प्रबन्धाद्विधीयते ।। 54।। (धर्मरत्नाकर)

अर्थ - शुभ भाव से शुभानबन्धी होता है और शुभानुबन्धी परंपरा से बन्ध छेद के लिये कारण हो जाता है। इसलिए शुभानुबन्धी कर्म को प्रचुर रूप से करना चाहिये।

विशेषार्थ : शरीर में काँटा घुसने के बाद उस काँटे को निकालने के लिये एक सुदृढ़ काँटा चाहिये, शरीर स्थित काँटे को जब तक नहीं निकालते तब तक इस सुदृढ़ काँटे की परम आवश्यकता है। शरीर स्थित काँटा निकालने के बाद उस सुदृढ़ काँटे के समान है। उस पाप कर्म को निकालने के लिये एक कांटा की आवश्यकता स्वयमेव नहीं रहती, उसी प्रकार कर्म देह स्थित सुदृढ़ पुण्यरूपी काँटा चाहिये, पापरूपी काँटा निकालने के बाद पुण्यरूपी काँटे की आवश्यकता स्वयंमेव हट जाती है। जैसे - मलिन वस्तु के सम्पर्क से वस्त्र अस्वच्छ हो जाता है। उस अस्वच्छता को हटाने के लिए पानी, साबुन, टिनोपॉल चाहिये। पानी और साबुन के प्रयोग से जब

वस्त्र स्वच्छ हो जाता है तब उस वस्त्र पर लगे हुए साबुन को स्वच्छ पानी से धोकर निकाल देते हैं। वस्त्र स्वच्छ होने के बाद उसको टीनोपॉल में डालकर चमकाते हैं। वस्त्र से साबुन और पानी अलग वस्तु है (परद्रव्य है)। तो भी बिना पानी और साबुन से मलिन वस्त्र स्वच्छ नहीं होता है। परन्तु स्वच्छ होने के बाद साबुन और पानी की आवश्यकता नहीं रहती है। मलिन अवस्था में टीनोपॉल वस्त्र को लगाने पर उसमें चमक नहीं आ सकती है। इसी प्रकार आत्मा को स्वच्छ करने के लिए शुभभावरूपी पानी और पुण्यरूपी साबुन चाहिये। इसके माध्यम से मलिन पापात्मा का पवित्र पुण्यात्मा होने के बाद शुक्लध्यानरूपी टीनोपॉल से उसको केवलज्ञान रूपी प्रकाश से चमकाना चाहिये। जब तक आत्मा को शुभ भाव और पुण्य से स्वच्छ नहीं करते तब तक शुक्लध्यान रूपी टीनोपॉल का किसी प्रकार परिणाम नहीं हो सकता है। वस्त्र स्वच्छ होने के बाद उस वस्त्र में स्थित पानी को भी निकाल देते हैं। इसी प्रकार अयोग केवली 14वें गुणस्थान की अवस्था में व्युपरत क्रियानिवृत्तिरूपी परम शुक्ल ध्यान से पुण्यरूपी कण को भी सुखाकर पृथक् करना चाहिये तब जाकर आत्मा निरंजन निष्कलंक होता है।

अहो पुण्यवन्ता पुंसां कष्टं चापि सुखायते।
तस्माद्भव्यैः प्रयत्नेन कार्य पुण्यं जिनोदितः।।

अर्थ : अहो आश्चर्य की बात है कि पुण्यवान के लिये कष्ट भी सुखकर हो जाता है, इसलिए हे भव्य ! जिनेन्द्र भगवान् द्वारा प्रतिपादित पुण्य को तुम प्रयत्नपूर्वक करो।

यस्य पुण्यं च पापं च निष्फलं गलति स्वयम्।
स योगी तस्य निर्वाणं तस्य पुनरास्रवः।। 246।।

अर्थ : जिनका कर्म उदय में आकर भी बिना फल दिये खिर जाता है वह योगी है। वह परम वीतरागी होता है। परम वीतरागी मुनि उग्र तप के माध्यम से भविष्य में उदय आने योग्य कर्म को जला देता है। उसी प्रकार मुनीश्वरों को नवीन आस्रव या बन्ध नहीं होता है। उस परम वीतरागी मुनीश्वरों का पाप एवं पुण्य स्वयमेव निष्फल होकर खिर जाते हैं और उनको नवीन कर्मास्रव बन्ध नहीं होता है। उन्हीं को परम निर्वाण की प्राप्ति होती है।

असुहाण पयडीणं अणंत भागा रस्सस खंडाणि।
सुहपयडीणं णियमा णत्थि त्ति रसस्स खण्डाणि।। 80।।

अर्थ : अप्रशस्त अर्थात् पाप प्रकृतियों के अनंत बहुभाग का घात नियम से नहीं होता है क्योंकि विशुद्धि के कारण प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होता है परन्तु घात नहीं होता है। तथा विशुद्धि के कारण पाप प्रकृतियों का अनुभाग उत्तरोत्तर ह्रास को प्राप्त होता है परन्तु वृद्धि को प्राप्त नहीं होता है।

पढमापुव्वरसादो चरिमे समये पसत्थइदराणं।
रससतमणंत गुण अणंतगुण हीणयं होदि।। 82।।

अर्थ : अपूर्व करण में प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि होने के कारण प्रशस्त प्रकृतियों का अनंतगुणा बढ़ता अनुभाग सत्व है। तथा विशुद्धि के कारण अनुभाग काण्डक घात के महत्व से अप्रशस्त प्रकृतियों का अनन्तवाँ भाग सत्व चरम समय में होता है। इस प्रकार अधःकरण के प्रथम समय संबंधी प्रशस्त प्रकृतियों का जो अनुभाग सत्व है उससे अधःकरण के चरम समय में प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग सत्व अपूर्वकरण के प्रथम समय में जितना है उससे अनंतगुणा हीन अपूर्णकरण के चरम समय में है।

इससे सिद्ध होता है कि आत्म विशुद्धि से पुण्य कर्म चौदहवाँ गुणस्थान के नीचे नाश नहीं होते हैं परंतु वृद्धि को प्राप्त होते हैं। तथा पाप कर्म आत्म विशुद्धि से नाश होता है किन्तु वृद्धि को प्राप्त नहीं होता है। (लब्धि सार)

विशेषार्थ : चतुर्थ गुणस्थान से आगे उत्तरोत्तर पापकर्म का संवर और निर्जरा की वृद्धि हो जाती है और पुण्य कर्म का आस्रव और बन्ध उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होता है। इस प्रकार क्रिया सकषाय गुणस्थान तक (10वें गुणस्थान तक) चलती रहती है। क्षीणकषाय आदि गुणस्थान में पुण्यास्रव होता है फिर भी बन्ध नहीं होता है परन्तु पुण्य कर्म तेरहवें गुणस्थान तक नष्ट नहीं होता है किन्तु बढ़ता ही रहता है। परन्तु परम योगी शैलेश अवस्था को प्राप्त अयोगी केवली गुणस्थान के चरम समय और द्विचरम समय में संपूर्ण पुण्य और पाप कर्मों का समूल विनाश हो जाता है। पाप प्रकृति की यथायोग्य द्वितीयादि गुणस्थान में संवर एवं निर्जरा होती है। परन्तु विशिष्ट पुण्य कर्मों का सवंर निर्जरा 14वें गुणस्थान के नीचे होती नहीं है। परंतु उत्तरोत्तर

गुणस्थान में अनुभाग शक्ति बढ़ती जाती है। परन्तु परिनिर्वाण के पूर्ववर्ती समय में संपूर्ण कर्म नष्ट हो जाते हैं।

किनके पुण्य हेय ?

पुण्णेण होइ विहवो विहवेण होई मइं-मोहो।
मइ मोहेण य पाव ता पुण्णं अम्ह मा होउ ।। 60।।

अर्थ : पुण्य से घर में धन होता है और धन से अभिमान, मान से बुद्धि भ्रम होता है। बुद्धि में भ्रम होने से (अविवेक से) पाप होता है। इसलिये ऐसा पुण्य हमारा न हो।

''सत्यं वाचि मतौ श्रुतं हदि दया शौर्य भुजे विक्रमे।
लक्ष्मीर्दानमनूनर्थिनिचये मार्गे गतिनिर्वृतेः।।
प्राग्जनीहं तेऽपि निरहंकाराःश्रुतेर्गोचराश्चित्रं संप्रति।
लेशतोऽपि न गुणास्तेषां तथाप्युद्धताः ।। 60।।

भेदाभेद रत्नत्रय की आराधना से रहित देखें, सुने अनुभवे भोगों की वांछारूप निदान बन्ध के परिणामों से सहित जो मिथ्यादृष्टि संसारी अज्ञानी जीव है। उससे पहले उपार्जन किये भोगों की वांछारूप पुण्य उसके फल से प्राप्त हुई घर के सम्पदा होने से अभिमान (घमंड) होता है, अभिमान से बुद्धि भ्रष्ट होती है, बुद्धि भ्रष्टकर पाप कमाता है और पाप से भव-भव में अनंत दुःख पाता है। इसलिये मिथ्यादृष्टियों का पुण्य, पाप का ही कारण है। जो सम्यक्त्वादिगुणसहित भरत, राम, पाण्डवादिक विवेकी जीव है उनको पुण्य बन्ध अभिमान उत्पन्न नहीं करता, परंपरा से मोक्ष का कारण है। जैसे-अज्ञानियों को पुण्य का फल विभूति गर्व कारण है ; वैसे सम्यग्दृष्टि के नहीं हैं। सम्यग्दृष्टि पुण्य के पात्र हुये चक्रवर्ती आदि की विभूति पाकर मद अहंकार आदि विकल्पों को छोड़कर मोक्ष को गये अर्थात् सम्यग्दृष्टि जीव चक्रवर्ती बलभद्र पद में भी निरहंकार रहे। ऐसा ही कथन आत्मानुशासन ग्रंथ में भी गुणभद्राचार्य ने किया है कि पहले समय में ऐसे सत्पुरुष हो गये हैं जिनके वचन में सत्य बुद्धि में शास्त्र मन में दया, पराक्रम रूप भुजाओं में शूरवीरता याचकों को पूर्ण लक्ष्मी का दान और मोक्षमार्ग में गमन है। वे निराभिमानी हुये जिनको किसी गुण का अहंकार नहीं हुआ। उसके नाम शास्त्रों में प्रसिद्ध है। परन्तु अब बड़ा अचम्भा है कि इस पंचमकाल में लेश मात्र

भी गुण नहीं है तो भी उद्धतपना है, यानि गुण तो रंच मात्र भी नहीं और अभिमान में बुद्धि रहती है (परमात्म प्रकाश)

पाप भी उपादेय है।

वर जिय पावइँ सुन्दरइँ णावई ताई भणंत्ति।
जीवहँ दुक्खइँ जाणिवि लहु सिवमई जाई कुणति।। 56।।

अर्थ : आगे जिस पाप के फल से यह जीव नरकादि में दुःख पाकर उस दुःख को दूर करने के लिये सन्मुख होता है, वह पाप का फल भी श्रेष्ठ (प्रशंसा योग्य) है। ऐसा दिखलाते हैं।

हे जीव! जो पाप के उदय से जीव को दुःख देकर शीघ्र ही मोक्ष के जाने योग्य उपायों में बुद्धिकर दे तो वे पाप भी बहुत अच्छे है, ज्ञानी ऐसा कहते हैं।

कोई जीव पाप करके नरक में गया वहाँ पर महान् दुःख भोग उससे कोई समय किसी भी जीव के सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जाती है क्योंकि उस जगह सम्यक्त्व की प्राप्ति के तीन कारण है। पहला तो यह है कि तीसरे नरक तक देवता उसे संबोधन को (चेतावने को) जाते हैं। कभी कोई जीव को धर्म सुनने से सम्यक्त्व उत्पन्न हो जावे, दूसरा कारण पूर्व भव का स्मरण और तीसरा नरक की पीड़ाकारी दुःख से दुःखी होना, नरक को महान् दुःख का स्थान जानकर नरक के कारण जो हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह और आरम्भादिक है उनको खराब जान के पाप से उदास होना।

तीसरे नरक तक ये तीन कारण हैं। आगे के चौथे, पाँचवें,छठवे, सातवें नरक में देवों का गमन न होने से धर्मश्रवण तो है ही नहीं लेकिन जाति स्मरण है तथा वेदना कर दुःख के पाप से भयभीत होना वे दो ही कारण हैं। इन कारणों को पाकर किसी जीव के सम्यक्त्व उत्पन्न हो सकता है। इस नय से कोई भव्य जीव पाप के उदय से खोटी गति में गया वहाँ जाकर यदि सुलट जावे तथा सम्यक्त्व पावे तो वह कुगति भी श्रेष्ठ है। यही योगीन्द्राचार्य ने मूल में कहा है जो पाप जीवों को दुःख प्राप्त करा करके फिर शीघ्र ही मोक्षमार्ग में बुद्धि को लगावें, तो वे अशुभ भी अच्छे हैं तथा जो अज्ञानी जीव किसी समय अज्ञान तप से देव भी हुआ और देव से मरकर एकेन्द्रिय हुआ तो

वह देवपना किस काम का ? अज्ञानी का देवपना भी वृथा है। जो कभी ज्ञान के प्रसाद से उत्कृष्ट देव हो के बहुत काल तक सुख भोग के देव से मनुष्य होकर मुनिव्रत धारण करके मोक्ष को पावे तो वह भी अच्छा है।

ज्ञानी पुरुष उन पापियों को भी श्रेष्ठ कहते हैं, जो पाप के प्रभाव से दुःख भोगकर उस दुःख से डर के दुःख के मूल कारण पाप को जानके उस पाप से उदास होवे, वे प्रशंसा करके योग्य हैं और पापी जीव प्रशंसा के योग्य नहीं है। क्योंकि पाप क्रिया हमेशा निंदनीय है। भेदाभेदरत्नत्रय स्वरूप श्री वीतराग देव के धर्म को जो धारण करते हैं वे श्रेष्ठ हैं। यदि सुखी धारण करे तो भी ठीक और दुःखी धारण करते हैं तब भी ठीक, क्योंकि शास्त्र का वचन है कि कोई महाभाग दुःख हुए ही धर्म में लवलीन होते हैं। (परमात्म प्रकाश)

दुःख में सुमिरन सब करै, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे, दुःख काहे को होय।।

अर्थ : साधारण संसारी जीव दुःख के समय में धर्म का आचरण करता है। परन्तु धर्म के कारण किंचित् सुख प्राप्त होने से धर्म को ही भूल जाता है। पापादिक क्रियाओं में लग जाता है, तब पुनः दुःख प्राप्त होता है। यदि जीव सुख के समय में भी धर्म आचरण करने लगेगा तो कभी भी दुःख नहीं होगा।

कृत्वा धर्मविघातं विषयासुखान्यनुभवन्ति ये मोहात्।
आच्छिद्य तरुन् मूलात् फलानि गृह्णन्ति ते पापः।। 24।।

अर्थ : जो मोही कामअंधा, विषयासक्त, जीव अज्ञानता से धर्म को नष्ट करके विषय सुखों का अनुभव करते हैं वे पापी वृक्ष को जड़ से उखाड़कर फल को ग्रहण करना चाहते हैं अर्थात् पूर्व पुण्य कर्म के उदय से जो कुछ वैभव मिला है उस वैभव में लीन होकर जो केवल भोगासक्त होता है वह पूर्व उपार्जित पुण्य को पूर्णरूप से भोग करता है। परन्तु नवीन पुण्यार्जन नहीं करता जिससे पाप ही उसके पल्ले में रहता है। उससे वह नरक निगोद में जाता है। इसलिये पूर्वार्जित पुण्य से वैभव मिला उसको बिना त्यागे भोग करने से उस पुण्य से उसकी दुर्गति हुई इस प्रकार से पुण्य हेय हैं। (आत्मानुशासन)

मिथ्यादृष्टि को पापानुबन्धी पुण्य से जो वैभव की प्राप्ति होती है उस वैभव में मिथ्यादृष्टि लीन होकर असक्ति पूर्वक भोग करता है किन्तु त्याग नहीं करता उसका वैभव अर्थात् पुण्य फल संसार का कारण है। इसलिये उसका पुण्य कर्म परंपरा से मोक्ष का कारण नहीं है। किन्तु संसार का कारण होता है अर्थात् पुण्य फल रूप वैभव को प्राप्त कर जो आसक्ति पूर्वक भोगता है वह मिथ्यादृष्टि है। रागी बहिरात्मा है। सम्यग्दृष्टि का पुण्य ही पुण्यानुबंधी पुण्य है, सम्यग्दृष्टि पुण्यरूप वैभव को प्राप्त कर उसमें आसक्ति पूर्वक लीन नहीं होता है। वह सोचता है, जानता है, मानता है कि वैभव मेरे आत्म स्वरूप से पृथक् है पुण्य कर्म का फल है कुछ चारित्र कर्म के उदय से आत्मिक शक्ति अभाव से रोगी जैसे तिक्त औषध सेवन करता है। अनासक्तपूर्वक उसी प्रकार वह सम्यग्दृष्टि भोग को रोग मानकर निरूपाय होकर अनासक्तपूर्वक भोगता है। वह अनासक्तपूर्वक भोगते हुए कर्म को बाँधता ही है परन्तु जितने अंश में अनासक्त भाव है उतने अंश में कर्म बंध नहीं होता है। परंतु अंतरंग में सतत भोगों की निंदा गर्हा करते हुए उन भोगों से छूटने के लिए रास्ता ढूँढता रहता है।

जब तक जीव सम्पूर्ण भोग, आरंभ, परिग्रहों से विरक्त नहीं हो पाता है तब तक स्वशक्ति के अनुसार दान, पूजा,गुरु सेवादि करते हुए पूर्व पुण्य का सदुपयोग करता है और अंत में समस्त अंतरंग-बहिरंग परिग्रह को त्याग कर निग्रर्थं होकर व्यवहार-निश्चय रत्नत्रय का साधन कर मोक्ष पदवी को प्राप्त करता है। इसलिये सम्यग्दृष्टि का पुण्य परंपरा से मोक्ष का कारण है तथा मिथ्यादृष्टि का पुण्य परंपरा से संसार का कारण है।

''आर्त नरा धर्मपरा भवन्ति'' पाप कर्म के उदय से जीव को जब कष्ट उठाना पड़ता है उस सयम में वह पाप कर्मों का स्वरूप समझकर पाप से निवृत्त होकर धर्म में लगता है। जैसे नरक में तीव्र वेदना का अनुभव कर नारकी पाप फलों का चिंतवन करके सम्यग्दृष्टि हो जाता है, इसी प्रकार जीव पापकर्म के फल से संतप्त होकर पाप से डरकर अधर्म छोड़कर धर्म करने लगता है। इसलिये संसार में विरक्त होने के लिये एवं धर्म में प्रवृत्ति होने के लिये पापकर्म भी निमित्त है अर्थात् जिस पाप फल से दुःखों से, संताप से, संकटों से जीव भयभीत होकर धर्म में लगते हैं वह पाप भी उपादेय है। इसलिये भव्य जीवों को संबोधन करते हुए आचार्यों ने प्रेरणा दी है।

''सुखितस्य दुःखितस्य च संसारे धर्म एव तव कार्य।
सुखितस्यतद्भिवृद्धर्यैदुःखभुजस्तदुपघाताय।। 18।।''

अर्थ : हे जीव! तू चाहे सुख का अनुभव कर रहा हो, चाहे दुःख का अनुभव कर रहा हो, किन्तु संसार में इन दोनों ही अवस्था में एक मात्र कार्य धर्म ही होना चाहिये। कारण यह है कि वह धर्म यदि तू सुख का अनुभव कर रहा है तो तेरे उस सुख का कारण होगा और यदि तू दुःख का अनुभव कर रहा है तो वह धर्म तेरे उस दुःख के विनाश का कारण होगा।

ध्यान अवस्था

अप्रमत्तविरत गुणस्थान : मोक्षमार्ग का पाथिक जब मोक्षमार्ग के विपरीत जो अंतरंग-बहिरंग परिग्रह उसका त्याग करके मोक्षमार्ग पर अग्रसर होता है। अनादिकालीन संस्कार एवं अनभ्यास के कारण जो कुछ आत्म-ध्यान के लिये बाधक कारणरूपी प्रमाद है उसको सतत ज्ञान वैराग्य रूपी शस्त्र द्वारा नष्ट करके स्वयं में लीन-स्थिर हो जाता है उसको ध्यान कहते हैं। उस आत्मस्थ अवस्था विशेष को अप्रमत्त विरत गुणस्थान कहते हैं।

जिस समय में मोक्षमार्गस्थ ज्ञानी समस्त प्रमादों को नष्ट करके व्रत-गुण-शील से मंडित होकर ध्यान में लीन होता है, परन्तु उपशम या क्षपक श्रेणी आरोहण नहीं किया है उस समय में अप्रमत्त विरत आत्मावास्था होती है। अनादिकालीन संस्कारं के कारण ज्ञानी मुनि ध्यानावास्था में सतत स्थिर नहीं है, इसलिये वह ध्यानावस्था से च्युत होकर प्रमत्त विरत अवस्था को प्राप्त होता है। पुनः शक्ति का संचय कर अप्रमत्त अवस्था को प्राप्त होकर के ध्यानलीन हो जाता है। इस प्रकार वह हजारों बार छट्ठवे से सातवें गुणस्थान में आता जाता रहता है। उत्तम संहनधारी क्षायिक सम्गदृष्टि महामुनि उपशम श्रेणी एवं क्षपककरण श्रेणी दोनों श्रेणी का आरोहण करते हैं। परन्तु उपशम श्रेणी वाले अन्तर्मुहूर्त काल पूर्ण होने पर एवं क्रोधादि अन्यत्तर कषायों के उदय से ग्याहरवें गुणस्थान से नीचे गिरकर यथायोग्य गुणस्थान को प्राप्त कर लेते हैं। और वज्रवृषभनाराचसंहनन धारी क्षायिक सम्यगदृष्टि तद्भवमोक्षगामी चरमशरीरी महामुनि जब क्षपक श्रेणी अरोहण करते हैं तब सातिशय सातवें गुणस्थान से निरालम्ब शुक्लध्यान को ध्याते हैं।

अप्रमत्त गुणस्थान में धर्म ध्यान होता है वहाँ पर सालम्ब और निरालंब धर्मध्यान की मुख्यता है। उससे पूर्ववर्ती गुणस्थानों में छठ्ठवे, पाँचवें, चौथे में गौणरूप से धर्मध्यान होता है। धर्मध्यान उत्तरवर्ती गुणस्थानों में अर्थात् आठवें नवमें दसवें गुणस्थानों में भी होता है। इन गुणस्थानों में महामुनि समस्त प्रमाद से रहित होकर बाह्य क्रियाओं से विरत होकर निरंतर ध्यान में स्थिर होने के कारण उसके बाह्य आवश्यकादि क्रियाओं का परिहर हो जाता है। इसके पहले-पहले आवश्यक आदि क्रियाओं का पालन करना अनिवार्य हो जाता है।

स्व-हित-अहितपूर्वक होता पर हित-अहित

(जो जैसे होते वे वैसे ही पाते)

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल:- छोटी - छोटी गैया ...)

पर हित पूर्वक स्वहित भी होता...पर अहित पूर्वक स्व-अहित होता।
पर प्रकाशी पूर्व स्व प्रकाशी होता...यह सर्वत्र भी अभिहित होता।।

जो दीपक पहले ना होता प्रकाशित...वह न कर सकता अन्य को प्रकाशित
स्व पर प्रकाशी होता है दीपक...ऐसा ही सिद्धान्त भी होता सर्वत्र।
जो दया दान परोपकार करते...वे स्वयं को पहले उपकृत करते।
जो इस से विपरीत भी करते...वे स्व को पूर्व अपकृत करते।।

तथाहि जो अन्य को क्षमा करते...वे पहले स्व को क्षमा करते।
जो मोह क्षोभ से सहित होते...वे अन्य को न क्षमा कर सकते।
जो अन्य को ठगना भी चाहते...वे पहले स्व को भी ठग लेते।
अन्य को ठगने के भाव होते ही...स्वयं का पतन वे कर लेते।।

ऐसा ही हर भाव-व्यवहार-कथन...अच्छे बुरे या जो भी करते।
कृत-कारित व अनुमत आदि से...स्वयं का (ही) पहले अच्छा बुरा करते
ये हैं परम कर्म सिद्धान्त सर्वत्र...मनोविज्ञान व कार्य कारण सूत्र।
जैसा बोओगे वैसा ही पाओगे...भाव से भावी। (भाग्य) होते निर्माण।।

धूआँ से न होता है यथा प्रकाश...दुर्गन्ध से न फैलता कभी सुवास
अज्ञानी मोही व दंभी कामी स्वार्थी...न जानते सत्यासत्य हिताहित।
जिन्हें न होता है सही ज्ञान...वे न सीखा सकते हैं सही ज्ञान।
जिन्हें न होता है आत्मविश्वास...वे न कर सकते आत्म गौरव।।

जिन्हें न होता है आत्मगौरव...वे करते दीन-हीन-अहंभाव।
लाखों अन्धे भी नहीं देखते सूर्य...इस में स्वयं दोषी न दोषी सूर्य।
जो होते हैं दोषों से सहित...अन्य के गुण दीखे दोष युक्त।
लाल-काला-हरा-पीला देखते...यथा चश्मा के ग्लास में रंग होते।।

अज्ञानी मोही स्वार्थी जो जन होते...उन्हें ज्ञान वैराग्यादि बुरे लगते।
उन्हें तो चाहिए धन-मान व नाम...निस्पृह-वितरागता न होता भाव।
पुण्य भी होता है स्वयं के हेतु...पाप भी होता है स्वयं के हेतु।
भगवान् तो शुद्ध-बुद्ध-सम्पूर्ण...उन्हें न चाहिए अन्य के पूजा-दान।।

परम आध्यात्मिक अनुभव से ही...उक्त रहस्य ज्ञात (होते) प्रज्ञा से ही
केवल रूढि-मत-पंथ-पढाई से...ज्ञात न होगा केवल बुद्धि से।
प्रखर प्रज्ञा-श्रद्धा व अनुभुति से ...समता-शान्ति व सत्यग्राहिता से
सत्य-तथ्य व हित सत्य का होता ज्ञान...'कनकनंदी' मान्य उपर्युक्त नियम।।
ओबरी 19.01.2018 मध्याह्न 1.46

संदर्भ :-

अज्ञानोपास्तिज्ञानं ज्ञानं ज्ञानिसमाश्रयः।
ददाति यत्तु यस्यास्ति सुप्रसिद्धमिदं वच। (23)

[illegible]

'ज्ञानमेव फलं ज्ञाने, ननु श्लाघ्यमनश्वरम्।
अहोमोहस्य महात्म्यमन्यपदप्यत्र मृग्येते।।' (175)

पुनः शिष्य अपनी जिज्ञासा प्रकट करता है कि हे गुरु भगवान्! आत्मा की

उपासना क्या है और उसकी उपासना क्यों की जा रही हैं। क्योंकि जो विवेकवान होते है उनकी प्रवृत्ति बिना प्रयोजन से नहीं होती है। इसके उत्तर में आचार्य श्री उत्तर देते हैं कि-

अज्ञानी की उपासना से अज्ञान की उपलब्धि होती हैं और ज्ञानी की उपासना से ज्ञान की उपलब्धि होती है क्योंकि जिसके पास जो वस्तु होती है वही वस्तु वह दूसरों को दे सकता है अन्य को नहीं। जिसकी देहादि में मूढ़ बुद्धि है, संदिग्ध गुरु या देव है उसकी सेवा करने से मूढ़ बुद्धि की ही प्राप्ति होगी। जो आत्म स्वभावरूप ज्ञान से सम्पन्न है ऐसे गुरु या देव की सेवा करने पर ज्ञान की प्राप्ति होगी। मोह, भ्रम, संदेह से युक्त ज्ञान को अज्ञान कहते हैं। स्व आत्मा के बोध को ज्ञान कहते हैं। पूर्वाचार्यों ने कहा भी है :

ज्ञान की उपासना से पूज्यनीय प्रशंसनीय ऐसे शाश्वतिक ज्ञान की उपलब्धि होती है परंतु खेद की बात है कि मोह के प्रभाव से यह जीव ज्ञान को छोड़कर अन्य सांसारिक क्षणभंगुर वस्तु की खोज करता है।

आचार्य श्री विषय के स्पष्टीकरण के लिए उदाहरण देते है कि संसार में भी देखने में आता है कि जिसके अधीन जो वस्तु होती है या जिसका सेवन जो करता है वही वस्तु को दूसरों को दे सकता है। इसलिये हे भद्र! तुम ज्ञान की उपासना करो क्योंकि उसकी उपासना से स्व-पर विवेक रूपी ज्योति प्राप्त करोगे। परम् शुद्ध निश्चय स्व-शुद्ध आत्मा की उपासना आत्मा के माध्यम से ही करो।

भक्त जब भगवान् के पास जाता है या उनका ध्यान करता है तब वह भगवान् के स्वरूप रूपी दर्पण से अपने स्वरूप का दर्शन करता है। जब वह द्रव्य दृष्टि से स्वयं को एवं भगवान् को देखता है तब दोनों में कोई अन्तर दृष्टि गोचर नहीं होता है क्योंकि पूज्य भी जीव द्रव्य है तथा पूजक भी जीव द्रव्य है गुण-दृष्टि से भी कोई विशेष अन्तर परिलक्षित नही होता है किन्तु जब पर्याय-दृष्टि से अवलोकन करता है तब दोनों में महान् अन्तर परिलक्षित होता है। क्योंकि भगवान् पर्याय दृष्टि से अनंत ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य के अक्षय भण्डार है एवं पूजक स्वयं अनंत अज्ञान, दुःखादि को भोगने वाला है।

अंग्रेजी में एक नीति वाक्य है

फ्रज्य्ज त्ल फ्ब छत्इइज्य्ज्फच्ज घ्ज्ळष्ज्ज्फ ऋब्छ ग्फछ व्ल.

ऑव्ळ ळण्ज्य्ज त्ल ल्ब छत्इइज्य्ज्फच्ज घ्ज्ळष्ज्ज्फ ऋब्छ ग्फछ व्ल.

अर्थात द्रव्य दृष्टि से भगवान् और हमारे में कोई अन्तर नहीं है किन्तु अवस्था दृष्टि (पर्याय दृष्टि) से भगवान् और हमारे में कोई समान्तर (समानता) नहीं है। भक्त, भगवान् के पास एक अलौकिक उपादेय प्रशस्त स्वार्थ को लेकर जाता है। उसका स्वार्थ यह है कि मेरा स्वरूप भगवत् स्वरूप होते हुये भी मैं अपने दीन हीन भिखारी के समान हूँ। मैं भगवान् के पास से उनसे वही शिक्षा प्राप्त करूँ जिस मार्ग पर चलते हुये भगवान् ने इस परमोत्कृष्ट नित्यानन्द अवस्था को प्राप्त किया है, इसलिये भक्त की आद्यन्त भावना एवं परिणती निम्न प्रकार की होती है-

'दासो ऽहं' रटता प्रभो! आया जब तुम पास,
'द' दर्शन हट गयो, सोऽहं रहो प्रकाश।
सोऽहं सोऽहं ध्यावतो रहन सको सकार,
दीप अहं मय हो गयो अविनाशी अविकार।।

जब भक्त भगवान् के पास आता है, तब वह स्वयं को दास (पूजक) एवं भगवान् को प्रभु (पूज्य) मानता है। जब भगवान् का दर्शन करके भगवान् का स्वरूप एवं अपने स्वरूप का तुलनात्मक विश्लेषण करता है जब वह पूज्य के गुणों का अनुकरण करके आध्यात्मिक साधना करता है तो उस साधना के फलस्वरूप निर्विकल्प अवस्था को प्राप्त करता है तब सोऽहं रूप विकल्प भी विलय हो जाता है, तब अहं रूप अविनाशी, अविकार स्वरूप को प्राप्त कर लेता है। यह ही पूजा का परमोत्कृष्ट फल है। आचार्य प्रवर उपास्वामी ने कहा है- 'वन्दे तद्गुण लब्धये' अर्थात् मैं वीतराग, सर्वज्ञ, हितोपदेशी भगवान् के उनके गुणों की प्राप्ति के लिये वन्दना करता हूँ। पूजा, वन्दना, अर्चना,विनय, समर्पित भाव में ऐसी एक शक्ति है जिससे पूजक के मन में पूज्य के गुण संचार करते रहते हैं तथा धीरे-धीरे पूजक भी पूज्य बन जाता है। विद्वत्वर्य श्री आशाधरजीने 'अध्यात्म रहस्य' के मंगलाचरण में कहा है-

भव्येभ्यो भजमानेभ्यो यो ददाति निजपदम्।
तस्मै श्री वीरनाथाय नमः श्री गौतमाय च।।

(उपशम से क्रोध का हनन करे, मुदृता से मान को जीते, ऋजु भाव से माया को और सन्तोष से लोभ को जीते।)

जो भगवान् भव्यों को भक्ति में अनुरक्त भव्य जीवों को अपना पद प्रदान करते हैं- जिनके भजन, पूजन, आराधना से भव्य प्राणियों को उन जैसे पद की प्राप्ति होती है- उन श्री वीर स्वामी को अक्षय ज्ञान-लक्ष्मी एवं भारत विभूति रूप श्री से सम्पन्न भगवान् महावीर को तथा गौतम स्वामी को नमस्कार हो।

वीतराग सर्वज्ञ भगवान् के पास जो गुण होते हैं वे ही गुण पूजक को प्राप्त होते हैं। भगवान् के पास स्वस्वरूप को छोड़कर और कुछ उनके पास है ही नहीं, इसलिये वे भक्त को स्वस्वरूप ही दे देते हैं।

भिन्नात्मानमुपास्यात्मा परो भवति तादृशः।
वर्त्तिर्दीपं यथोपास्यं भिन्ना भवति तादृशि।।

अपने आत्मा से भिन्न अर्हन्त, सिद्ध परमात्मा की उपासना, आराधना करके आत्मा उनके समान परमात्मा बन जाता है। जैसे-दीपक से भिन्न बत्ती, दीपक की उपासना करके यानी-साथ रहकर दीपक के समान प्रकाशमान बन जाती है।

येन भावेन तद्रूपं ध्यायेतमात्मानमात्मवित्।
तेन तन्मयता याति सोपाधिः स्फटिको यथा।।

जिस भाव से जिस प्रकार यह आत्मा का ध्यान करता है उस स्वरूप हो जाता है जैसे-स्फटिकमणि विभिन्न रंगों के सम्पर्क से उस वर्ण रूप परिणमन करता है।

परिणमते येनात्मा भावेन स तेन तन्मयो भवति।
अर्हत्ध्यानाविष्ठो भर्वार्हन्, स्यात् स्वयं तस्मात्।।

यह आत्मा जिस भाव से परिणमन करता है वह उस स्वरूप हो जाता है। अर्हत के ध्यान सहित ध्याता स्वयं अर्हंत् रूप हो जाता है।

अच्छी भावना-कल्पना से महान् उपलब्धि

- आचार्य कनकनन्दी

(चालः- दुनिया में रहना है तो..., सायोनारा...)

कल्पना करो हे! जिया कल्पना करो...अच्छी कल्पना ही सदा ही करो
अच्छी कल्पना से अच्छा बनोगे, बुरी कल्पना से बुरा बनोगे।।

जैसा बोओगे वैसा पाओगे, आम बोने से आम पाओगे।
नीम बोने से नीम पाओगे, भावानुसार भावी में बनोगे।। (1)
तर्क से आगे भी होती कल्पना, यांत्रिक शक्ति से भी परे कल्पना।
वैज्ञानिक भी करते पूर्व-कल्पना,...शिल्पि कवि भी करते पूर्व कल्पना।।
कल्पना से कायाकल्प करते लक्ष्य,...लक्ष्यानुसार ही बाण होता सिद्ध।
लक्ष्यानुसार गमन से पाते गंतव्य...नक्शा व कंपास सम होती कल्पना।। (2)

पूर्ण असत्य की न होती कल्पना...ज्ञान-ज्ञेय सम्बन्ध की प्ररूपणा।
ज्ञान होने पर ही होता ज्ञेय...ज्ञेयानुसार ही होता है ज्ञान।।
भले गधों में न होते है सींग...किन्तु गधे व सींग के होते सद्भाव।
भले आकाश के न होते हैं फूल...किन्तु आकाश में होते हैं फूल।। (3)

आकाश भी होता फूल भी होते...दोनों के सद्भाव का अभाव नास्ति।
तथाहि बन्ध्यापुत्र व असंभव ज्ञेय...अनेकांत-स्याद्वाद स्वरूप ज्ञेय।।
श्रद्धा/(आस्था) से कल्पना होती मोक्ष की...ज्ञान-चारित्र युक्त मिलती मुक्ति।
मुक्ति के अभाव से न होती श्रद्धा-कल्पना...वस्तु बिन न होती प्रतिबिम्ब रचना(4)

अच्छी भावना युक्त अच्छी कल्पना करो...जिससे निराशा-द्वन्द्व होंगे दूर।
अन्यथा बुरी भावना व चिन्ता ही होगी...महान् लक्ष्य की प्राप्ति कभी न होगी।
मोक्ष प्राप्ति बिन भी मोक्ष की कल्पना होती...श्रद्धा-प्रज्ञा से मोक्ष की भावना होती।
सतत दृढ साधना से मुक्ति मिलती...अन्यथा मुक्ति कभी प्राप्त न होती।। (5)

प्रत्येक शोध-बोध व खोज में...नवीण निर्वाण व अविष्कार में।
मूर्ति-चित्र-कविता व भाव-काम में कल्पना की आवश्यकता हर क्षेत्र में।।
अंतःप्रज्ञा से कल्पना जागृति होती...सुद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से बढ़ती (जाती)।
श्रेष्ठ-ज्येष्ठ-क्लिष्ट कल्पना मुक्ति की होती...इसे प्राप्ति हेतु 'कनक' की प्रवृत्ति(6)

ओबरी 16/01/2018 रात्रि 11.04

समझदार होने की असली निशानी ज्ञान नहीं है बल्कि कल्पना करने की आपकी शक्ति है, अल्बर्ट आइस्टीन

सृजन के लिए मनन

सृजनात्मकता के लिए सदा नए विचारों या नए परिप्रेक्ष्य से पुराने का अध्ययन-मनन जरूरी है। इस स्थिति को पाने के लिए कुछ प्रयास भी करने होंगे। जानिए क्या करें, और क्या न करें...

स्पॉन्ज बनें

नई चीजों को लगातार आजमाते रहें-नई जगहें, आइडियाज, संगीत और व्यंजन भी। नए विचार भी जानें।

प्रेरणा की प्रतीक्षा न करे

अपनी चुनौतियों का सामना करने और उत्तर ढूंढने के लिए खुद को समय और ऊर्जा दें।

ध्यान दें गौर करें

हर इंसान को, हर बात को ध्यान से सुने। गौर से देखें। जानकारी बढ़ाएं। सब्र रखें और आज में जीएं।

पुराने ढर्रे वही नतीजे

शोध बताते हैं कि विचारों का दोहराव मस्तिष्क पर गहरा असर डालकर, नए विचारों की राह बाधित कर देता है। पुराने ढर्रें, पुराने नतीजे ही देंगे। सो इनसे आगे निकलें।

चला चल

स्थिर न रहे। टहलने चलिए। दिमाग भी चलने लगेगा। अध्ययन कहता है कि छोटी--सी चहलकदमी के बाद सृजनात्मक विचार 60 प्रतिशत तक बढ़ जाते हैं।

कोरी कल्पना नहीं...

हॉलीवुड की फैंटेसी मकड़िया अब बनी हकीकत

वॉशिंगटन, विज्ञान का एक सिद्धांत है कि पहले परिकल्पना गढ़ी जाए, फिर

उसे साबित करने के लिए उस पर शोध किया जाए। कुछ इसी तरह से वैज्ञानिकों ने मकड़ियों की सात नई प्रजातियों की खोज की है। दिलचस्प बात यह है कि जिन मकड़ियों की खोज हुई है, वे पहले से ही हॉलीवुड के चर्चित फिल्म और टीवी सीरिज के फैंटेसी किरदारों यानी गेम ऑफ थ्रोन्स के लॉर्ड वैरीज और हैरी पॉटर सीरीज के अरॉगॉग के रूप में मौजूद थे। बाकियों के नाम द लॉर्ड ऑफ द रिंग्स, द सिल्मैरिलियन, एचपी लोवेक्राफ्ट्स की द कॉल ऑफ थुलुथू और बच्चों का पसंदीदा किरदार शॉर्ली वेब और लिटिल मिस स्पाइडर पर रखे गए हैं। दरअसल, चर्चित किरदारों के नाम पर रखने की अहम वजह यह है कि फिल्मों के जैसे ही छह आँखों वाली ये मकड़ियाँ उत्तरी ब्राजील में कई छोटी-छोटी गुफाओं में रहती हैं और इनके व्यवहार भी काफी कुछ टीवी सीरीज की मकड़ियों जैसे ही मिलते-जुलते हैं। इनकी खोज ब्राजील के साओ पाउलो स्थित इंस्टिट्यूटो बुटांटन के वैज्ञानिक ने की है। वैज्ञानिकों ने 5 साल की कड़ी मशक्कत के बाद इन्हें खोजा।

शॉर्ली सबकी दोस्त

वही, सफेद रंग वाली थॉर्ली मकड़ी सबकी दोस्त बताई जाती है। वह किरदार शॉर्ली वेब के बेहद करीब है, जो सीरीज के सुअर वाले किरदार विल्बर की दोस्त है।

सूरज की रोशनी के बिना रहने में सक्षम

मकड़ियाँ नियोट्रॉपिकल जीनस ओकाइरोसेरा परिवार की हैं। ये छाया वाली एकांत जगह पर रहना पसंद करती है। ये ताउम्र बिना सूरज की रोशनी के रहने में सक्षम हैं।

नेटवर्क बनाने की शानदार क्षमता

लॉर्ड वैरीज नाम की वजह यह है कि मकड़ियों में वैरीज की तरह खुद को ढालने की क्षमता है। जाल की बनावट शानदार है।

इंसानो जैसा चेहरा

एटलॉश-नाचा मकड़ियां आकार में औरों के मुकाबले काफी बड़ी होती है। इंसान के जैसे चेहरे वाली ये मकड़ियाँ पहाड़ों के नीचे गुफाओं में रहती हैं। फिल्म में

ये ऐसा जाल बुनती है, जिससे दुनिया को सपनो की धरती से जोड़ा जा सके। किताबों में भी मकड़ियाँ आम मकड़ियों पर राज करती है।

पूरे जंगल पर नजर

अरॉगॉग मकड़ियाँ हैरी पॉटर सीरीज जैसी हैं, जो गुमनाम जंगलों में रहती हैं। ये पूरे जंगल पर नजर रखती है। यही इनकी खासियत है।

छोड़ दीजिए ये आदतें, मिलेगी तरक्की

अधिकतर लोग दिन के 40 फीसदी काम किसी आउटकम के लिए नहीं बल्कि आदतों के चलते करते हैं। ड्यूक यूनिवर्सिटी की ताजा रिसर्च में पाया गया यह निष्कर्ष प्रोफेशनल ग्रोथ में रूकावट बनी आदतों की ओर इशारा करता है। इनमें से ज्यादातर वे आदतें हैं जो आपके सफल या असफल होने में निर्णायक भूमिका निभाती हैं। ऐसे में उन आदतों को छोड़ना आपके लिए फायदेमंद हो सकता है, जो आपके कॅरिअर की राह में रूकावट बनती हैं।

फिक्स्ड माइंडसेट

स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी के साइकोलॉजिस्ट केरोल इवेक की रिसर्च में पाया गया कि सफलता और असफलता के बीच बस एक माइंडसेट का फर्क है। फिक्स्ड माइंडसेट के लोग ग्रोथ माइंडसेट रखने वाले लोगों के मुकाबले कम प्रगति कर पाते हैं। इसका कारण यही है कि फिक्स्ड माइंडसेट के लोग अपने टैलेंट को विकसित नहीं कर पाते। जबकि ग्रोथ माइंडसेट के लोग हमेशा कुछ नया सीखने के लिए उत्सुक रहते हैं।

मल्टीटास्किंग

अक्सर मल्टीटास्किंग होना अच्छा माना जाता है, लेकिन विशेषज्ञों की मानें तो एक बार में एक काम को करने से हम ज्यादा फोकस के साथ काम कर पाते हैं। साथ ही एक साथ कई टास्क पूरे करने में प्रॉडक्टिविटी पर भी विपरीत असर पड़ता है।

बहाने

तरक्की के लिए प्रोफेशनल लाइफ में बहाने बनाने से बचें। एक स्टडी की मानें

तो ज्यादातर सफल लीडर्स की शुरूआत भले ही कमजोर रही, उनमें कई खामियां भी थीं लेकिन हर हाल में उन्होंने अपने लक्ष्य को हासिल किया। जबकि बहाने बनाकर कामों को टालने से पर्सनल और प्रोफेशनल ग्रोथ रूक जाती है।

कंट्रोल

पेशेवर जिंदगी में हर परिस्थिति को नियंत्रण में नहीं लिया जा सकता। ऑफिस में नही लिया जा सकता। ऑफिस में उन कामों पर फोकस करें जो पूरी तरह से आपके हाथ में हैं। उन्हीं प्रोजेक्ट्स को हाथ में लें जिन्हें आप बेहतर आउटकम के साथ पूरा कर सकते हैं। वे टास्क जो आपको कंट्रोल में नहीं हैं उन पर समय बर्बाद न करें।

देखें हमने बोया क्या ?

हर दिन का मूल्यांकन उस फसल से न करें जो आपने काटी है, बल्कि उन बीजों से करें जो आपने बोएं हैं। **रॉबर्ट लुई स्टीवॅसन**

इंसान की महान् उपलब्धि अपने अवसरों का अधिकतम लाभ उठाना और अपने संसाधनों का अधिकतम प्रयोग करना है। **वॅविनारब्यूज**

सफलता वही पुरानी ए.बी.सी. है-अवसर, बुद्धि और साहस। **चॉर्ल्स लकमेन**

अपने जीवन से सभी नकारात्मक लोगों को बाहर निकाल दें, वे खुद अपना कफ़न तैयार करते हैं, आप खुद को उनके साथ दफ़न किए जाने की अनुमति न दें

रे ब्रेडबरी

सफल होने के लिए व्यक्ति के पास योग्यता, महत्वकांक्षा, साहस, प्रबल प्रेरणा, कड़ी मेहनत, ईमानदारी और वफादारी का प्रभावी समन्वय होना चाहिए।

हैरी एफ. बैंक्स

मैं अपने मस्तिष्क में किसी को गंदे पैरों से चलकर नहीं आने दूंगा।

महात्मा गांधी

अनेकान्त दर्शनज्ञ

वस्तु स्वरूप अनन्त धर्मान्तक होने के कारण वस्तु का दर्शन या परिज्ञान करने के लिए अनेकान्तदर्शन की नितान्त आवश्यकता है। परन्तु वस्तुनिष्ठ अनन्त धर्म का

कथन युगपत् न होने के कारण या विवक्षावश एक धर्म गौण एवम् एक अन्य धर्म मुख्य होने पर भी वस्तु स्वरूप को जानने वाला व्यक्ति साम्यभाव से निरपेक्ष दृष्टि से तटस्थ होकर देखता है। पुरुषार्थसिद्धियुपाय में अमृतचन्द्र सूरी ने कहा है-

व्यवहार निश्चयौयः प्रबुध्य तत्त्वेन भवति मध्यस्थः।
प्राप्नोति देशनायाः स एव फलमविकलं शिष्यः।।8।।

जो जीव व्यवहारनय और निश्चयनय को वस्तु स्वरूप को यथार्थ रूप से जानकर मध्यस्थ होता है अर्थात निश्चयनय और व्यवहारनय के पक्षपात रहित होता है, वह ही शिष्य उपदेश का सम्पूर्ण फल प्राप्त करता है।

जइ जिणमयं पवज्जइ ता मा व्यवहार णिच्छए मुअह।
एकेण विणा छिज्जइ तित्थं अण्णेण पुण तच्चं।।

(अमृतचन्द्र सूरि कृत समयसार टीका में उद्धृत)

यदि तू जिनमत में प्रवर्तन करता है तो व्यवहार और निश्चय को मत छोड़। यदि निश्चय का पक्षपाती होकर व्यवहार को छोड़ेगा तो रत्नत्रय स्वरूप धर्मतीर्थ का अभाव होगा और यदि व्यवहार का पक्षपाती होकर निश्चय को छोड़ेगा तो शुद्ध तत्त्व स्वरूप का अनुभव नहीं होगा। अतः पहले व्यवहार, निश्चय को भली प्रकार जानकर पश्चात् यथायोग्य इनका अंगीकार करना, पक्षपात न करना, यही उत्तम श्रोता का लक्षण हैं।

सर्वज्ञ सर्वदर्शी द्वारा ज्ञात एवम् प्रतिपादित तत्त्व अनेक विरूद्धात्मक धर्मों से परिपूर्ण है तो भी उसी वैचित्र्यपूर्ण वस्तु में सम्यग्दृष्टि शंका नहीं करता है। यथा-

सकल अनेकान्तात्मकमिदंमुक्तं वस्तु जातमखिलज्ञैः।
किमु सत्यमसत्यं वा न जातु शंकेति कर्त्तव्य।। 23।। (पुरुषार्थ सिद्धि उपायः)

सर्वज्ञ देव द्वारा कहा गया यह समस्त वस्तु समूह अनेकान्त स्वभाव है वह क्या सत्य है ? अथवा असत्य है ऐसी शंका कभी भी नहीं करनी चाहिए।

सूक्ष्म जिनोदितं तत्त्वं हेतुभिनैर्व हन्यते।
आज्ञा सिद्धं तु तदग्राह्यं नान्यथा वादिनोजिनाः।।

सर्वज्ञ जिनेन्द्र भगवान् द्वारा प्रतिपादित तत्त्व अत्यन्त सूक्ष्म है। तत्त्वदर्शन तीक्ष्ण तर्क रूपी शस्त्र से भी खण्डित नहीं होता है। जिनेन्द्र देव असत्य कथन करने वाले नहीं होने से उनकी आज्ञा सर्वोपरि ग्रहणीय है।

इस विचित्र पूर्ण विरोध धर्मात्मक स्वभाव से समन्वित वस्तु स्वरूप को समझना साधारण जनमानस के लिए अत्यन्त दुरूह है। वस्तु स्वरूप को यथार्थ परिज्ञान करने के लिए अनुभवी तत्वज्ञ गुरु की आवश्यकता नितान्त है। कहा भी है-

इति विविध भङ्ग गहने सुदुस्तरे मार्ग मूढ़दृष्टीनाम्।
गुरवो भवन्ति शरणं प्रबुद्ध नयचक्र सञ्चाराः।।58।।(पुरुषार्थ सिद्धि उपायः)

इस प्रकार अत्यन्त कठिनता से पार हो सकने वाले अनेक प्रकार के भंगों से युक्त गहन वन में मार्ग भूले हूए पुरुष को अनेक प्रकार के नय समूह के ज्ञाता श्री गुरु ही शरण होते हैं।

अत्यन्त निशितधारं दुरासदं जिनवरस्य नयचक्रम्।
खण्डयति धार्यमाणं मूधनिं झटिति दुर्विदग्धानाम्।। 59।।

जिनेन्द्र भगवान् का अत्यन्त तीक्ष्ण धारवाला और दुःसाध्य नयचक्र धारण करने पर मिथ्याज्ञानी पुरुषों के मस्तक को तुरन्त ही खण्ड-खण्ड कर देता है।

अनेकान्त का फल अमृततत्त्व

वस्तु स्वरूप अनेकान्तात्मक होने के कारण, जो अनेकान्त में रमण करता है वह वस्तु स्वरूप में रमण करता है। वस्तु अनादि अनन्त शाश्वतिक, ध्रुव, अविनाशी, अमृत स्वरूप होने के कारण अनेकान्त में रमण करने वाला स्वयं अमृत स्वरूप हो जाता है। समयसार अध्येता एवम् प्रौढ़ टीकाकरण अमृतचन्द्र सूरि इस रहस्य को उद्घाटन करते हुए समयसार कलश में वर्णन करते हैं-

उभयनयविरोध ध्वंसिनि स्यात् पदाङ् के।
जिनवचसि रमन्ते ये स्वयं वान्तमोहाः।।
सपदि समयसारं ते परंज्योतिरुच्चै-
रनवमनयपक्षाक्षुण्णमीक्षन्त एव।।4।।

निश्चय और व्यवहार इन दोनों नयों के विषय भेद से उत्पन्न परस्पर विरोध का नाश करने वाला, स्यात् पद से चिह्नित जो जिन भगवान् का वचन (वाणी) है, उसमें जो पुरुष रमते हैं (प्रचुर प्रीति सहित अभ्यास करते हैं)! वे अपने आप ही मिथ्यात्व कर्म के उदय का वमन करके इस अतिशयरूप परम ज्योति प्रकाशमान शुद्ध आत्मा को तत्काल ही देखते हैं। वह समयसार रूप शुद्ध आत्मा नवीन उत्पन्न नहीं हुआ

किन्तु पहले कर्मों से आच्छादित था सो वह प्रकट व्यक्त रूप हो गया है। वह आत्मा सर्वथा एकान्त रूप कुनय के पक्ष से खण्डित नहीं होता, निर्बाध है।

य एव मुक्तवा नय पक्षपातं। स्वरूप गुप्ता निवसन्ति नित्यं।।
विकल्प जाल च्युतशान्त चित्ता-स्त एव साक्षादमृतं पिवन्ति।।69।।

जो नय पक्षपात को छोड़कर अपने स्वरूप में गुप्त होकर सदा निवास करते हैं, विकल्प जाल से रहित शान्त चित्तवाले (ऐसे वे) ही साक्षात अमृत का पान करते हैं।

एकस्य बद्धो न तथा परस्य, चिति द्वयोर्द्वाविति पक्षपातै।
यस्तत्त्ववेदी च्युतपक्षापातस्तस्यास्ति नित्यं खलुचिच्चिदेव।।70।।

एक नय का पक्ष है कि जीव कर्मों से बँधा हुआ है और दूसरे नय का पक्ष है कि जीव कर्मों से नहीं बँधा, इस प्रकार चित्त स्वरूप जीव के सम्बन्ध में दो नयों के दो पक्षपात हैं, जो तत्ववेत्ता वस्तु स्वरूप का ज्ञाता पक्षपात रहित है उसे निरन्तर चित्स्वरूप जीव चित्स्वरूप ही है (अर्थात उसे चित्स्वरूप जीव जैसा है वैसा ही निरन्तर अनुभव में आता है।)

उदयति न नयश्रीरस्तमेति प्रमाणं।
क्वचिदपि च न विद्मो याति निक्षेप चक्रं।।
किमपरमभिदध्मो धाम्नि सर्वंकषेस्मिन्।
अनुभवमुपयाते भाति न द्वैतमेव।।9।।

आचार्य, शुद्धनय का अनुभव करके कहते हैं कि- इन समस्त भेदों को गौण करनेवाला जो शुद्धनय का विषयभूत चैतन्यचमत्कार मात्र तेजः पुञ्ज आत्मा है। उसका अनुभव होने पर नयों की लक्ष्मी उदित नहीं होती, प्रमाण अस्त हो जाता है और निक्षेपों का समूह कहाँ चला जाता है सो हम नहीं जानते इससे अधिक क्या कहे? द्वैत ही प्रतिभासित नहीं होता।

आत्मस्वभाव परभाव भिन्नमापूर्णमाद्यन्तविमुक्तमेकं।
विलीन संकल्प विकल्प जालं प्रकाशयन् शुद्धनयोऽभ्युदेति।। 10।।

शुद्धनय आत्मस्वभाव को प्रकट करता हुआ उदयरूप होता है। वह आत्म स्वभाव को परद्रव्य, परद्रव्य के भाव तथा परद्रव्य के निमित्त, से होने वाले अपने

विभाव ऐसे परभावों से भिन्न प्रकट करता है और वह आत्मस्वभाव सम्पूर्ण रूप से पूर्ण है- समस्त लोकालोक का ज्ञाता है- ऐसा प्रकट करता है, (क्योंकि ज्ञान में भेद कर्म संयोग से है, शुद्धनय में कर्म गौण है) और वह आत्मस्वभाव को आदि अन्त से रहित प्रकट करता है (अर्थात् किसी आदि से लेकर जो किसी से उत्पन्न नहीं किया गया और कभी भी किसी से जिसका विनाश नहीं होता, ऐसे परिणामिक स्वभाव को प्रकट करता है) और वह आत्मस्वभाव को एक सर्व भेदभावों से (द्वैत भावों से) रहित एकाकार-प्रकट करता है, और जिसमें समस्त संकल्प विकल्प के समूह विलीन हो गये हैं, ऐसा प्रकट करता है (द्रव्य कर्म, भाव कर्म, नोकर्म आदि पुद्गल द्रव्यों में अपनी कल्पना करना सो संकल्प है और ज्ञेयों के भेद से ज्ञान में भेद ज्ञान होना सो विकल्प) ऐसा शुद्ध नय प्रकाशनरूप होता है।।

जब जीव समस्त एकान्तग्राही दृष्टिकोण को त्याग कर सत्याग्राही दृष्टिकोण को अपनाता हुआ अनेकान्तात्मक स्वात्म द्रव्य में रमण करता है तब वह कृत-कृत्य होकर सम्पूर्ण पुरुषार्थ सिद्धि को प्राप्त कर लेता है। आचार्य श्री अमृतचन्द्र,पुरुषार्थ सिद्धियुपाय में कहे हैं-

विपरीतभिनिवेशं निरस्यं सम्यग्व्यवस्य निजतत्त्वम्।
यत्तस्मादविचलनं स एव पुरुषार्थ सिद्धयुपायोऽयम्।। 15।।

विपरीत श्रद्धा का नाश करके निज स्वरूप को यथार्थरूप से जानकर जो अपने उस स्वरूप में से भ्रष्ट न होना वही इस पुरुषार्थ सिद्धि का उपाय है।

सर्वतिवर्त्तीर्णं यदा स चैतन्यमचलमाप्नोति।
भवति तदाकृतकृत्यःसम्यक्पुरुषार्थसिद्धिमापन्न।।11।।

जब उपर्युक्त अशुद्ध आत्मा, सर्व विभावों से पार होकर अपने निष्कम्प चैतन्य स्वरूप को प्राप्त होता है तब यह आत्मा उस सम्यक् प्रकार से पुरुषार्थ के प्रयोजन के सिद्धि को प्राप्त होता हुआ कृत-कृत्य होता है।

मेमोरी बूस्ट करने के लिए
पाँच स्मार्ट एक्सरसाइज

पढ़ाई से लेकर कॅरिअर की रेस में अच्छी याददाश्त भी आपकी परफार्मेंस को

बेहतर बनाती है। वहीं खराब मेमोरी का असर सीधे आपकी प्रॉडक्टिविटी पर पड़ता है। ऐसे में हार्वर्ड और ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी के अध्ययन में खोजे गए ये 6 स्मार्ट टिप्स आपकी मेमोरी को बूस्ट करने में काम आ सकते हैं।

डूडलिंग करें

नाइकी के सीईओ मार्क पार्कर मीटिंग्स के दौरान डूडलिंग करते हैं। इससे वे खुद को ज्यादा एक्टिव महसूस करते हैं। दरअसल डूडलिंग के जरिए ड्रॉइंग करते रहना मस्तिष्क को सक्रिय बनाए रखता है। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी के एक शोध में कुछ प्रतिभागियों को डूडलिंग करते वक्त कुछ बातें कही गई और कुछ प्रतिभागियों से उस वक्त बात की गई जब वे डूडलिंग नहीं कर रहे थे। रिसर्च में पाया गया कि डूडलिंग करने वाले लोग 29 फिसदी ज्यादा याद रख पाए थे।

ब्रेन वर्कआउट

याददाश्त तेज करने और मस्तिष्क को स्वस्थ बनाए रखने के लिए ब्रेन वर्कआउट बहुत जरूरी है। इसके लिए काम के बीच में सुडोकु और क्रॉसवर्ड पाउल सॉल्व करो। मनोरंजन के साथ ही प्रॉडक्टिविटी बढ़ाने के लिए यह परफेक्ट ब्रेन बूस्टर टेक्निक है।

हर दिन कुछ नया सीखें

मस्तिष्क को एक्टिव रखने ओर याददाश्त तेज करने के लिए हर थोड़े समय में नई स्किल्स या नई भाषा सीखें। इसके लिए कोई ऑनलाइन कोर्स जॉइन कर सकते हैं। चाहे तो हर दिन कुछ नया सीखने के लिए यूट्यूब वीडियोज की मदद लें।

माइंड मैपिंग

यह याद रखने का सबसे अच्छा तरीका है। माइंड मेपिंग यानि जो भी अपने पढ़ा, देखा या समझा है उसे डायग्राम या फ्लोचार्ट के रूप में पेपर पर उतार लीजिए। अब इसे याद रखने के लिए आपको ज्यादा मेहनत नहीं करनी पड़ेगी।

मुश्किल टास्क

टेक्नोलॉजी ने अब कर्मों को आसान बना दिया है। लेकिन रिसर्च बताते हैं, जितना ज्यादा हम दिमाग को मुश्किल टास्क देते हैं। जब भी कोई इक्वेशन सॉल्व

करनी हो तो कैलकुलेटर के बजाय पेपर, पेन का इस्तेमाल करें। लॉन्ग ड्राइव पर निकले है तो जीपीएस के बजाय खुद रास्ते खोजें दिमाग को ऐसे मुश्किल टास्क देना आपकी मेमोरी को तेज बनाएगा।

आत्मा ज्ञान सुखादिमय

णाणं अप्पत्ति मदं वट्ठदि णाणं विणा ण अप्पाणं
तम्हा णाणं अप्पा अप्पा णाणं वा अण्णं वा।। (27)

फ्राज छब्च्ळ्यत्फज ब्फ़् थ्त्फज त्ल ळ्ण्ग्ळ ध्फ्ब्न्ज्छञ्ज त्ल ळ्ण्ज ल्ज्न्फ़् ग्फ्छ त्फ ळ्ण्ज ग्घ्ल्ज्फ्च्ज ब्फ़् ळ्ण्ज ल्ज्न्फ़् ळ्ण्ज्ज्ज च्फ्फ्ळ घ्ज (ग्फ्ह) ध्फ्ब्न्ज्छञ्ज,ळ्ण्ज्ज्ज्फ़्ब्ज्ज, ध्फ्ब्न्ज्छञ्ज त्ल ळ्ण्ज ल्ज्न्फ़्, ष्त्न्ज ळ्ण्ज ल्ज्न्फ़् त्ल ध्फ्ब्न्ज्छञ्ज ब्ट ग्फ्हळ्णत्फ्ज ज्न्ल्ज.

आगे कहते है कि ज्ञान आत्मा का स्वभाव है तथापि आत्मा ज्ञान स्वभाव भी है तथा सुख आदि स्वभाव रूप भी है- केवल एक ज्ञान गुण का ही धारी नहीं है-

(णाणं) ज्ञान गुण (अप्पत्ति) आत्मा रूप है ऐसा (मदं) माना गया है, कारण कि (णाणं) ज्ञान गुण (अप्पाणं) आत्म द्रव्य के (विणा) बिना अन्य किसी घट पट आदि द्रव्य में (णःवट्ठदि) नहीं रहता है (तम्हा) इसलिए यह जाना जाता है कि किसी अपेक्षा से अर्थात् गुण गुणी की अभेद दृष्टि से (णाणं) ज्ञानगुण (अप्पा) आत्मरूप ही है। किन्तु (अप्पा) आत्मा(णाणं व) ज्ञानगुण रूप भी है, जब ज्ञान स्वभाव की अपेक्षा विचारा जाता है। (अण्णां वा) तथा अन्य गुण रूप भी है।

अब आत्मा के अन्दर पाये जाने वाले सुख वीर्य आदि स्वभावों की अपेक्षा विचारा जाता है - यह नियम नहीं है कि मात्र ज्ञानरूप ही आत्मा है। यदि एकान्त से ज्ञान ही आत्मा है, ऐसा कहा जाय तब ज्ञान गुण मात्र ही आत्मा को प्राप्त हो गया फिर सुख आदि स्वभावों का अवकाश नहीं रहा। तथा सुख, वीर्य आदि स्वभावों के समुदाय का अभाव होने से आत्मा का अभाव हो जायेगा। जब आधारभूत आत्मा का अभाव हो गया सब उसका आधेयभूत ज्ञानगुण का भी अभाव हो गया। इस तरह एकान्त मत में ज्ञान और आत्मा दोनों का ही अभाव हो जायेगा इसलिए किसी अपेक्षा से ज्ञान स्वरूप भी आता है सर्वथा ज्ञान स्वरूप ही नहीं है। यहाँ यह अभिप्राय है कि आत्मा व्यापक है और ज्ञान व्याप्य है। इसलिए ज्ञान-स्वरूप आत्मा हो सकता है तथा

आत्मा ज्ञानरूप भी है और अन्य स्वभावरूप भी है। तैसा ही कहा है 'व्यपकं तदतन्निष्ठं व्याप्यं तदतन्निष्ठमेव च' व्यापक में व्याप्य एक और दूसरे अनेक रह सकते हैं जबकि व्याप्य व्यापक में ही रहता है।

समीक्षा - वस्तु अनेकान्तात्मक है अर्थात् प्रत्येक द्रव्य में अनेक गुण एक एक साथ अविरोध रूप में रहते हैं, जैसे अग्नि में दाहकत्व, प्रकाशकत्व, पाचकत्व आदि अनेक गुण एक साथ रहते हैं तो भी एक गुण दूसरे गुण रूप परिणमन नहीं करता है, अग्नि दाहकत्व गुण के कारण दहन करती है, पाचकत्व गुण के कारण पचाती है और प्रकाशकत्व गुण के कारण प्रकाश करती है। इसलिए अग्नि एक होते हुए भी तीनों गुण के कारण अलग-अलग है। अग्नि तो तीनों रूप है परन्तु एक-एक गुण पूर्ण अग्नि रूप नहीं है इसलिए प्रकाशकत्व आदि गुण कथंचित् अग्नि रूप हैं कथंचित् नहीं है। उसी प्रकार आत्मा एवं आत्मा के गुणों के बारे में जानना चाहिए। आत्मा में ज्ञान, दर्शन, वीर्य आदि अनंतगुण है। आत्मा का ज्ञान गुण आत्मा में ही है अन्य द्रव्य में नहीं है तथापि आत्मा में ज्ञानगुण के अतिरिक्त अन्य गुण भी है। इसीलिए आत्मा ज्ञान गुण स्वरूप व अन्य गुणरूप भी है। यदि आत्मा को केवल ज्ञान स्वरूप स्वीकार किया जावे एवं अन्य स्वरूप नहीं किया जावे तो अन्य गुणों का अभाव हो जायेगा एवं अन्य गुणों के अभाव से आत्मा का भी अभाव हो जायेगा क्योंकि गुण के अभाव से गुणी का अभाव हो जायेगा एवं गुणी के अभाव से गुण का भी अभाव हो जायेगा। इसलिए कथंचित् गुण गुणी में भेद एव अभेद भी है। इस सूक्ष्म सैद्धांतिक विषय को सरलीकरण करने के लिए और एक-दो उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ। जैसे कोई कहता है, एक मीठा आम ले आओ, कोई कहता है एक पीला आम ले आओ, कोई कहता है एक किलो आम ले आओ, कोई कहता है सुगन्धित आम ले आओ। वे अलग-अलग विशेषण से आम प्राप्त करने के लिए ही बोल रहे हैं। मीठा आम लाना कहने पर आम का मीठा गुण क्या अन्य गुण से अलग करके लाया जा सकता है ? कदापि नहीं, क्योंकि मीठा गुण आम के अन्य गुण के साथ एक क्षेत्रगवाही होकर रहता है। इसी प्रकार अन्य गुणों को पृथक करके नहीं लाया जा सकता है। इसलिए आम का मीठा गुण आम में होते हुए भी आम केवल मीठा गुण स्वरूप नहीं है अन्य गुण स्वरूप भी है। केवल गुण-गुणी संज्ञा,संख्या, लक्षण,प्रयोजन की अपेक्षा भेद होते

हुए भी प्रदेश अपेक्षा भेद नहीं होता है। उपरोक्त सिद्धांत का प्ररूपण तार्किक चूडामणि अकलंक स्वामी ने स्वरूप संबोधन में किया है।

प्रमेयत्वादिभिर्धर्मैरचिदात्मा चिदात्मकः।
ज्ञानदर्शनतस्तस्माच्चेतनाचेतनात्मकः।। (3)

वह आत्मा प्रमेयत्व आदि धर्मों द्वारा अचितरूप है, ज्ञान और दर्शन गुण से चैतन्यरूप है। इस कारण चेतन अचेतन रूप है।

ज्ञानाद्भिन्नो न चाभिन्नो, भिन्नाभिन्नः कथंचन।
ज्ञानं पूर्वापरीभूतं, सोऽयमात्मेति कीर्तितः।। (4)

आत्मा का ज्ञान गुण भूतकाल और भविष्यत्काल के पदार्थों को जानने रूप पर्यायों वाला है। वह प्रसिद्ध यह आत्मा उस ज्ञानगुण से सर्वथाभिन्न नहीं है और सर्वथा अभिन्न-यानी एक रूप भी नहीं है। किसी अपेक्षा से भिन्न और अभिन्न इस प्रकार कहा गया है।

स्वदेहप्रमिश्चायं, ज्ञानमात्रोऽपि नैव सः।
ततः सर्वगतश्चायं, विश्वव्यापी न सर्वथा।। (5)

यह आत्मा अपने शरीर के बराबर है और वह आत्मा ज्ञानगुण मात्र भी यानी ज्ञान के बराबर भी नहीं है। इस कारण यह आत्मा सब तरह समस्त पदार्थों को स्पर्श करने वाला नहीं है और समस्त जगत में व्यापने वाला भी सर्वथा नहीं है।

नानाज्ञानस्वभावत्वादेकाऽनेकोऽपि नैव सः।
चेतनैक स्वभावत्त्वदेकानेकात्मको भवेत्।।

वह आत्मा अनेक प्रकार के ज्ञानस्वरूप होने से अनेक होते हुए भी एक चेतना स्वभाव होने से एक होता हुआ भी सर्वथा एक ही नहीं है। किन्तु एक तथा अनेकात्मक होता है।

ज्ञानी एवं ज्ञेय परस्पर में अप्रवेशक

णाणी णाणसहावो अट्ठा णेयप्पगा हि णाणिस्स।
रूवाणिव चक्खूणं णेवाण्णोण्णेसु वट्टंति।। (28)

आगे कहते है कि ज्ञान ज्ञेयों के समीप नहीं जाता है ऐसा निश्चय है-

(हि) निश्चय से (णाणी) केवलज्ञानी भगवान् आत्मा (णाणसहावो) केवलज्ञान स्वभावरूप है तथा (णाणिस्स) उस ज्ञानी जीव के भीतर (अत्था) तीन जगत् के तीन कालवर्ती पदार्थ ज्ञेयस्वरूप पदार्थ (चक्खूणं) आंखों के भीतर (रूवाणिव) रूपी पदार्थों की तरह (अण्णोण्णेसु) परस्पर एक-दूसरे के भीतर(णेव वट्टंति) नहीं रहते हैं।

जैसे - आखों के साथ रूप मूर्तिक द्रव्यों का परस्पर सम्बन्ध नहीं है अर्थात् आंख शरीर में अपने स्थान पर है और रूपी पदार्थ अपने आकार का समर्पण आंखों में कर देते हैं तथा आंखे उनके आकारों को जानने में समर्थ होती है तैसे ही तीन लोक के भीतर रहने वाले पदार्थ तीन काल की पर्यायों में परिणमन करते हुए ज्ञान के साथ परस्पर प्रदेशों का सम्बन्ध न रखते हुए भी ज्ञानी के ज्ञान में अपने आकार के देने में समर्थ होते हैं तथा अखंडरूप से एक स्वभाव से झलकने वाला केवलज्ञान उन आकारों को ग्रहण करने में समर्थ होता है, ऐसा भाव है।

समीक्षा - यहाँ पर आचार्य देव ने ज्ञान एवं ज्ञेय का क्या संबंध है यह बताया है। ज्ञान उसे कहते है जो ज्ञेय को जानता है। ज्ञेय उसे कहते है ज्ञान का विषय बनता है। ऐसा संबंध होते हुए भी न ज्ञान, ज्ञेय रूप होता है और न ज्ञेय, ज्ञान रूप होता है। यदि ऐसा हो जाये तो जड़ात्मक ज्ञेय भी चेतनात्मक ज्ञान बन जायेगा और चेतनात्मक आत्मा अचेतनात्मक हो जायेगा एवम् जड़ात्मक ज्ञेय, ज्ञान गुण के कारण चैतन्य बन जायेंगे और गुणों के अभाव से गुणी का भी अभाव हो जायेगा। इसलिए ज्ञान, ज्ञेय का संबंध बताते हुए 'रत्नकरण्ड' में समन्तभद्रस्वामी ने कहा है-

'सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते'

इसी प्रकार अमृतचन्द्र सूरि ने कहा भी है-

तज्जयति परं ज्योतिःसमं समस्तैरनन्तपर्यायैः।
दर्पणतल इव सकला प्रतिफलति पदार्थ मालिका यत्र।। (1)

वह केवलज्ञान रूप परम ज्योति स्वरूप दर्पण में संपूर्ण लोक-अलोक के समस्त ज्ञेय एवं अनंत पर्यायें सम्यक् रूप में झलकती हैं ऐसी ज्योति जयवन्त हों यहाँ पर द्वयाचार्य श्री ने केवलज्ञान की तुलना दर्पण से की है। उसका रहस्य जान लेना चाहिए क्योंकि दृष्टान्त और द्राष्टान्त में बहुत कुछ समानता होती है। यदि कुछ

समानता न हो तो दृष्टान्त और द्राष्टान्त ही नहीं घट सकता है। भले केवल ज्योति चैतन्य स्वरूप है, दर्पण जड़ात्मक है। दर्पण में कुछ प्रतिबिम्बित होता है। केवलज्ञान में सब कुछ प्रतिबिम्बित होता है। इस तरह दोनों में महान् असमानता होते हुए भी कुछ समानता भी है। वह यह है कि जैसे दर्पण बिना रागद्वेष से अपनी स्वच्छता के कारण ज्ञेय में बिना प्रवेश हुए भी अपने प्रतिबिम्ब को झलकाता है। वैसे केवलज्ञान बिना रागद्वेष के तथा ज्ञेय में बिना प्रवेश किये हुये ज्ञेय को जानता है। इसलिए तो स्वामी कार्तिकेय ने कहा है-

णाणं ण जादि णेयं णपि ण जादि णाण-देसम्मि।
णिय-णिय-देस ठियाणां व्यवहारो णाण-णेयाणं।। (256)

ज्ञान, ज्ञेय के पास नहीं जाता और न ही ज्ञेय ज्ञान के पास आता है। फिर भी अपने-अपने देश में स्थित ज्ञान और ज्ञेय में ज्ञेय ज्ञायक व्यवहार होता है।

ज्ञानी ज्ञेय में प्रवेश बिना जानता

ण पविट्ठो णाविट्ठो णाणी णेयेसु रूवमिव चक्खू।
जाणदि पस्सदि णियदं अक्खातीदो जगमसेसं।। (29)

फ्रज धफ्ब्ज्र, ष्ा्ब त्ल घ्ज्हब्फ्छ ल्ज्फल्ज भ्ज्त्च्ज्भ्ळ्त्ब्फ फज्च्ज्ल्ल्यत्न्ह धफ्ब्ल गफ्छ ल्ज्ज्ल ळ्ाज ष्ाब्न्ज ष्ब्त्न्छ फज्त्ळ्ाज्र जफ्ळ्ाज्यत्फ्ु त्फ्ळ्ब फ्ब्ट जफ्ळ्ज्यज्छ त्फ्ळ्ब घ्ह ळ्ाज ब्ष्ठ्ज्च्ळ ब्ङ्ग धफ्ब्न्ज्छ्ज्ज, थ्ल्ळ गल ळ्ाज ज्हज्ल ल्ज्ज्ल ळ्ाज ब्ष्ठ्ज्च्ळ्ल ब्ङ्ग ल्त्ज्ाळ.

आगे कहते हैं कि ज्ञानी आत्मा ज्ञेय पदार्थों में निश्चय नय से प्रवेश नहीं करता हुआ भी व्यवहार से प्रवेश किए हुए हैं, ऐसा झलकता है, ऐसी आत्मा के ज्ञान की विचित्र शक्ति है।

(अक्खातीदो) इन्द्रियों से रहित अतीन्द्रिय (णाणी) ज्ञानी आत्म (चक्खू) आँख (रूवम् इव) जैसे रूप के भीतर वैसे(णेयेसु) ज्ञेय पदार्थों में (ण पविट्ठो) निश्चय से प्रवेश न करता हुआ अथवा (ण अविट्ठो) व्यवहारों से अप्रविष्ट न होता हुआ अर्थात् प्रवेश करता हुआ (णियदं) निश्चित रूप से व संशय रहितपने से (असेसं) सम्पूर्ण (जगत्) जगत को (पस्सदि) देखता है (जाणादि) जानता है।

जैसे नेत्र रूपी द्रव्यों को यद्यपि निश्चय से स्पर्श नहीं करता है तथापि व्यवहार से स्पर्श कर रहा है ऐसा लोक में झलकता है। तैसे वह आत्मा मिथ्यात्व-रागद्वेष आदि

आस्त्रव भावों के और आत्मा के संबंध में जो केवलज्ञान होने के पूर्व विशेष भेदभाव होता है, उससे उत्पन्न जो केवलज्ञान और केवलदर्शन के द्वारा तीन जगत् और तीन कालवर्ती पदार्थों को निश्चय से स्पर्श न करता हुआ भी व्यवहार से स्पर्श करता है तथा स्पर्श करता हुआ ही ज्ञान से जानता है और दर्शन से देखता है। वह आत्मा अतीन्द्रिय सुख के स्वाद में परिणमन करता हुआ इन्द्रियों के विषयों से अतीत हो गया है। इसलिये जाना जाता है कि निश्चय से आत्मा पदार्थों में प्रवेश न करता हुआ ही व्यवहार से ज्ञेय पदार्थों में प्रवेश हुआ ही घटता है।

समीक्षा – पूर्व गाथा में यह सिद्ध किया गया था कि ज्ञान, ज्ञेय को जानते हुए भी ज्ञान में प्रवेश नहीं करता है यह कथन यथार्थ निश्चयनय से हैं परन्तु व्यवहार नय से विचार करने पर कथंचित् ज्ञान, ज्ञेय में प्रवेश करता भी है जैसे-कोई दर्पण को देख रहा है तब वस्तु स्वरूप से दर्पण और दर्शक अलग-अलग है। तथापि उस दर्शक का प्रतिबिम्ब उस दर्पण में प्रवेश करता हुआ झलकता है। यदि उसका प्रतिबिम्ब सर्वथा दर्पण में प्रवेश नहीं करता तो दर्पण में प्रतिबिम्ब कैसे झलकता ? इससे सिद्ध होता है कि व्यवहार से वह व्यक्ति दर्पण में प्रतिछाया (प्रतिबिम्ब) रूप में प्रवेश किया हुआ है। विज्ञान की अपेक्षा वस्तु से जो प्रकाश निस्तृत होता है वह प्रकाश दर्पण के तल में जाकर प्रतिफलित होता है। प्रकाश जिस डिग्री में दर्पण तल में गिरेगा उतना ही कोण बनाकर प्रतिफलित होगा। इसके कारण ही दर्पण में प्रतिबिम्ब पड़ता है। इसी प्रकार चक्षु दूर से वस्तु को देखती है वह उस वस्तु का प्रतिबिम्ब आंख के रेटीना (तारा) में पड़ता है। यदि यह प्रतिबिम्ब आंख में नहीं पड़ता तो वह वस्तु दिखाई नही देती तथापि वह वस्तु आंख में प्रवेश नहीं करती। यदि वह वस्तु आंख में प्रवेश कर जाती तो आंख फूट जाती अथवा इतनी छोटी आंख में इतनी बड़ी-बड़ी वस्तु कैसे प्रवेश कर जाती ? इसी प्रकार केवलज्ञान रूपी चक्षु में समस्त लोक-अलोक स्व प्रमेयत्व गुण के कारण प्रतिबिम्ब होते हैं। ज्ञान की स्वच्छता में प्रतिबिम्ब करने की शक्ति है और ज्ञेय में प्रतिबिम्बत होने की शक्ति है, उसे ही प्रमाण-प्रमेय सम्बन्ध या ज्ञान-ज्ञेय सम्बन्ध कहते है। जैन दार्शनिक ग्रन्थ आलाप पद्धति में देवसेन सूरी ने कहा है-

प्रमेय स्वभावः प्रमेयत्वम्, प्रमाणेन स्वपररूपं परिच्छेद्य प्रमेयम् (98)

प्रमाण के द्वारा जानने के योग्य जो स्व और पर स्वरूप है, वह प्रमेय है। उस

प्रमेय के भाव को प्रमेयत्व कहते हैं।

परीक्षामुख में प्रमाण का लक्षण निम्न प्रकार कहा है-

'स्वापूर्वार्थव्यवसायात्मकं ज्ञानं प्रमाणम् (1)

स्व और अपूर्व अर्थ (अनिश्चित अर्थ) का निश्चयात्मक ज्ञान प्रमाण है। अथवा जो ज्ञान स्व और पर स्वरूप को विशेष रूप से निश्चय करे, वह प्रमाण है। उस प्रमाण के द्वारा जो जानने योग्य है अथवा जो प्रमाण के द्वारा जाना जाय वह प्रमेय है। उस प्रमेय के भाव को प्रमेयत्व कहते हैं। जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य ज्ञान का विषय अवश्य होता है वह प्रमेयत्व गुण है। यदि द्रव्य में प्रमेयत्व गुण न हो तो वह किसी भी ज्ञान का विषय नहीं हो सकता था।

जाणदि पस्सदि सव्वं व्यवहारणएण केवली भगवं।
केवलणाणी जाणदि, पस्सदि णियमेव अप्पाणं।।(159) नियमसार

व्यवहारनय से केवली भगवान् सब कुछ जानते और देखते है निश्चय से केवल ज्ञानी आत्मा को जानते और देखते हैं।

ज्ञान का ज्ञेय में व्याप्त होने का उदाहरण

रयणमिह इंदणीलं दुद्धज्झसियं जहा सभासाए।
अभिभूय तं पि दुद्धं वट्टदि तह णाणमत्थेसु।। (30)

[illegible]

(इह) इस जगत् में (जहां) जैसे (इंदणीलं रयणम्) इन्द्रनील नाम का रत्न (दुद्धज्झसियं) दूध में डुबायों हुआ (सभासाए) अपनी चमक से (तं पि दुद्धं) उस दूध को भी (अभिभूय) तिरस्कार करके (वट्टदि) है (तह) तैसे (णाणम्) ज्ञान (अट्ठेसु) पदार्थों में वर्तता है।

भाव यह है कि जैसे इन्द्रनील नाम का प्रधानरत्न कर्त्ता होकर अपनी नीलप्रभारूपी कारण से दूध नीला करके वर्तन करता है तैसे निश्चयरत्नत्रयस्वरूप परम सामायिक नामा संयम के द्वारा जो उत्पन्न हुआ केवलज्ञान सो आपा-पर को जानने की शक्ति रखने के कारण सर्व अज्ञान के अन्धेरे को तिरस्कार करके एक समय में ही सर्व

पदार्थों में ज्ञानाकार से वर्तता है- यहां यह मतलब है कि कारणभूत पदार्थों के कार्य जो ज्ञानाकार ज्ञान में झलकते है उसको उपचार से पदार्थ कहते हैं। उन पदार्थों में ज्ञान वर्तन करता है ऐसा कहते हुए भी व्यवहार से दोष नहीं है।

समीक्षा - इस गाथा में आचार्य श्री ने ज्ञान-ज्ञेय का क्या सम्बन्ध है सोदाहरण प्रस्तुत किया है। इन्द्रनीलमणि नाम का एक रत्न होता है जिसकी प्रभा दूध में फैलती है और दूध का वर्ण नीला हो जाता है यदि एक पात्र में दो इंच प्रमाण दूध है और उसमें इन्द्रनीलमणि डाल दिया जाता है तब उस मणि की प्रभा उस दूध में 2 इंच तक फैलेगी ओर यदि दूध की मात्रा 4 इंच की हो जायेगी तब उस मणि की प्रभा 4 इंच तक फैल जायेगी। इसी प्रकार केवलज्ञान रूपी इन्द्रनीलमणि, ज्ञेय रूपी दूध को प्रकाशित करता है वर्तमान जितना ज्ञेय है उस ज्ञेय से अनन्त गुणित ज्ञेय होता तो उसे भी केवलज्ञान प्रकाशित कर लेता और उससे कम होता तो भी उसे प्रकाशित कर लेता तो भी उस केवलज्ञान की शक्ति कम या अधिक नहीं होती अथवा जैसे इन्द्रनीलमणी दूध नहीं बनता और दूध इन्द्रनीलमणि नहीं बनता उसी प्रकार ज्ञान ज्ञेय रूप परिणमन नहीं करता और ज्ञेय ज्ञान रूप परिणमन नहीं करता।

इन ब्रेन एक्सरसाइज से बनेंगे स्मार्ट

फिट रहने के लिए जिस तरह से एक्सरसाइज करना जरूरी है, उसी तरह से ब्रेन को एक्टिव बनाने और मेमोरी पावर बढ़ाने के लिए ब्रेन एक्सरसाइज पर फोकस करना भी जरूरी है। दरअसल ब्रेन एक्सरसाइज करने से सोचने-समझने की क्षमता भी तेज होती है। साथ ही आप हर तरह की परिस्थितियों का सामना करने के लिए भी मजबूत बनते हैं। ऐसी ही कुछ ब्रेन एक्सरसाइज है, जिन्हें आप आसानी से कभी भी मैनेज कर सकती हैं और बन सकती हैं एक स्मार्ट ब्रेन की मालकिन। तो एक नजर इस ओर...

न्यूरोबिक्स एक्सरसाइज करें

अपने ब्रेन से फिजिकल सेंस जैसे देखना, सूंघना, स्पर्श करना, स्वाद लेना, सुनने जैसी क्रियाओं के साथ ही इमोशनल सेंस को लेकर भी कुछ नए प्रयोग करें। इससे ब्रेन के अलग-अलग भागों को उत्तेजित करने में मदद मिलेगी, जिसके कारण

नर्व सेल्स मस्तिष्क के प्राकृतिक पोषक तत्वों को उत्पादित करने का काम करेंगी। इससे याददाश्त बढ़ने के साथ ही मस्तिष्क सेल्स भी मजबूत होंगी। इससे आप उम्र के अनुसार होने वाले प्रभावों को कम कर सकती हैं और खुश रह सकती हैं।

एक्टिविटीज में बदलाव लाएं

अपने रोजाना के सुबह के क्रियाकलाप में बदलाव लाकर भी ब्रेन को एक्टिव किया जा सकता है। ब्रेन इमेजिंग स्टडी से सामने आया है कि अगर रूटीन से कुछ अलग तरह की एक्सरसाइज को किया जाता है तो मस्तिष्क के कॉर्टेक्स पर उसकी इमेज ज्यादा बनती है। इस तरह की सूचनाएं मिलने से ब्रेन की एक्टिविटी बूस्ट होती है। जैसे ब्रेकफास्ट करने के बाद तैयार होएं, अपने डॉग को नए रूटीन में घुमाने के लिए लेकर जाएं, पसंदीदा टीवी प्रोग्राम्स को बदलें। आपको बदलाव महसूस होगा।

कुछ अलग करें

जब आप चीजों को सही तरफ से देखती हैं तो आपका बायां (वर्बल) मस्तिष्क उन चीजों को तुरंत पहचान लेता है। साथ ही आपका ध्यान भी किसी ओर जगह चला जाता है। इसी के विपरीत आप कुछ अलग करती हैं तो आपका दाया ब्रेन एक्टिव होता है और उन चीजों को पहचानने की कोशिश करता है। अपनी फैमली पिक्चर को उल्टा करके सदस्यों को पहचानने की कोशिश करें, घड़ी को उल्टा करके समय देखने की कोशिश करें।

उल्टे हाथ से ब्रश करें

आप नियमित जिस हाथ का प्रयोग ब्रश करने के लिए करती हैं, इस बार दूसरे हाथ से ट्राई करें। इस बारे में रिसर्च में भी सामने आया है कि ब्रेन के विपरीत भाग को काम में लेने से कॉर्टेक्स का बहुत अधिक फैलाव होता है, जिससे तुरंत परिणाम मिलता है। मस्तिष्क उल्टे हाथ की सूचनाओं पर तेजी से प्रतिक्रिया देता है और एक्टिव बनता है।

आंखें बंद कर लें शावर

आंखे बंद करके शावर लेना भी काफी मजेदार है। इस दौरान फिर आपको स्पर्श करके ही महसूस करना होगा। इस तरह से जब हाथों से संदेश मस्तिष्क तक

पहुंचेगा तो इससे ब्रेन भी ज्यादा एक्टिव बनेगा। इस एक्सरसाइज को करने के लिए बाथरूम में जाने के बाद ही आंखे बंद कर लें और चीजें स्पर्श करके पहचानें। आंखे बंद करते हुए नल का पता लगाएं, पानी का तापमान संयोजित करते हुए नहाएं इस तरह सुबह के कामों में बदलाव कर ब्रेन को बूस्ट करें।

डाइनिंग टेबल पर सीट बदलें

यदि वर्कप्लेस पर आपकी जगह में कोई बदलाव होता है तो उस माहौल में फिट होने के लिए आपको थोड़ा समय लगता है। इसी तरह इस एक्टिविटी को एक एक्सरसाइज के रूप में लिया जाए तो मस्तिष्क की सक्रियता को बढ़ाया जा सकता है। इस तरह डाइनिंग टेबल पर अपनी जगह में बदलाव करके खाने-पीने की चीजों को अलग जगह से लेने पर आपको अलग तरह से फोकस करना पड़ता है।

इस तरह यह छोटी-सी एक्सरसाइज भी बहुत उपयोगी हो सकती है।

राजस्थान में पीएचडीधारक तो बढ़ गए लेकिन ज्ञान का स्तर गिरा

आजादी से पूर्व राजस्थान में एक भी विश्वविद्यालय नहीं था। राजस्थान के कॉलेज आगरा विश्वविद्यालय से सम्बद्ध थे। उत्तर प्रदेश में आगरा के अलावा इलाहबाद, लखनऊ और बनारस में उच्च कोटि के विश्वविद्यालय थे। हालांकि, हालात आज उत्तर प्रदेश के विश्वविद्यालयों की भी अच्छी नहीं है। दूसरी ओर, राजस्थान में स्कूली शिक्षा पर सामंतवाद हावी था। सामंत शिक्षा द्वारा सामाजिक जागरूकता के प्रादुर्भाव के खिलाफ थे। आजादी के बाद राजस्थान में उच्च और स्कूली शिक्षा का व्यापक विस्तार तो हुआ, लेकिन गुणवत्ता खत्म-सी हो गई। 1947 में स्थापित, राजस्थान विश्वविद्यालय एकमात्र ऐसी संस्था थी, जिसकी 1960 और 1970 में गुणवत्तापरक शिक्षा और शोध से अपनी पहचान बनी। लेकिन आज भी वह भी निम्न स्तर पर है।

राजस्थान में सबसे अधिक विश्वविद्यालय है। निजी विश्वविद्यालयों की संख्या शासकीय (पब्लिक) विश्वविद्यालयों से अधिक है। पीएचडी करने वाले 70% तक

बढ़े हैं। सर्वे के अनुसार, केवल 2 वर्ष में 2000 लोगों ने पीएचडी की। इसके विपरीत, पीजी प्रवेश में कमी आई है। जयपुर शहर में 635 उच्च शिक्षा केन्द्र हैं। बेंगलुर ही मात्र एक शहर है जहा जयपुर से अधिक संस्थाएं हैं। जयपुर में ही 25 विश्वविद्यालय है। प्राइवेट विवि तो पीएचडी के लिए 1 से 2.5 लाख रू. सालाना फीस ली जा रही है। हैरान करने वाली स्थिति यह है कि गंभीर और गहन अनुसंधान नगण्य हैं। अनुसंधान क्या है ? इसकी क्रियान्विती कैसे की जानी चाहिये ? चयनित विषय की महत्ता क्या है ? क्या अनुसंधान के लिए उपयुक्त संसाधन व मार्गदर्शन उपलब्ध है ? क्या शोध आधारित विश्लेषण मान्य राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय जर्नल में प्रकाशित हुए हैं ? ये प्रश्न उठाए नहीं जाते। इनके बारे में न तो विश्वविद्यालय विचार करते हैं और न ही शोधार्थी। एक को धन चाहिए, दूसरे को डिग्री। यह स्थिति डरावनी है। दूसरी ओर शासन तो सिर्फ कॉलेजों में ड्रेस कोड लागू करने के लिए चिंतित है। शासन का दायित्व है कि वह यह देखे कि अध्यापकों का ज्ञान-संचय समुचित है और उसकी डिलेवरी से विद्यार्थी पूर्णतः लाभान्वित हो रहे हैं। अंत में, शिक्षा के सम्पूर्ण ढांचे को झकझोर करने की जरूरत है। बाजारू शिक्षा पर अंकुश लगाना होगा। (लेखक जयपुर नेशनल यूनिवर्सीटी के प्रो-चांसलर और पूर्व वीसी राजस्थान विश्वविद्यालय है)

238 स्कूलों में तो एक भी विद्यार्थी नहीं

राजस्थान में शासकीय स्कूली शिक्षा की अवस्था भी दयनीय है। एक रिपोर्ट के अनुसार 238 स्कूलों में एक भी विद्यार्थी नहीं है। सरकार ने उन स्कूलों पर ताला लगा दिया है। पांच माह में 5 करोड़ रुपए, वेतन के रूप में, शिक्षक को बिना काम किये, दिये गये हैं। ऐसा नहीं है कि उन गाँवों में स्कूल जाने वाले बालक-बालिकाएं नहीं है। बच्चे हैं, परन्तु सरकारी स्कूलों की कुव्यवस्था के कारण, अभिभावक बच्चों को प्राईवेट स्कूलों में पढ़ाते है जयपुर शहर में ही 29 स्कूल बिना विद्यार्थियों की पाई गई है। 2017-18 से पहले, राजस्थान में 20 हजार स्कूल बन्द किये जा चुके हैं। राजस्थान में 22.7 प्रतिशत नवयुवकों ने, जो 14-18 वर्ष की आयु श्रेणी में है, शिक्षा के लिये प्रवेश नहीं ले रखा है। मात्र 38 प्रतिशत लोग अंग्रेजी पढ़ सकतें हैं। 68 प्रतिशत लोगों को गुणा-भाग करना नहीं आता, और 29 प्रतिशत लोग कक्षा 2 की

पुस्तक भी नहीं पढ़ सकते। इसके विपरीत, केरल में 93 प्रतिशत लोग कक्षा 2 की पाठ्य-पुस्तक पढ़ने में सक्षम है। 67 प्रतिशत लोग गुणा-भाग कर सकते हैं, और 94.9 प्रतिशत अंग्रेजी भाषा के वाक्य पढ़ सकते हैं। महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब आदि प्रदेश राजस्थान से बहुत आगे है।

नेशनल साइंस फाउंडेशन की 'साइंस एंड इंजीनियरिंग इंडिकेटर्स 2018' रिपोर्ट

दुनिया में विज्ञान और इंजीनियरिंग में सबसे अधिक बैचलर डिग्री भारत में ही दी गई

दुनियाभर में 2014 में विज्ञान और इंजीनियरिंग की 75 लाख बैचलर डिग्रियां दी गई। इनमें भारत की हिस्सेदारी सबसे ज्यादा एक चौथाई है। वहीं रिसर्च एवं डेवलपमेंट क्षेत्र में खर्च के लिहाज से अमेरिका पहले स्थान पर है। अमेरिकी संस्था नेशनल साइंस फाउंडेशन की 'साइंस एंड इंजीनियरिंग इंडिकेटर्स 2018' सालाना रिपोर्ट में यह जानकारी दी गई है। रिपोर्ट के मुताबिक विज्ञान एवं इंजीनियरिंग क्षेत्र में चीन ने असाधारण गति से विकास जारी रखा है। अमेरिका विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्षेत्र में भी टॉप पर है, पर इस क्षैत्र में उसकी वैश्विक हिस्सेदारी कम हो रही है।

2014 में विज्ञान में पीएचडी डिग्रियां

देश	डिग्रीधारक
अमेरिका	40,000
चीन	34,000
रूस	19,000
जर्मनी	15,000
ब्रिटेन	14,000
भारत	13,000

2014 में बैचलर डिग्री

देश	हिस्सेदारी

भारत	25%
चीन	22%
यूरोपीय संघ	12%
अमेरिका	10%

रिसर्च मेंअमेरिका ने 31 लाख करोड़ खर्च के किए 2015 में रिसर्च एवं डेलपमेंट में सबसे अधिक 31.4 लाख करोड़ रु. अमेरिका ने खर्च किए। चीन ने 25.86 लाख करोड़ रुपये।

दोषग्राही दुर्जन-पतित व गुणग्राही सज्जन महान्

(दुर्गुणी भी स्व-प्रशंसा चाहते है व सुगुणी की प्रशंसा से जलते हैं)

- आचार्य कनकनन्दी

(चालः- आत्मशक्ति..., जिदंगी एक सफर)

स्व-दोष जानना अति कठिन तथाहि परगुण परिज्ञान।
स्व-पर दोष गुण परिज्ञान से स्व-गुण बढ़ाना अति कठिन।।
यथा आँख न स्वयं को देखती देखती है पर को।
तथाहि मोही (जीवों) की होती बाह्य प्रवृत्ति देखते परदोष को ।। (1)

दीपक यथा स्व-पर प्रकाशी होता तथाहि होते निर्मोही ज्ञानी।
स्व-पर दोष गुण ज्ञान से स्व-दोष दूर से बनते गुणी।।
मक्खी यथा गन्दगी चाहती तथाहि अज्ञानी-मोही।
राजहंस यथा क्षीरनीर भेद से क्षीर को पीता तथा निर्मोही ज्ञानी।। (2)

पानी यथा निम्न गामी होता तथाहि अज्ञानी-मोही।
दीपशिखा सम उर्ध्वगामी होते जो होते हैं निर्मोही-ज्ञानी।।
धोबी के समान परदोष ग्राही जो होते अज्ञानी-मोही।
वैद्य के समान दोष दूर करते जो होते निर्मोही-ज्ञानी ।।(3)

मच्छर - जोंक व कौआ-बगुला सम होते हैं अज्ञानी मोही।
इन से परे गाय-मधुप सम जो होते निर्मोही-ज्ञानी।।

विषम दर्पण सम होते दोषग्राही, समतल दर्पण सम गुणग्राही।
स्व-स्व-दोष गुणों के कारण, होते हैं दुर्गुणी व गुणी ।। (4)

निर्मोही ज्ञानी होते हैं सदा 'गुणगण कथा दोष वादेच मौनम्''
अज्ञानी-मोही होते हैं सदा ''गुणगाण मौनं दोषवादे च चपलम् ''।।
इन सब कारणों से दोषी जीव होते हैं स्व-पर घातक।
स्व-दोष बढाते गुणी निन्दक ''पृष्ठमांस भक्षी सम निन्दक'' ।। (5)

पूजा-प्रार्थना-स्तुति-वन्दना-तीर्थयात्रादि है गुण प्रशंसा।
गुण प्रशंसा से गुणग्राही जीव होते प्रसन्न व बान्धते पुण्यकर्म।।
उक्त कारणों से गुणग्राही जीव गुणवृद्धि से बनते हैं महान्।
यथा गाय घास खाकर भी दूध देती है अमृत सम।। (6)

प्रकाश सम व सुगन्धी सम गुणग्राही होते स्व-पर उपकारी।
अन्धेरा सम व दुर्गन्ध सम गुणद्वेषी होते स्व-पर अपकारी।।
सुअर व कुत्ता सम होते हैं दोषग्राही स्व-दोष के कारण।
मधुमक्खी व भ्रमर सम होते गुणग्राही स्व-गुण के कारण ।। (7)

धुआँ सम होते हैं दोषग्राही स्वयं मलीन व फैलाते दोष।
चन्दन सम होते हैं गुणग्राही होते शीतल व सुवासीत।।
गुण प्रशंसा से भी दोषग्राही जीव ईर्ष्या से जल-भुन जाते।
स्व-दोषों की प्रंशसा भी नवकोटि से चाहते।। (8)

ऐसे जीव तो तीर्थकर बुद्ध-ईसा-सुकरात की भी निन्दा करते।
स्व-सत्ता-सम्पत्ति-भोगोपभोग फैशन-व्यसन की प्रशंसा करते।।
पक्षीणां काक चाण्डाल पशु चाण्डाल गर्दभ कहां है नीतिकारों ने।
मुनिनां कोप चाण्डाल सर्व चाण्डाल निन्दक कहा उन्होंने।। (9)

मुनिनिन्दा से हुए श्रीपाल कुष्ठी अनमोदना से सात सौ सैनिक।
मुनि के प्रणाम से उच्च गौत्र मिले स्तवन (प्रशंसा) से मिले कीर्ति।।

ये सब मैंने ग्रन्थों में पढा व अनुभव कर रहा हूँ पूर्व से।
स्व-पर दोष गुण परिज्ञान से गुणवृद्धि करूँ 'कनक' सदा से।। (10)
ओबरी 22.01.2018 रात्रि 03:42 व 05:43

(अधिकतर लोग गुण-गुणी की प्रशंसा को अहंकार मानते हैं व स्व-कुगुणों की प्रशंसा मन-वचन-काय-कृत-कारित-अनुमोदना से चाहते हैं। इस दृष्टि से यह कविता बनी)

अहंकारी नहीं, बुद्धिमान लोगों की संगत में रहें

एक बार एक राजा अपने राजगुरु से अहंकार में पूछता है कि राजा को क्या करना चाहिए ? उसका क्या काम है ? राजगुरु कहते हैं कि आप वाकई में सीखना चाहते हैं ? राजा गुस्से में कहता है कि मैं सच में सीखना चाहता हूं। राजगुरु कहते हैं कि सीखने के लिए छात्र बनना होगा और एक छात्र अपने शिक्षक से ऊंची जगह पर नहीं बैठता।

इसलिए राज सिंहासन को छोड़कर जमीन पर बैठे और मैं आपके सिंहासन पर बैठूंगा। राजा चुपचाप जमीन पर और राजगुरु सिंहासन पर बैठ जाता है। राजगुरु चुप हो जाता है। इस पर राजा उन्हें पढ़ाने को कहता है। राजगुरु बोलते है कि राजा का कर्तव्य प्रजा में अहंकारी लोगों को सुधारना और नम्र व्यवहार के लोगों को आगे बढ़ाना है। ये सुन कर राजा को अपनी गलती का अहसास होता है।

वह राजगुरु से माफी मांगता है और गलती का एहसास कराने के लिए शुक्रिया अदा करता है। नम्र लोग जल्दी सीखते हैं। अहंकारी लोग आजीवन कुछ नहीं सीख पाते हैं। कुछ लोग सफलता दिमाग पर चढ़ा लेते हैं और यह अहंकार बन जाती है। अपने आस-पास ऐसे लोगों को रखें जो आपकी सफलता को जांच कर व्यवहार में आए बदलाव के बारे में बता सकें।

कुछ सफल लोग बुद्धिमान लोगों को साथ रखने के बजाय जी हुजूरी में विश्वास करने वाले लोगों में रहना पसंद करते हैं। ऐसे लोग सफल लोगों में नकारात्मक भावनाओं का संचार करते हैं। इससे सफल लोग खुद को विनाश की राह पर ले जाते हैं। समय-समय पर अपने दोस्तों का आकलन करें इससे आपको सही और

गलत का फर्क पता चलेगा। इनफोसिस के संस्थापक नारायण मूर्ति ने खूबसूरत जिंदगी व्यतीत की है।

उन्होंने कभी खुद को गलत आदतों, बातों या लोगों में फंसने नहीं दिया। उनकी सफलता में बुद्धिमान दोस्तों और पत्नी सुधा मूर्ति का महत्वपूर्ण योगदान है। अपने आस-पास रहने वाले बुद्धिमान लोगों का शुक्रिया अदा करते रहें। क्योंकि वे आपके पैर जमीन पर रखने में मददगार साबित होते हैं। आप जितना नम्र रहेंगे, उतना ज्यादा सीखेंगे। उतना आगे बढ़ेंगे। **विजया बत्रा**

संदर्भ :-

दुर्जन निन्दा

न बिना परिवादेन रमते दुर्जनो जनः।
श्वेव सर्वरसान् भुक्त्वा बिना मेध्यं न तृप्यते।। (1)

(सर्वोपयोगिश्लोक संग्रह)

दुर्जन मनुष्य निन्दा के बिना नहीं रमता, जैसे कुत्ता सब रसों को खाकर भी विष्ठा के बिना संतुष्ट नहीं होता।

दुर्जनेनोच्यमानानि वचांसि मधुराण्यपि।
अलीक कुसुमानीव त्रासं संजनयन्ति च।। (2)

दुर्जन के द्वारा कहे हुए वचन मधुर होने पर भी बनावटी फूलों के समान होते हैं तथा भय उत्पन्न करते हैं।

धर्मकृच्चेपदेशोऽहो दुष्टानां शान्तये न वै।
वर्धते तन कोपाग्निः सर्पाणां दुग्धपानवत्।। (3)

आश्चर्य है कि धर्म करने वाला उपदेश भी दुर्जनों की शांति के लिए नहीं होता। उससे उनकी क्रोधाग्नि ही बढ़ती है, जैसे दूध पिलाने से साँपों का विष ही बढ़ता हैं।

वृश्चिकस्य विषं पुच्छे भुजङ्गस्यापि तन्मुखे।
अहो बलभुजङ्गस्य ह्यापादतलमस्तके।। (4)

बिच्छु का विष उसकी पूँछ में होता है और साँप का विष उसके मुख में होता है परन्तु दुर्जनों रूपी साँप का विष पैर से लेकर मस्तक तक सर्व शरीर में होता है।

खलः सर्षपमात्राणि परच्छिद्राणि पश्यति।

आत्मनो बिल्वमात्राणि पश्यन्नपि न पश्यति।। (5)

दुर्जन दूसरों के सरसों बराबर दोष देखता है और अपने बेल के बराबर दोषों को देखता हुआ भी नहीं देखता है।

नालिकागतमपि कुटिलं न भवति सरलं शुनः पुच्छम्।

तद्वत् खलहृदयं बोधितमपि नैव याति माधुर्यम्।। (6)

जिस प्रकार कुत्ते की पूँछ नली में डालने पर भी टेढ़ी रहती है, सीधी नहीं होती, उसी प्रकार दुर्जन का हृदय समझाये जाने पर भी मधुरता को प्राप्त नहीं होता।

अहो भवति सादृश्यं मृदङ्गस्य खलस्य वा।

यावन्तमुखगतः पिण्डस्तावन्मधुरं भाषते।। (7)

आश्चर्य है कि मृदङ्ग और दुर्जन दोनों में समानता है क्योंकि जब तक पिण्ड आटा (पक्ष में भोजन) मुख में रहता है तब तक मधुर बोलता है।

खलःकरोति दुर्वृत्तं नूनं फलति साधुषु।

दशाननोऽहरत् सीतां बन्धनं च महोदधेः।। (8)

दुर्जन दुराचार करता है और उसका फल सज्जनों पर होता है, जैसे सीता का हरण रावण ने किया परन्तु बंधन समुद्र का हुआ।

गुणिनां गुणेषु सत्स्वपि पिशुनजनो दोषमात्रमादत्ते।

पुष्पे फले विरागी क्रमलेकः कण्टकौघमिव।। (9)

गुणी मनुष्यों के गुणों के रहते हुए भी दुर्जन दोष को ही ग्रहण करता है, जैसे फूल और फल में विरक्त रहता हुआ ऊँट काँटों के समूह को ही ग्रहण करता है।

परस्परं च मर्माणि ये वदन्ति नराधमाः।

ते नरा निधनं यान्ति बल्मीकोदरपन्नगौ।। (10)

जो अधम पुरुष परस्पर के मर्मों का कथन करते है वे वामी का मध्य और साँप के समान मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

अप्यात्मनो विनाशं गणयति न खलः परव्यसनहृष्टः।

प्रायः सहस्रनाशे समरमुखे नृत्यति कबन्धः।(11)

दूसरे के दुःख में हर्षित होने वाला दुर्जन अपने विनाश को भी नहीं गिनता

जैसे रणाङ्गण में हजारों के मरने पर कबंध (सिर रहित धड़) नृत्य करता है, उछलता रहता है।

विवृणोति खलोऽन्येषां दोषान् स्वांश्च गुणान् स्वयम।

संवृणोति च दोषान् स्वान् परकीया-गुणानपि विपुलान्।। (12)

खल मनुष्य दूसरे के दोषों को और अपने गुणों को स्वयं प्रकट करता है तथा अपने विशाल दोषों और दूसरे के विशाल गुणों को छिपाता है।

अगरु पर्वत मध्ये निम्बबीजं प्रतिष्ठितम्।

सिक्तो घट सहस्रेण निम्बः कि मधुरायते।। (13)

अगरु-चंदन के पर्वत के बीच में नीम का बीज लगाया, हजारों घड़ों से सींचने पर भी क्या नीम का फल मीठा हो सकता है ?

दुर्जनःपरिहर्तव्यो विद्यया भूषितोऽपिसन्।

मणिनालंकृतः सर्पः किमसौ न भयंकरः ।। (14)

विद्या से अलंकृत होने पर भी दुर्जन छोड़ देने योग्य है क्योंकि मणि से सुशोभित मणियारा साँप क्या भयंकर नहीं होता ?

खलानां कण्टकानां च द्विविधैव प्रतिक्रिया।

उपाहन्मुखभङ्गो वा दूरतो वा विवर्जनम्।। (15)

दुर्जनों और काँटों का प्रतिकार दो प्रकार से ही होता है या तो जूते के द्वारा उनका मुख भङ्ग कर दिया जाय या उन्हें दूर से छोड़ दिया जाय।

सर्पः क्रूर खलः क्रूरः सर्पात्क्रूरतरः खलः।

मन्त्रौषधैर्वशः सर्पःखलःकेनोपशाम्यते।। (16)

साँप दुष्ट है और खल भी दुष्ट है परन्तु साँप से खल अधिक दुष्ट है क्योंकि साँप तो मंत्र और औषध के द्वारा वश में किया जा सकता है पर खल किसके द्वारा शांत किया जाता है ? अर्थात् किसी से नहीं।

सर्प दुर्जनयोर्मध्ये वरं सर्पो न दुर्जनः।

सर्पो दशति कालेन दुर्जनस्तु पदे-पदे।। (17)

साँप और दुर्जन के बीच साँप कुछ अच्छा है दुर्जन नहीं क्योंकि साँप तो मृत्यु आने पर डसता है परन्तु दुर्जन पद-पद पर डसता है।

त्यक्त्वापि निजप्राणान् परसुखविघ्नं खलः करोत्येव।

निपतति कवले सद्यो वमयति खलु भक्षिका तु भोक्तारम।। (18)

खल मनुष्य अपने काम छोड़कर भी दूसरे के सुख में विघ्न करता ही है, जैसे मक्खी ग्रास में शीघ्र ही मरती है परन्तु खाने वाले को वमन करा देती है।

यत्र क्वापि गुणोपेतो न विश्वासास्पदं खलः।

वाणः प्राणपहरणे गुणयोगमपेक्षते।। (19)

खल मनुष्य जहाँ कही गुणों से सहित होने पर भी विश्वास का पात्र नहीं होता क्योंकि बाण प्राणों का अपहरण करने में गुण डोरी की अपेक्षा करता है।

दोषमेव समादत्ते न गुणं सगुणे जनः।

जलूकास्तनसंपृक्तं रक्तं पिबति नामृतम्।। (20)

दुर्जन मनुष्य गुण सहित मनुष्य में दोष ही ग्रहण करता है गुण नहीं क्योंकि जोंक स्तन के खून को ही पीती है दूध को नहीं।

सत्स्वपि सकलगुणेषु प्रतिगृह्णाति दुर्जनो दोषान्।

क्षीरं विद्वाय रूधिरं पिबति जलूकास्तनेऽपि संलग्ना।। (21)

समस्त गुणों के रहने पर भी दुर्जन दोषों को ग्रहण करता है क्योंकि स्तन पर लगी जोंक दूध छोड़कर रूधिर ही पीती है।

अहो प्रकृति-सादृश्यं श्लेष्मणो दुर्जनस्य च।

मधुरैः कोपमायाति कटुकैरूपशाम्यति।। (22)

आश्चर्य है कि कफ और दुर्जन का स्वभाव एक समान है क्योंकि वह मधुर-मीठी वस्तु (पक्ष में उत्तम शब्द) से क्रोध को प्राप्त होता है (पक्ष में वृद्धि को प्राप्त होता है) और कटुक कडुवे पदार्थ (पक्ष में कठोर व्यवहार) से शांत होता है।

अहो खलभुजङ्गस्य विपरीत वधक्रमः

कर्णे लगति चान्यस्य प्राणैरन्यो विमुरूच्यते।। (23)

अहो! दुर्जन रूपी सर्प दूसरों का वध विपरीत क्रम से करता है क्योंकि यह किसी दूसरे के कान में लगता है और प्राणों से कोई दूसरा छूटता है-मरता है। भाव यह है कि दुर्जन चुगलखोरी कर किसी अन्य को मारने के प्रयास करता है।

खलः सत्क्रियमाणोऽपि ददाति कलहं शतम्।

दुग्धधौतोऽपि किं याति वायसः कलहं सताम्।। (24)

सत्कृत होने पर भी दुर्जन सैकड़ों प्रकार की कलह को देता है, क्योंकि दूध से धोने पर भी क्या कौआ कलहंसपन को प्राप्त होता है ? अर्थात् नहीं।

चन्दनादपि संभूतो दहत्येव हुताशनः।

विशिष्ट कुलजातोऽपि यः खलः खल एव स।।(25)

जो खल है वह विशिष्ट कुल में उत्पन्न होकर भी खल ही रहता है, जैसे चंदन से भी उत्पन्न हुई अग्नि जलाती ही है।

चारूता परदारेभ्यो धनं लोकोपतप्तये।

प्रभुत्वं लोकनाशाय खले खलतरागुणाः।। (26)

खल मनुष्य की सुंदरता पर स्त्रियों को आकर्षित करने के लिए धन जगत् को संतप्त करने के लिए और ऐश्वर्य लोक का नाश करने के लिए होता है, इस तरह खल मनुष्य के गुण और भी अधिक खल होते हैं।

उपकारोऽपि नीचानां प्रकोपाय न शान्तये।

पयः पानं भुजङ्गनां केवलं विषवर्धनम्।। (27)

उपकार भी नीच मनुष्यों के क्रोध के लिए होता है शांति के लिए नहीं, क्योंकि साँपों को दूध पिलाना विष को ही बढ़ाता है।

क्षुद्रः क्षुद्रात्मलाभाय महतां विपदीक्षणम्।

मक्षिकाणामभावाय कुष्टी सूर्यास्तमीहते।।(28)

क्षुद्र मनुष्य अपने अल्प लाभ के लिए महापुरुषों की विपत्ति को देखता है, जैसे कोढ़ी मनुष्य मक्खियों का अभाव करने के लिए सूर्यास्त की इच्छा करता है।

ईषल्लब्धप्रवेशोऽपि स्नेह विच्छेदकारकः।

कृतक्षोभो नरीनर्ति खलो मन्थन दण्डवत्।। (29)

थोड़ा भी प्रवेश पाकर दुर्जन दुसरे के स्नहे-प्रीति का विच्छेद कर देता है, जैसे कि मंथन दण्ड दही के पात्र में प्रवेश पाकर क्षोभ उत्पन्न करता हुआ घूमता है और दही से स्नेह-घी को पृथक कर देता है।

तृणमिव गणयति लोकं नीचो यत्किंचिदपि पदं प्राप्य।
वृत्यारूढः पूषणमुत्पश्यन् हसति कृकलाशः।। (30)

नीच मनुष्य जिस किसी अल्पमत पद को पाकर अन्य मनुष्य को तृण के समान मानने लगता है, जैसे कि गिरगिट वाड़ी पर चढ़कर सूर्य की ओर देखता हुआ हँसता है और मन में सोचता है कि मेरी उँचाई के समाने सूर्य की उँचाई क्या है।

आनन्दयन्तं सुजनं त्रिलोकीं, गुणैः खलःकुप्यति वीक्ष्य दुष्टः।
किं भूषयन्तं किरणौस्त्रियामां, विलोक्य चन्द्रं ग्रसते न राहुः।। (31)

अपने गुणों के द्वारा तीनों लोकों को हर्षित करने वाले सज्जन को देखकर दुष्ट प्रकृति वाला दुर्जन क्रोध करता है। सो ठीक ही है, क्योंकि किरणों के द्वारा रात्रि को विभूषित करने वाले चन्द्रमा को क्या राहु ग्रसता नहीं है ? अवश्य ग्रसता है।

वाक्यं जल्पति कोमलं सुखकरं कृत्यं करोत्यन्यथा,
वक्रत्वं न जहाति जातु मनसः सर्पो यथा दुष्टधीः।
नो भूतिं पहते परस्य न गुणं जानाति कोपाकुलो,
यस्तं लोकविनिन्दितं खलजनं कः सत्तमः सेवते।। (32)

जो वचन तो कोमल और सुखकारी बोलता है पर कार्य विपरीत करता है। ऐसा दुष्ट-बुद्धि मनुष्य साँप के समान कभी भी मन की कुटिलता को नहीं छोड़ता है। वह दूसरे के वैभव को सहन नहीं करता और न क्रोध से व्याकुल होता हुआ दूसरे के गुण को सहन करता है, ऐसे लोक निन्दित खल मनुष्य की सेवा कौन सज्जन करता है ? अर्थात् कोई नहीं।

शङ्के भुजङ्ग पिशुनःकृतान्तः, परापकाराय कृता विधात्रा।
निरीक्षमाणा जनतां सुखस्थां, उद्वेजयन्ते कथमन्ययामी।। (33)

मैं ऐसा समझता हूँ कि विधाता ने जो सर्प, चुगलखोर और यमराज को बनाया है वह दूसरों का अपकार करने के लिए ही बनाया है अन्यथा ये सुख में स्थित जनता को देखकर उसे उद्विग्न क्यों करता हैं ?

जाड्यं ह्रीमति गण्यते व्रतरूचौ दम्भः शुचौ कैतवं,
शूरे निर्घृणताऽऽर्जवे विमतिता दैन्यं प्रियालापिनी।
तेजस्विन्यवलिप्तता मुखरता वक्तर्यशक्तिः स्थिरे,

तत्को नाम गुणो भवेत् सुगुणिनां यो दुर्जनैर्नाङ्कितः।। (34)

दुर्जन मनुष्य लज्जावान् व्यक्ति में मुर्खता, व्रत की रूचि रखने वाले में कपट, संतोषी में छल, शूरवीर में निर्दयता, सरलता में बुद्धिहीनता, मधुरभाषी में दीनता, तेजस्वी में अहंकार और दृढ़ वक्ता में शक्तिहीनता समझते हैं, इस प्रकार गुणी मनुष्यों का कौन गुण शेष रह जाता है जो दुर्जनों के द्वारा अंकित न किया गया हो।

दूरादुच्छ्रितपाणिरार्द्रनयनः संप्रोज्झितार्धासनो
गाढालिङ्गनतत्परः प्रियकथाप्रश्नेषु वत्तादरः।
अन्तर्गूढविषयो बहिर्मधुमुखश्चातीव मायामयः,
केनायं विपरीतनाटकविधिः संशिक्षितो दुर्जनः।। (35)

दुर्जन मनुष्य आदर प्रकट करने के लिए दूर से हाथ ऊपर उठाता है, नेत्रों में हर्ष के अश्रु प्रकट करता है, अपना अर्ध आसन छोड़ता है, गाढ़ आलिङ्गन करने में तत्पर रहता है और कुशल समाचार पूछने में आदर प्रकट करता है परन्तु भीतर विष छिपाकर रखता है तथा बाह्य मुख से मीठी-मीठी बात करता है, इस प्रकार माया से तन्मय दुर्जन के यह विपरीत नाटक की विधि किसने सिखलायी है ?

पोतो दुस्तरवारिराशितरणे दीपोऽन्धकारागमे,
निर्वाते व्यंजन मदान्धकरिणां दर्पोपशान्तेः सृणिः।
इत्यं तद्धुवि नास्ति यत्तु विधिना नोपायचिन्ताकृता,
मन्य दुर्जन चित्तवृत्तिहरणे धातापि भग्नोद्यमः।। (36)

विधाता ने दुस्तर समुद्र को तैरने के लिए जहाज, अंधकार के आने पर दीपक, वायु के अभाव में पङ्खा और मदोन्मत्त हाथियों का मद शांत करने के लिए अङ्कुश बनाया। इस प्रकार पृथ्वी पर वह वस्तु नहीं है जिसके उपाय की चिन्ता विधाता ने नहीं की हो परन्तु जान पड़ता है दुर्जन की मनोवृत्ति का हरण करने में विधाता भी भग्न पुरुषार्थ हो गये। तात्पर्य यह है कि दुर्जन की मनोवृत्ति को परिवर्तित करने का कोई उपाय नहीं है।

जिह्वैकैव सतामुञ्छेफणिभूतां स्रष्टुश्चतस्त्रोऽथवा,
ताःसप्तैव विभावसोर्नियमिताः षट्कार्तिकेस्य च।
पौलस्त्यस्य दशाभवन् फणिपतेर्जिह्वा सहस्रद्वयं,

जिह्वालक्षसहस्रकोटिनियमो नो दुर्जनानां मुखे।। (37)

सज्जनों के मुख में एक, सर्प के मुख में दो, ब्रह्मा के मुख में चार, अग्नि के मुख में सात, कार्तिकेय के मुख में छह, रावण के मुख में दश और शेषनाग के मुख में दो हजार जिह्वाएँ नियमित हैं परन्तु दुर्जनों के मुख में लाख, हजार और करोड़ जिह्वाओं का नियम नहीं है।

रासभो यदि तुरङ्गमायते, वायसो यदि कोकिलायते।
हंसवद् यदि बकोऽपि जायते, दुर्जनस्तदिह सज्जनायते।। (38)

यदि गधा घोड़े के समान आचरण करे, काक कोकिल हो जाय और बगुला हंस बन जाय तो दुर्जन सज्जन के समान आचरण करने लगे। पर यह सब संभव नहीं है।

न दुर्जनः सज्जनतामुपैति संसव्यमानो बहुभिः प्रकारैः।
सिक्तः पयः शर्करया घटेन न निम्बवृक्षो मधुरत्वमेति।। (39)

अनेक प्रकार से सेवा किये जाने पर भी दुर्जन सज्जनता को प्राप्त नहीं होता ठीक ही है, क्योंकि घट द्वारा दूध और शक्कर से सींचा गया नीम का वृक्ष मधुरता को प्राप्त नहीं होता।

कुसंगति निन्दा

पापं वर्धयते चिनोति कुमतिं कीर्त्यङ्गना नश्यति,
धर्म ध्वंसयते तनोति विपदं सम्पत्तिमुन्मर्दति।
नीतिं हन्ति विनीतिमत्रकुरते कोपं धुनीते शमं,
किं वा दुर्जनसङ्गतिर्न कुरूते लोकद्वय ध्वंसिनी।। (1)

(सर्वोपयोगिश्लोकसंग्रह)

कुसंगति पाप को बढ़ाती है, कुमति का संचय करती है, कीर्तिरूपी स्त्री नष्ट होती है, धर्म का विध्वंस करती है, विपत्ति को विस्तृत करती है, संपत्ति को नष्ट करती है, नीति और विनय का घात करती है, क्रोध को उत्पन्न करती है और शांति को दूर करती है। इस प्रकार दोनों लोकों को नष्ट करने वाली दुर्जन की संगति क्या-क्या नहीं करती है ?

सम्यग्दृष्टि जैन तथा मिथ्यादृष्टि(जैन बाह्य) का स्वरूप

- आचार्य कनकनन्दी

(चालः- आत्मशक्ति...)

गाथाः- **पुव्वं जिणेहि भणियं जहट्ठियं गणहरेहिं वित्थरियं।**
पुव्वाइरियक्कमजं, तं बोल्लइ जोहु सद्दिट्ठी।। (रयण 2)

भाव पद्यानुवादः जिनेन्द्र द्वारा कथित पूर्व में तथाहि गणधर से विस्तारित।
पूर्वाचार्य अनुक्रम से जो बोलता है वह है सम्यग्दृष्टि जीव।

गाथाः- **मदिसुदणाणबलेण दु, सच्छंदं बोल्लइ जिणुत्तमिदि।**
जो सो होइ कुदिट्ठी, ण होइ जिणमग्गरओ।।

भाव पद्यानुवादः मतिश्रुतज्ञान बल (मद) से जो स्वच्छन्द बोलता है यह है जिनोक्तमत।
वह होता है कुदृष्टि न होता है वह जिनेन्द्रमार्गरत।।

गाथाः- **भयविसणमलविवज्जिय, संसार सरीर भोग णिव्वण्णो।**
अट्ठगुणसमग्गो, दंसणसुद्धो हु पंचगुरुभत्तो।। (3)

भाव पद्यानुवादः भय व्यसन मल विवर्जित संसार-शरीर-भोगों से विरक्त।
अष्टगुणों से सहित पंचगुरुभक्तियुक्त होता दर्शन शुद्ध।।
ऐसे महान् गुण सहित होते हैं जो होते हैं सम्यग्दृष्टि।
अन्यथा होते कुदृष्टि उनकी होती जैन धर्म से विरक्ति।।
मिथ्यात्व व अनन्तानुबन्धी के उपशमादि के कारण।
जीव होते हैं सुदृष्टि जिन में होते उक्त गुणगण।।

मतिश्रुतज्ञान के मद से जो बोलते हैं स्वच्छन्द भाव से।
वे न होते हैं जैनधर्मी अन्तरंग परिणाम दुषित होने से।।
शुभ व शुद्ध परिणाम युक्त तथाहि अशुभ मिथ्यात्व परिणाम रिक्त।
अष्टमद व सप्तव्यसन रहित देव-शास्त्र व गुरु भक्त।।

अन्यथा होते हैं कुदृष्टि भले वे रीति-रिवाज पालन युक्त।
सम्यक्त्व तो आत्म परिणाम मिथ्यात्व होता विभाव युक्त।।

जो केवल ख्यातिपूजालाभ की कामना से होते संयुक्त।
संसार-शरीर-भोगों में आसक्त वे होते है मिथ्यात्वयुक्त।।

गाथाः- जे पावारंभरया कसायजुत्ता परिग्गहासत्ता।
लोय ववहार पउरा ते साहु, सम्म उम्मुक्का।। (रयण- 110)

भाव पद्यानुवादः जो पापारंभ में रत कषाय सहित व परिग्रह आसक्त।
लोक व्यवहार में प्रचुर वे साधु सम्यक्त्व से रहित।।
अन्तरंग-बहिरंग परिग्रह रहित होते हैं साधु कषाय रहित।
पापबन्ध कारक व लौकिक व्यवहार से रहित होते हैं श्रमण।।

ख्याति पूजा लाभ रहित व ध्यान-अध्ययन-साधना रत।
समता शान्ति निस्पृहता युक्त होते हैं साधु मोक्षमार्गरत।।
इससे भिन्न जो होते वे होते है सम्यक्त्व रहित।
उनके साधुत्व व्यर्थ आगम से वर्णन किया 'कनक' ।।

ओबरी 22.01.2018 वसन्त पंचमी रात्रि 8.35

दुर्गति का पात्र कौन ?

णाहि दाणं णहि पूया णहि सीलं णहि गुणं चा चारित्तं।
जे जइणा भणिया ते णेरइया हुंति कुमाणुसा तिरिया ।। 31।।

अर्थ :- जिन जीवों ने मनुष्य पर्याय प्राप्त करके सुपात्र को दान नहीं दिया, श्री जिनेन्द्र भगवान् की पूजा नहीं की, शीलव्रत (स्वदारसंतोष-परस्त्रीत्याग) पालन नहीं किया, मूलगुण और उत्तरगुण पालन नहीं किया चारित्र का पालन नहीं किया और श्री जिनेन्द्र देव की आज्ञा पालन नहीं की अर्थात् धर्म के आचरण तो नहीं किया। ऐसे वे मनुष्य मरकर परलोक में नारकी तिर्यंच अथवा कुमनुष्य होते हैं। ऐसा जिनेन्द्र देव ने कहा है।

हेयोपादेय से रहित जीव मिथ्यादृष्टि है

ण वि जाणइ कज्जमकज्जं सेवमसेयं च पुण्ण पावं हि।
तच्चमतच्चं धम्ममधम्मं सो सम्मउम्मुक्को।। 40।।

अर्थ :- जिस मनुष्य को कार्य अकार्य को, हित अहित को अर्थात् सेवन करने योग्य व असेवन करने योग्य क्या है, पुण्य क्या है और पाप क्या है, धर्म क्या है अधर्म क्या है, तत्व क्या है, अतत्व क्या है इसका विवेक नहीं है वह मनुष्य सम्यक्त्व से रहित है अर्थात् मिथ्यादृष्टि है।

हेयोपादेय रहित जीव के सम्यक्त्व कहां ?

ण वि जाणइ जोग्गमजोग्गं णिच्चमणिच्चं हेयमुवादेयं।
सच्चमसच्चं भव्वमभव्वं सो सम्मउम्मुक्को।। 41।।

अर्थ :- जो मानव अमूल्य ऐसे इस मानव देह को प्राप्त करके भी विवेक पूर्वक अब मेरे लिए क्या हेय-त्यागने योग्य है और उपादेय-ग्रहण करने योग्य क्या है, इस प्रकार हेय उपादेय के विवेक रहित प्रमादी मनुष्य निरंतर पापों की प्रवृत्ति करता है। सत्यार्थ क्या है, असत्यार्थ क्या है, नित्य का अर्थ क्या है अनित्य का अर्थ क्या है भव्य कौन है अभव्य कौन है भव्य अभव्य क्यों कहते है, सम्यक्त्व मिथ्यात्व क्यों कहते हैं इनका लक्षण क्या है आदि का जिनको विवेक विचार ज्ञान नहीं है वह मनुष्य सम्यक्त्व से रहित है अर्थात् धर्म से तत्वज्ञान से रहित मिथ्यादृष्टि है।

लौकिक जनों की संगति योग्य नहीं

लोइय जणसंगादो होइ मइमुहर कुडिल दुब्भावो।
लोइय संगं तम्हा जोइ वि तिविहेण मुंचा हो।। 42।।

अर्थ :- लौकिक मनुष्यों की प्रवृत्ति अर्थात् मनुष्य अधिक बोलने वाले (वाचाल) बक्कड़ कुटिल परिणामी और दुष्ट भावों से अत्यंत क्रूर विकृत परिणामी होते हैं इसलिये लौकिक मनुष्यों की संगति कभी नहीं करे। मन वचन काय से छोड़ देना चाहिये।

सम्यक्त्वरहित जीव का लक्षण

उग्गो तिव्वो दुट्ठो दुब्भावो दुस्सुदो दुगलावो।
दुम्मदरदो विरूद्धो सो जीवो सम्मउम्मुक्को।। 43।।

अर्थ :- उग्र प्रकृति वाले, तीव्र क्रोधादि प्रकृति वाले, दुष्ट स्वभाव वाले, दुर्भाव वाले, मिथ्या शास्त्रों के श्रवण करने वाले, दुष्ट वचन के कहने वाले, मिथ्याभिमान

को धारण करने वाले, आत्मधर्म से विपरीत चलने वाले और अतिशय क्रूर प्रकृति वाले मनुष्य सम्यक्त्व रहित होते हैं।

क्षुद्र स्वभावी व दुर्भावना युक्त जीव सम्यक्त्व हीन हैं

खुद्दो रूद्दो रूट्ठो अणिट्ठपिसुणा सग्गत्थि असूयो।
गायण जायण भंडण दुस्सुणसीलो दु सम्मउम्मुक्को।।44।।

अर्थ :- क्षुद्र प्रकृति वाले रौद्र परिणामी, क्रोधी चुगलखोर कामी, गर्विष्ठ, असहनशील, द्वेषी, गायन करने वाले, याचना करने वाले, लड़ाई झगड़ा करने वाले, दूसरों के दोषों को प्रकट करने वाले, निंद्य पापाचारी और मोही मनुष्य धर्म तथा सम्यक्त्व से रहित होते हैं।

जिन-धर्म विनाशक जीवों के स्वभाव

वाणर गद्दह साण गय वग्ध वराह कराह।
पक्खि जलूय सहावणर जिणवरधाम विणासु।। 45।।

अर्थ :- बंदर स्वभाव वाले, गधे के स्वभाव वाले, कुत्ते के स्वभाव वाले, हाथी के स्वभाव वाले, बाघ के स्वभाव वाले, शूकर के स्वभाव वाले, पक्षी के स्वभाव वाले, जलूकादि स्वभाव वाले मनुष्य श्री जिनेन्द्र देव प्रणीत धर्म को धारण नहीं कर सकते हैं। धर्म का लोप करने वाले होते हैं।

रत्नत्रय में सम्यग्दर्शन की मुख्यता

सम्मविणा सण्णाणं सच्चारित्तं ण होइ णियमेण।
तो रयणत्तयमज्झे सम्मगुणक्किट्ठमिदि जिणुदिट्ठं।।47।।

अर्थ :- सम्यग्दर्शन के बिना सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र नियम पूर्वक नहीं होते हैं। जिसके सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र रूप रत्नत्रय में सम्यक्त्वगुण प्रशंसनीय है। ऐसा जिनेन्द्र भगवान् ने कहा है।

अहो ! सबसे बड़ा कष्ट मिथ्यात्व

तणुकुट्ठी कुलभंगंकुणइ जहा मिच्छमप्पणो वि तहा।
दाणाइ सुगुण भंगंसुगइभंगं मिच्छमेव हो कट्ठं।। 48।।

अर्थ :- जिस प्रकार कोढ़ी रोगवाला मनुष्य कुष्ठ रोग शरीर के कारण अपने

कुल को नष्ट करता है ठीक उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि मनुष्य दान पूजा चारित्र और धर्मायतनों का विध्वंस करता है, इसलिये मिथ्यात्व बहुत ही कष्टप्रद दुःखदायक है।

मिथ्यात्व से समस्त आत्मीय गुण नष्ट हो जाते हैं और सच्चे देव शास्त्र गुरु तथा धर्माचरणों से विपरीत भाव व क्रिया बनते हैं। अर्थात् मिथ्यात्व का सेवन करना महा दुःखों का ही कारण है।

भावार्थ :- मिथ्यात्व से शुभ भाव, शुभ क्रिया, शुभगति, सुकुल, सदगुण, धर्माचरण, स्वर्ग मोक्ष आदि सभी दूर होते हैं।

सम्यग्दृष्टि ही धर्मज्ञ है

देवगुरुधम्मगुण चारित्तं तवायार मोक्खगइ भेयं।
जिणवयणसुदिट्ठिविणा दीसइ किह जाणए सम्मं।।41।।

अर्थ :- मनुष्य सम्यग्दर्शन के बिना देव गुरु धर्म क्षमादि गुण चारित्र तप मोक्षमार्ग तथा श्री जिनेन्द्र भगवान् के वचन को सही रूप से यथार्थरूप से नहीं जान सकते हैं।

भावार्थ :- वास्तव में जिनके सम्यग्दर्शन नहीं है उनके देव, शास्त्र, गुरु, धर्म, उत्तम क्षमादि गुण, सामायिक छेदोपस्थापना परिहार विहार विशुद्धि सूक्ष्मसांप्राय यथाख्यात चारित्र को, तपाचार को और मोक्षमार्ग को भी नहीं जानते हैं।

मिथ्यादृष्टि की पहचान

एक्कजु खणं ण विचिंतइ मोक्खणिमित्तं णियप्पसाहावं।
अणिसं विचित्तपावं बहुलालावं मणे विचिंतेइ ।। 50।।

अर्थ :- मोही अज्ञानी संसारी प्राणी मिथ्यादृष्टि जीव एक क्षण मात्र भी अपने लिए मोक्ष प्राप्ति के लिए मोक्ष सिद्धि के लिए अपने आत्म स्वरूप का विचार चिंतवन मनन नहीं करता है परन्तु दिन रात आरंभ परिग्रह आदि परवस्तु के पाप कार्यों का बार बार विचार व चिंता करता है।

साम्य भाव का घातक

मिच्छामइमय मोहा सवमत्तो बोलए जहा भुल्लो।
तेण ण जाणइ अप्पा अप्पाणं सम्म भावाणं ।। 41।।

अर्थ :- मिथ्यामति-मिथ्यादृष्टि, जीव मिथ्याबुद्धि के अभिमान से मदोन्मत्त होकर मदिरापान करने वाले मार्ग भ्रष्ट भुल्लड मनुष्य के समान यद्वा तद्वा मिथ्या प्रलाप करते हैं, और वे मोह के उदय से अपनी आत्मा को नहीं जानते हैं। तब अपनी आत्मा के समता भाव को कैसे जानेंगे ? अर्थात् सर्वथा नहीं जानेंगे।

कर्मक्षय का हेतु सम्यक्त्व

मिहरो महंधयारं मरूदो मेहं महावणं दाहो।
वज्जो गिरिं जहाविय सिंजइ सम्मे तहा कम्मं ।। 42।।

अर्थ :- जिस प्रकार सूर्य अंधकार को तत्काल नष्ट करता है। वायु मेघ के समूह को नाश कर देती है। दावानल वन को जला देता है। वज्र पर्वतों का भेदन (चूर्ण) कर देता है। उसी प्रकार एक सम्यक्त्व भी समस्त कर्मों का नाश कर देने में समर्थ है।

सम्यग्दृष्टि जैन होते निजशुद्धात्मा में अनुरक्त

(सम्यग्दृष्टि जैन होते 44 दोष रहित, 77 गुण सहित)

- आचार्य कनकनदी

(चाल:- जय हनुमान .....)

सम्यग्दृष्टि जैनों के स्वरूप को जानो, निजशुद्ध आत्मा में अनुरक्त मानो।
चवालीस(44)दोष रिक्त सतहत्तर(77)गुणयुक्त,प्राथमिक मुमुक्षु के गुण पहचानो।। (1)

गाथा : णियसुद्दप्पणुरत्तो बहिरप्पावच्छवज्जिओ णाणी।
जिणमुणिधम्मं मण्णइ गइदुक्खीहोइ सद्दिट्ठी ।। (6) (र.सा.)
मयमूढमणायदणं संकाइवसण भयमईयारं।
जेसिं उदालेदो ण संति ते होंति सद्दिट्ठी।। (7)
उहयगुणवसण भयमलवेरग्गाइचारभत्तिविग्घं वा।
एदे सत्तत्तरिया दंसणसावयगुणा भणिया ।। (8)

सम्यग्दृष्टि श्रद्धान करता स्वयं का, निश्चय से मैं हूँ शुद्ध परमात्मा।
बहिरात्मा व पर पदार्थ रहित मैं हूँ, देव-शास्त्र-गुरु के भक्त भी मैं हूँ।।

आठ (8) मद व तीन (3) मूढता रहित, छह (6) अनायतनों से भी विरक्त।
शंकादि आठ (8) दोषों से रहित, सप्त (7) व्यसनों से भी विरक्त ।। (2)

सप्त (7) भयों से भी रहित, पंच (5) अतिचारों से भी विरक्त।
चवालीस (44) गुण अतः प्रगट होते, बारह (12) व्रतों से वे सहित (भी) होते।।
वैराग्य भाव व भक्ति सहित भी, विघ्न रहित सत्तहत्तर (77) गुण सहित।
उक्त गुणों में निहित सभी नैतिक गुण, व्यक्तिगत-सामाजिक-राष्ट्रीय भी गुण । (3)

वे न करते अन्याय-अत्याचार-पापाचार, शोषण-मिलावट व भ्रष्टाचार।
फैशन-व्यसन व ढोंग-आडम्बर, परनिंदा-अपमान-हत्या-बलात्कार।।
अतः वे न करते कभी भी अपराध, अतः उन्हें न होता कानून से भय।
दान-दया-परोपकार करते सदा, मैत्री-प्रमोद-कारूण्य-माध्यस्थ मुद्रा।। (4)

ज्ञान-वैराग्य-वृद्धि से वे बनते श्रमण, समता-शांति निस्पृहता से करते ध्यान।
आत्मविशुद्धि से बनते अरिहंत-सिद्ध 'कनक' का लक्ष्य है अरिहंत-सिद्ध।। (5)
ओबरी दि. 24.01.2018 रात्रि 10:43

भारत के 69 वें गणतन्त्र दिवस के उपलक्ष्य में

लौकिक जन ₹/ल आध्यात्मिकजन)

(सम्यग्दृष्टि मुमुक्षु के समस्त भाव व लक्ष्य अलौकिक होते है!

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल:- वैष्णव जन तो...2. सायोनारा)

लौकिक जन तो तेने कहिए.. जे भौतिक दृष्टि सहित हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे 'चैतन्य दृष्टि' सहित हैं...

लौकिक जन तो तेने कहिए..जे शरीर को 'मैं' माने हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे आत्मा को 'मैं' माने हैं...

लौकिक जन तो तेने कहिए..जे अज्ञान-मोह से सन्तप्त हैं...

आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे 'श्रद्धा-प्रज्ञा' से सहित हैं ...

लौकिक जन तो तेने कहिए..जे ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा (से) मूर्च्छित हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे सत्य-समता-शान्ति सहित हैं...

लौकिक जन तो तेने कहिए..जे 'सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि मोहित हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जें 'आत्म विश्वास ज्ञान चर्या' पूर्ण हैं...

लौकिक जन तो तेने कहिए..जे फैशन-व्यसनों से उत्तप्त /(मस्त) हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे सरल-सहज-सन्तोषी हैं...

लौकिक जन तो तेने कहिए..जे संकीर्ण स्वार्थ हेतु प्रयत्न हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे परमार्थ साधना में रत हैं ...

लौकिक जन तो तेने कहिए..जे 'शत्रुता-मित्रता भाव' सह हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे 'मैत्री प्रमोद करूणा साम्य' युत हैं...

लौकिक जन तो तेने कहिए..जे 'दिखावा-आडम्बर' सहित हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे 'मौन-एकान्त साधना' रत हैं...

लौकिक जन तो तेने कहिए.. जे 'दीन-हीन-अहंकार' सहित हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए.. जे 'स्वाभिमान-सोऽहं-अहं' सह हैं।

लौकिक जन तो तेने कहिए..जे 'प्रतिस्पर्द्धा-वर्चस्व' सहित हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे 'आत्मशुद्धि-प्रगति' सह है...

लौकिक जन तो तेने कहिए..जे 'परनिन्दा-अपमान' सहित हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए.. जे 'आत्म-विश्रेषण-समीक्षा' सह हैं...

लौकिक जन तो तेने कहिए.. जे 'सकीर्णता-कट्टरता' सहित हैं...
आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे 'उदारता-पावनता' सहित हैं...

लौकिक जन तो तैने कहिए..जे 'तन-मन-इन्द्रियों के' दास हैं...

आध्यात्मिक जन तेने कहिए..जे 'तन-मन-अक्ष' को बनाते दास हैं...

बाह्य में दोनों समान होने पर भी ..भाव व लक्ष्य में भिन्न हैं...
लौकिक जन आध्यात्मिक जनों को न समझ पाते 'कनक' किया वर्णन हैं...
ओबरी, दि. 26.01.2018 रात्रि 12:08

संन्यासी सिद्धेश्वर स्वामी जी ने पद्मश्री लेने से किया इनकार

कर्नाटक के आध्यात्मिक गुरु सिद्धेश्वर स्वामीजी ने पद्मश्री लेने से इनकार कर दिया है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को लिखी चिट्ठी में उन्होंने कहा कि सन्यासी होने के नाते उनकी अवॉर्ड्स में दिलचस्पी नहीं हैं। गौरतलब है कि आध्यात्मिक गुरु सिद्धेश्वर स्वामीजी को हाल में घोषित पद्म अवार्ड में अध्यात्म के क्षेत्र में पद्मश्री के लिए चुना गया है।

उन्होंने लिखा, ''मैं सम्मानित पद्मश्री अवॉर्ड देने के लिए भारत सरकार को धन्यवाद देता हूं, लेकिन आपके और सरकार के पूरे सम्मान के साथ मैं कहना चाहता हूं कि मैं अवॉर्ड नहीं लेना चाहता।' उन्होंने उम्मीद जताई कि पीएम नरेन्द्र मोदी उनके सम्मान न लेने के फैसले का समर्थन करेंगे।

काम का दबाव इतना कि 89% लोग वाट्सएप पर ही मिलते हैं रिश्तेदारों से !

आजकल लोगों पर काम का दबाव इतना अधिक रहता है कि उन्हें रिश्तेदारों से मिलने का समय ही नहीं मिल पाता है। एक सर्वे में 53% लोगों ने कहा कि उन्हें परिजनों से मिलने का वक्त नहीं मिलता वही 90% के मुताबिक समय नहीं मिलने के कारण दोस्त ही उनके रिश्तेदारों की तरह हो गए हैं। 89% लोगों के लिए वाट्सअप रिश्तेदारों से मिलने की नई जगह बन गया है। मार्केट रिसर्च एजेंसी नील्सन और ब्रिटानिया गुडडे ने यह सर्वे किया है। एजेंसी ने इसके लिए मुंबई, दिल्ली, बेंगलुर, चेन्नई, कोलकाता और हैदराबाद में 769 लोगों से बात की। सर्वे में शामिल लोगों की उम्र 15 से 40 साल थी।

सर्वे के अनुसार काम के दबाव में 76% लोगों को तीन साल में कम से कम

एक बार छुट्टी कैंसिल करनी पड़ी। दूसरे शहरों की तुलना में दिल्ली के प्रोफेशनल अपने रिश्तेदारों के साथ कम समय बिताते हैं। कोलकाता के 25% लोग तो चचेरे-मौसेरे भाई-बहनों के नाम तक नहीं बता पाए।

सर्वे में पता चला कि पिछले साल 76% लोगों ने रिश्तेदारों से दूर रहकर त्योहार बिताए। 50% ने कहा कि तीन साल से वे त्योहारों में रिश्तेदारों से मिलने नहीं जा पाए। 50% युवाओं ने तो बीते सालभर में दादा-दादी या नाना-नानी के साथ 10 दिन भी नहीं बिताए। और तो और 25 साल तक के युवाओं को एक साल में भाई-बहनों के साथ भी 10 दिन बिताने का वक्त नहीं मिला।

इस उम्र के 25% युवा तीन साल से दादा-दादी या चाचा-चाची से नहीं मिले।

इंजीनियरिंग : गिरता स्तर, जिम्मेदार कौन ?

देश में हजारों इंजीनियर ऐसे हैं जो रोजगार पाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं जबकि दूसरी ओर शिक्षा के सारे मानकों को धता बताते हुए नित नए इंजीनियरिंग कॉलेज खुल रहे हैं। अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एचआईसीटीई) पहले ही आशंका जता चुकी है कि तीव्र गति से नई इंजीनियरिंग कॉलेजों का खुलना शिक्षा के स्तर में गिरावट लाएगा लेकिन एआईसीटीई ही राजनीतिक दबावों के चलते कॉलेजों को मान्यता देती जा रही है। आज देश में कुल 3500 इंजीनियरिंग कॉलेज हैं जिनमें प्रतिवर्ष करीब 15 लाख युवा इंजीनियरिंग स्नातक बनकर निकलते हैं। उनमें से केवल कुछ को ही नौकरी मिलती है। देश में करीब 80 फीसदी इंजीनियर बेरोजगार हैं। कंपनियों की शिकायत है कि उन्हें कुशल प्रतिभावान् इंजीनियर नहीं मिल रहे हैं। फिलहाल इंजीनियरिंग कॉलेजों की बढ़ती भीड़ को कम करने और कुछ पाठ्यक्रमों को बंद करने की सख्त जरूरत है। भारत का तकनीकी शिक्षा नियामक इंजीनियरिंग स्नातक सीटों में कटौती पर विचार कर रहा है। अगले कुछ वर्षों में कुछ संस्थानों को बंद करके व विद्यार्थियों की भर्ती में कमी कर शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार किया जाएगा। सभी विद्यार्थियों, शिक्षा प्रदाताओं और नियोक्ताओं की बेहतरी के लिए यह कमी करना जरूरी हो गया है। एआईसीटीई के आंकड़ों के मुताबिक इस साल इंजीनियरिंग के 556 पाठ्यक्रम बंद कर दिए गए हैं जबकि आवेदन 1442 पाठ्यक्रमों

को बंद करने के मिले थे। देश के 122 निजी इंजीनियरिंग कॉलेज स्वप्रेरणा से बंद हो गए। इसका अर्थ है कि इन कॉलेजों में 2017 से कोई नई भर्तिया नहीं की गई।

कॉलेज में 2017 से कोई नई भर्तियां नहीं की गई। एआईसीटीई देश भर में करीब 800 इंजीनियरिंग कॉलेज बंद करना चाहती है क्योंकि उनकी खाली पड़ी सीटे कोई नहीं भरना चाहता। इंजीनियरिंग कॉलेज मुश्किल में है। इंजीनियर स्नातक नौकरियों की कमी व बढ़ते कर्ज का बोझ ढोने को मजबूर है। रिजर्व बैंक के अनुसार, शिक्षा ऋण ना चुकाने वालों की संख्या बढ़कर 142 फीसदी हो गई है। नब्बे दिनों से अधिक अवधि तक ऋण ना चुका पानी के चलते मार्च 2013 से दिसम्बर 2016 के बीच यह क्षेत्र में बैंकों की गैर निष्पादित आस्तियां (एनपीए) राशि 6336 करोड़ रुपए तक पहुंच गई। अगस्त 2017 में वित्त मंत्रालय ने इंडियन बैंकिंग एसोसिएशन के हवाले से संसद में बताया कि शिक्षा के क्षेत्र में मार्च 2015 में एनपीए की रकम 3536 करोड़ रुपए थी, जो बढ़कर मार्च 2017 में और अधिक बढ़ गई है। बेरोजगारी के कारण इंजीनियर ये कर्ज चुका पाने में सक्षम नहीं।

खोटा भाव-कथन-काम सुलभतम

(कुभाव-सुभाव व शुद्धभावों के फल)

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : - छोटी-छोटी गैया...)

खोटा/(छोटा) सोचना, खोटा/ (तुच्छ) बोलना, खोटा/ (पाप) करना है सुलभतम।
इससे विपरीत श्रेष्ठ सोचना व सत्य बोलना ज्येष्ठ (पुण्य-श्रेय) करना दुलर्भतम।
अनादिकालीन कर्म संस्कार से, जीवों में होते हैं राग-द्वेष-मोह।
कामक्रोध व ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा,अतएव खोटा सोचनादि सुलभ ।। (1)

निम्नगामी यथा होती है नदी, गुरुत्वाकर्षण व जलभार के कारण।
तथाहि जीवों की निम्न प्रवृत्तियाँ होती कुसंस्कार के कारण।
अनुकूल नदी स्त्रोत में यथा नौका को, खेकर ले जाना (है) सरल।
प्रतिकूल नदी स्रोत में नौका को, खेकर ले जाना दुरूह /(कठिन) ।। (2)

खोटा सोच होता है संकीर्णता व, क्रूरता-स्वार्थपरता भाव।
दीन-हीन व अहंकार भाव, परनिन्दा अपमान व भेद भाव।।
परप्रतिस्पर्द्धा व अन्धानुकरण, यथा भेड-भेड़िया चाल।
दिखावा-आडम्बर-ढोंग-पाखण्ड, तनाव-डिप्रेशन-भय-प्रलोभन ।। (3)

खोटा सोच के अनुकूल बोलना, मुँह में राम बगल में छूरी।
'गोमुख व्याघ्र'' बगुला भगत सम, व्यवहार ये (हैं) उदाहरण खोटी प्रवृत्ति।।
इससे पर हैं भाव व वचन, तथाहि व्यवहार होते हैं।
स्व-पर-विश्वकल्याण हेतु, उदार व पावन होते हैं।। (4)

सनग्रसत्यग्राही व सरल-सहज-निच्छल-निश्चल होते हैं।
दया-दान-सेवा-परोपकार युक्त, निर्मल व निर्भय होते हैं।।
खोटे विचार आदि होते हैं, प्राचीन-व्यापक घोर अन्धाकर सम।
किन्तु नवीन प्रकाश से नष्ट हो जाता, 'तथाहि सुभाव' से कुभाव।। (5)

कुभाव नष्ट से कुवचन-व्यवहार, नष्ट हो जाते हैं अनिवार्य।
यथा बीज नष्ट से अंकुर से वृक्ष तक, नहीं विकसित होते निश्चय।।
अन्यथा कुभावादि नष्ट होना, नहीं हैं सरल-सहज।
केवल बाह्य शिक्षा-कानून-राजनीति (व) भौतिक-विकास से धर्म तक।। (6)

भाव पवित्र हेतु यदि शिक्षादि, बनते हैं तो सभी हितकारी।
अन्यथा शिक्षादि और भी अधिक, बनते हैं अहितकारी।।
कुभाव से पाप, सुभाव से पुण्य, तथाहि शुद्ध से मिलता मोक्ष।
भाव से भावी का निर्माण होता, 'कनक सूरी' अतः भाव को माने मुख्य। (7)

ओबरी 18.01.2018 मध्याह्न 01:56

सन्दर्भ :-

सर्वधर्म मयं क्वचित्क्वचिदपि प्रायेण पापात्मकं।
क्वाप्येतद् द्वयवत्करोति चरितं प्रज्ञाधनानामपि।।

तस्मादेष तदन्धरज्जुवलनं स्नानं गजस्थायथा।
मत्तोमत्तविचेष्ठितं न हितो गोहाश्रमः सर्वथा।। 41।। (आत्मानुशासन)

गृहस्थाश्रम विद्वज्जनों के चारित्र को भी प्रायः किसी सामायिक आदि शुभकार्यों में पूर्णतया धर्मरूप, किसी विषय भोगादि रूप कार्य में पूर्ण तथा पापरूप तथा किसी जिन गृहादि के निर्माणादि रूप कार्य में उभय (पाप-पुण्य) रूप करता है। इसलिये यह गृहस्थाश्रम अन्धे के रस्सी मांजने के समान है अथवा हाथी स्नान के समान अथवा शराबी या पागल की प्रवृत्ति के समान सर्वथा हितकारक नहीं है।

अनाद्यविद्याा दोषोत्थ चतुः संज्ञाज्वरातुराः।
शवत्वस्वज्ञान विमुखाः सागारा विषयोन्मुखा।।

(पं. आशाधर सा. ध. 2)

अनादिकाल अविद्यारूपी दोषों से उत्पन्न होने वाली आहार भय मैथुन परिग्रह रूपी संज्ञा ज्वर से पीड़ित आत्मज्ञान से विमुख एवं विषयों के सुख में आसक्त गृहस्थ होते हैं अर्थात विषय भोगों में विशेष रत होने के कारण उनका लक्ष्य मोक्ष सुख में नहीं जाता है।

अनाद्यविद्यानुस्थूतां ग्रंथसज्ञामपासितुम्।
अपरायन्तःसागाराःप्रायो विषय मूर्च्छिता।। (सा.ध. 3)

अनादिकालीन अज्ञान के कारण परम्परा से आने वाली परिग्रह संज्ञा को छोड़ने के लिये असमर्थ प्रायः विषय भोगों में मूर्च्छित गृहस्थ होते हैं। भद्रध्यानी गृहस्थ जब तक धार्मिक शुभ क्रियायें करता है तब तक वह भोगोपभोग को त्याग करता है। इसलिये गृहस्थों की धार्मिक क्रियायें हस्तिस्नानवत् है। अर्थात् धार्मिक क्रियाओं के समय में किंचित् संवर और निर्जरा होती है परन्तु भोगोपभोग के समय आस्रव एवं बंध हो जाता है।

पंचम गुणस्थानवर्ती गृहस्थों को होने योग्य ध्यान :-

इस पंचम गुणस्थान में आर्त-रौद्र ध्यान एवं भद्र ध्यान होता है, श्रावक बहु आरम्भ और परिग्रह से सहित होने के कारण उनको धर्म ध्यान नहीं होता है।

कृषि वाणिज्यादि व्यापार करने वाले गृहस्थों को नाना प्रकार के इन्द्रिय मोहक पदार्थ विषय में आर्तध्यान उत्पन्न होता है। मोह से युक्त गृहस्थों को रौद्र ध्यान भी होता

है। पर दोनों ध्यान से उत्पन्न पाप को उपशामानेवाले एवं ध्यान संपन्न श्रावक भद्रध्यान के माध्यम से नाश करता है।

अशुभ कार्य का नाश होकर शुभ कर्मों की प्राप्ति किन उपायों से होगी ऐसा विचार करने वाले गृहस्थ अपाय विचय नामक धर्मध्यान का स्वामी होता है।

यह चार प्रकार का धर्मध्यान मुख्य रीति से अप्रमत्त गुणस्थान में होता है एवं देश विरत और प्रमत्त विरत इन दोनों गुणस्थानों में उपचार से धर्म ध्यान होता है। ऐसा जानना चाहिये।

जो शुद्ध भाव करने योग्य है। उसकी प्राप्ति पन्द्रह प्रकार के प्रमाद से रहित सकल चारित्र से युक्त अप्रतम विरत गुणस्थान में होती है।

इन्द्रिय विसय विरामे मणस्स णिल्लूणं हवे जइया।
तइया तं अविअप्प समरूवे अप्पणो तं तु।। (तत्त्वसार गा. 6)

जब इन्द्रिय विषयों से विरक्त हुआ मन स्थिति को प्राप्त होता है तब निर्विकल्प तत्त्व अपने स्वस्वरूप में स्थिरता को प्राप्त होता है।

समणे:णिच्चल भूये णट्ठे सव्वे वियप्प संदोहे।
थक्को सुद्ध सहावो अवियप्पो णिच्चलो णिच्चो।। (गा. 6)

सर्व विकल्प समूह नाश होने पर एवं मन स्थिर होने पर निर्विकल्प स्थिर, निश्चय, नित्य अर्थात् शाश्वत ऐसा शुद्ध स्वभाव प्रगट होता है।

ध्याता का लक्षण :-

या मुज्जह मा रजह मा दुस्सह इट्ठणिट्ठ अट्ठेसु।
स्थिरमिच्छहि जह चिंत्त विचित्त झाणप्प सिद्धिए।। (द्र.सं.गा. 48)

हे भव्य जनों! यदि तुम नाना प्रकार के ध्यान अथवा विकल्प रहित ध्यान की सिद्धि के लिए चित्त को स्थिर करना चाहते हो तो इष्टनिष्ट रूप जो इन्द्रियों का विषय है उनमें राग-द्वेष और मोह को मत करो।

समस्त राग-द्वेष-मोह से उत्पन्न हुए विकल्पों के समूह से रहित जो निज परमात्मा के समूह की भावना से उत्पन्न हुआ परमानन्द रूप एक लक्षण सुखामृत उससे उत्पन्न हुई और परमात्मा के सुख आस्वादन में तत्पर हुए जो मग्न हुई परम

कला अर्थात् परम संविति है उसमें स्थिर होकर हे भव्य जीवों ! मोह राग-द्वेष को मत करो।

शंका : किन में राग-द्वेष-मोह मत करो ?

समाधान : माला, स्त्री, चन्दन, ताम्बुल आदि रूप जो इन्द्रियों के विषय में राग-द्वेष-मोह मत करो। यदि तुम परमात्म के अनुभव में निश्चल चित्त को जानना चाहते हो तो नाना प्रकार जो ध्यान है उसकी सिद्धि के लिये चित्त से उत्पन्न होने वाला शुभाशुभ विकल्पों का समूह जिसमें विचित्त ध्यान, उस विचित्त ध्यान अर्थात् निर्विकल्प ध्यान के लिये राग-द्वेष-मोह मत करो।

इष्ट वियोग-अनिष्ट संयोग रोग को दूर करने तथा भोगोपभोगों के कारणों की इच्छा रखने रूप भेदों से चार प्रकार का आर्त ध्यान है। यह आर्त ध्यान न्यूनाधिक भाव से मिथ्यादृष्टि गुणस्थान को आदि लेकर प्रमत्त विरत गुणस्थान पर्यन्त जो छः गुणस्थान है उनमें रहने वाले जीवों को होता है। और यह आर्त्तध्यान यद्यपि मिथ्यादृष्टि जीवों के तिर्यंच गति के बन्ध का कारण होता है तथापि जिस सम्यग्दृष्टि ने पहले तिर्यंच गति की आयु को बाँध लिया है उस सम्यग्दृष्टि जीव को छोड़कर अन्य जो सम्यग्दृष्टि जीव हैं उनके तिर्यंच गति के बन्ध का कारण नहीं है। क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीवों के निज शुद्धात्मा के ग्रहण करने की भावना के बल से तिर्यंच गति का कारण जो संक्लेश भाव है उसका अभाव है।

हिंसानन्द, मृषानन्द चौर्यानन्द और परिग्रहानन्द या विषयसंरक्षणानन्द के भेद से रौद्रध्यान चार प्रकार का है। यह न्यूनाधिक भाव से मिथ्यात्व गुणस्थान से पंचम गुणस्थान पर्यंत रहने वाले जीवों को उत्पन्न होता है। यह रौद्र ध्यान मिथ्यादृष्टि जीवों के लिए नरक गति का कारण है तो भी सम्यग्दृष्टि ने नरकायु बन्ध की है उसको छोड़कर अन्य सम्यग्दृष्टियों को नरकगति का कारण नहीं है। क्योंकि सम्यग्दृष्टि के नरकगति का कारण नहीं है। क्योंकि सम्यग्दृष्टियों के निज शुद्धात्मा ही उपादेय है। इसलिये विशिष्ट ध्यान के बल से नरक गति का कारणभूत जो तीव्र संक्लेश नहीं होता है।

आज्ञा विचय-अपाय विचय-विपाक विचय एवं संस्थान विचय इन चार भेदों से भेद को प्राप्त हुआ धर्मध्यान न्यूनाधिक वृद्धि के क्रम में अविरत सम्यग्दृष्टि,

देशविरत, प्रमत्त संयत और अप्रमत्त संयत गुणस्थानवर्ती जीवों को उत्पन्न होता है। मुख्यवृत्या पुण्यबन्ध कारणमपि परंपराया मुक्ति कारणं चेति धर्मध्यानं '' यह धर्मध्यान मुख्यरूप से पुण्यबन्ध का कारण है तो भी परंपरा से मोक्ष का कारण है।

विकथा व सुकथा

पापकारक विकथा त्यजनीय, पुण्यकारक सुकथा करणीय

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल :- जय हनुमान..., आत्मशक्ति...)

विकथा व सुकथा के स्वरूप को जानो,
विकथा को त्यागकर सुकथा करो।
राग द्वेष मोहकर होती है विकथा,
रागद्वेष मोह हर होती सुकथा।।

आत्म चर्चा होती परम सुकथा,
पंचपरमेष्ठी की चर्चा होती सुकथा।
शलाका पुरुषों की कथा होती सुकथा,
ज्ञान-वैराग्य उत्पादक होती सुकथा।।

संसारी-मुक्त व पुण्य-पाप की चर्चा,
पंचपाप व पंचव्रतों की चर्चा,
सप्त-व्यसन व अष्टमद की कथा,
मार्गणा-गुणस्थानों की होती सुकथा।।

निगोदिया से ले सिद्ध तक की कथा,
पतित से ले पावन जीवों की कथा।
चौरासीलक्ष्य योनि चतुर्गति की चर्चा,
शुभ-अशुभ-शुद्ध भाव की चर्चा।।

षट द्रव्य सप्त तत्त्व नौपदार्थ कथा,
अनेकान्त-प्रमाण-नय निक्षेप कथा।

सांसरीक दुःख से (ले) आत्मसुख की कथा,
होती है सुकथा जो शिक्षाप्रद चर्चा।।
देव-शास्त्र-गुरु-धर्म की कथा,
अध्ययन-अध्यापन-शिष्यों की कथा।
धर्म प्रभावना हेतु होती सुकथा,
दान दया परोपकार की सुकथा।।
आक्षेपणी-विक्षेपणी-संवेगीनी-निर्वेदनी,
धर्मरक्षार्थ (विशेषतः) आक्षेपणी-विक्षेपणी।
संवेगीनी-निर्वेदनी सतत कथनीय,
आक्षेपणी-विक्षेपणी दक्ष-सूरी योग्य।। (7)

इससे भिन्न सभी कथा होती विकथा,
रागद्वेष मोह कर संकीर्ण स्वार्थ-कथा।
धर्म-कथा के बहाने (यदि) होते राग द्वेष मोह,
वह भी होती विकथा आत्मपतनक।। (8)

विवाह बन्धन से भोगोपभोग की कथा,
मोह क्षोभकारक आरंभ-परिग्रह कथा।
लौकिक पढाई व्यापार नौकरी राजनीति,
जय-पराजय आसक्तिपूर्ण स्त्री-कथादि।। (9)

आसक्तिपूर्ण भोजन कथा तथाहि युद्ध,
परनिन्दा-अपमान युक्त होती जो कथा।
समय-शक्ति अपव्ययकर व्यर्थ जो कथा,
हठाग्रह-पूर्वाग्रह युक्त विकथा ।। (10)

स्व-पर-विश्वहितकारी सुकथा,
शोध-बोध-वैराग्य, हेतु होती सुकथा।

सत्य-समता शान्तिकारक सुकथा,
द्रव्यक्षेत्रकाल भाव योग्य सुकथा।। (11)

अनुभव में मैं जाना (प्रायः) होती कुकथा,
हर क्षेत्र हर काल में करते कुकथा।
कुकथा से होते कलह से युद्ध तक,
कुकथा त्यागो सुकथा भजो भावे 'कनक'।। (12)

पाप-पापी की चर्चा पाप त्यागने हेतु,
पुण्य-पुण्यात्मा चर्चा पुण्य करने हेतु।
शुद्ध-शुद्धात्मा चर्चा शुद्ध बनने हेतु,
सम्पूर्ण कथा स्व-आत्म विकास हेतु।। (13)

ओबरी 23.01.2018 मध्याह्न 1.38

संदर्भ -

हदनं मूत्रणं स्नानं पूजनं परमेष्ठिनाम्।
भोजनं सुरतं स्तोत्रं कुर्यान्मौनसमायुतम्।। (441) स. कौमुदी

मल निवृत्ति, मूत्र त्याग, स्नान, परमेष्ठियों का पूजन, भोजन, संभोग और स्तुति ये सब कार्य मौन सहित करना चाहिए।

आयुर्वित्तं गृहच्छिद्रं मन्त्रमैथुनभेषजम्।
तपो दानापमानं च नव गोप्यानि यत्नतः ।। (हितोपदेश)

और भी आयु, धन, घर का भेद (रहस्य), गुप्त बात, मैथून, औषधि,तप, दान और अपमान, इन नौ बातों को यत्न से गुप्त रखना चाहिए।

वरं मौनं कार्यं न च वचनमुक्तं यदनृतं
वरं क्लैब्यं पुंसां न च परकलत्राभिगमनम्।
वरं प्राणत्यागो न च पिशुनवाक्येष्वभिरूचि
वरं भिक्षाशित्व न च परधनास्वादनसुखम्।। हितोपदेश

और चुप रहना अच्छा, पर मिथ्या (झूठा) वचन कहना अच्छा नहीं ; मनुष्यों की नपुसंकता अच्छी, पर पराई स्त्री के साथ गमन अच्छा नहीं; मर जाना अच्छज्ञ,

किन्तु बातों में रूचि कराना अच्छा नहीं; और भीख माँगना अच्छा, पर पराया धन से सुस्वादु भोजन का सुख अच्छा नहीं।

गुप्ति-मौन-भाषा-समिति

वाक्कयचित्तजानेकसावद्यप्रतिषेधकं।
त्रियोगरोधनं वा स्थाद्यत्तदगुप्तित्रयं मतम् ।। 4।। (ज्ञानार्णवः)

मन-वचन-काय से उत्पन्न अनेक पाप सहित प्रवृत्तियों का प्रतिषेध करने वाला प्रवर्तन अथवा तीनों योग (मन-वचन-काय की) क्रिया का रोकना ये तीन गुप्तियों का भिन्न-भिन्न स्वरूप कहते है।

धूर्तकामुकक्रव्याद चौरचार्वाकसेवित्ता।
शङ्कासङ केतपापाढ्य त्याज्या भाषा मनीषिभिः।। (8)
दशदोषविनिर्मुक्तां सुत्रोक्तां साधु सम्मताम्।
गदतोऽस्य मुनेर्भाषां स्याद्भाषासमितिः परा।। 9।।

धुर्त(मायावी) कामी, मांसाभक्षी, चोर, नास्तिकमती, चार्वाकादि से व्यवहार से लाई हुई भाषा तथा संदेह उपजाने वाली वा पाप संयुक्त हो ऐसी भाषा बुद्धिमानों को त्यागनी चाहिए।।8।। तथा वचनों के दश दोष रहित सूत्रानुसार साधु पुरुषों को मान्य हो ऐसी भाषा को कहने वाले मुनि के उत्कृष्ट भाषा समिति होती है।

''कर्कशा परूषा कटुवी निष्ठुरा परकोपिनी।
छेद्याङ्गरा मध्यकृशाऽतिमानिनी भयंकरी।। 11 ।।
भूतहिंसाकरी चेति दुर्भाषां दशधा त्यजेत्।
हितं मितमसंदिग्धं स्याद्भाषासमितिर्मुनेः।। 2 ।।

कर्कश, पुरुष, कटु निष्ठुर, परकोपी, छेद्याकुरा, मध्यकृशा, अतिमानिनी, भयंकरी और जीवों की हिंसा करने वाली ये दश दुर्भाषा है। उनको छोड़े तथा हितकारी, मर्यादा सहित असंदिग्ध वचन बोले उसी मुनि के भाषा समिति होती है।

विहाय सर्वसंकल्पान् रागद्वेषावलम्बितान्
स्वाधीन कुरूते चेतः समत्वे सुप्रतिष्ठत्तम्।। 15 ।।
सिद्धान्तसुत्रविन्यासे शश्वत्प्रेरयतोऽथवा

भवत्यविकला नाम मनोगगुप्तिर्मनीषिणः ।। 16 ।।

राग-द्वेष में अवलंबित समस्त संकल्पों को छोड़कर जो मुनि अपने मन को स्वाधीन करता है और समता भावों में स्थिर करता है। तथा सिद्धांत के सत्र की रचना में निरंतर प्रेरणा रूप करता है। उस बुद्धिमान मुनि के सम्पूर्ण मनोगुप्ति होती है।

साधु संवृतवाग्वृत्तेर्मौनारूढस्य वा मुनेः।
संज्ञादिपरिहारेण वाग्गुप्तिः स्यान्महामुनेः।। 17।।

भले प्रकार संवररूप (वश) करी है वचनों की प्रवृत्ति जिसने ऐसे मुनि तथा समस्यादिका त्याग कर मौनारूढ़ होने वाले महामुनि के वचन गुप्ति होती है।

जनन्यो यमिनामष्टौ रत्नत्रयविशुद्धिदाः।
एताभी रक्षितं दोषै मुनिवृन्दं न लिप्यते।। 9।।

पाँच समिति और तीन गुप्ति ये आठों संयमी पुरुषों की रक्षा करने वाली माता है तथा रत्नत्रय की विशुद्धता देने वाली है। इनसे रक्षा किया हुआ मुनियों का समूह दोषों से लिप्त नहीं होता है।

एक धम्मं अतीतस्स मुसावादिस्स जन्तुनो।
वितिण्णपरलोकस्स नत्थि पापं अकारियं।। 10।। धम्मपद

एक धर्म (सत्य) का अतिक्रमण कर जो झूठ बोलता है उस परलोक की चिन्ता से रहित पुरुष के लिए कोई पाप ऐसा नहीं रह जाता जो वह न कर सके।

अभूतावादी निरयं उपेति यो चापि
कत्वा 'न करोमीति' चाह।
उभोपि ते पेच्च सभा भवन्ति।
निहीनकम्मा मनुजा परत्थ ।।1।।

असत्यवादी नरक में जाता है और वह भी जो कि करके 'नहीं किया-कहता है। दोनों ही प्रकार के नीचकर्म करने वाले मनुष्य मरकर समान होते हैं।

यो मुखसञ्जतो भिक्खु मन्तमाणी अनुद्धतो।
अत्थं धम्मञ्च दीपेति मधुरं तस्स भासितं।। 4।।

जो मुख में संयम रखता है, मनन करके बोलता है, उद्धत नहीं होता है, अर्थ और धर्म को प्रकट करता है, उसका भाषण मधुर होता है।

''मूक बनने का कर्म'' असत्य कथन

प्रजल्पन्ति वृथा येऽत्र विकथाः प्रत्यहं शठाः।
दोषन्निर्दोषिणां चार्हच्छ्तसद्गुरुधर्मिणाम्। (108)
पठन्ति पापशास्त्राणि स्वेच्छया च जिनागमम्।
विनयादि विना लोभख्यातिपूजादिवाञ्छया। (109)
धर्मसिद्धान्त तत्त्वार्थानयुक्तयाऽन्यान् दिशन्ति च।
ते ज्ञानावृतिपाकेन मूकाः स्युः श्रुतवर्जिता : (110)

जो शठ यहाँ पर प्रतिदिन वृथा ही विकथाओं को कहते रहते हैं, निर्दोष अर्हन्त, श्रुत, सदुरू और धार्मिकजनों के मनगढ़त दोषों को कहते हैं, पापशास्त्रों को अपनी इच्छा से पढ़ते हैं और जिनागम को विनय आदि के बिना लोभ, ख्याति-पूजा आदि की इच्छा से पढ़ते हैं, जो धर्म, सिद्धांत और तत्वार्थ का कुयूक्तियों से अन्यथा रूप दूसरों को उपदेश देते हैं, वे जीव ज्ञानावरण कर्म के विपाक से श्रुतज्ञान से रहित मूक (गूँगे) होते हैं। (श्री वर्धमान चरित सप्तदस अधि.)

''बधिर बनने के कर्म'' -

अश्रुतं परदोषादि श्रुतं वदन्ति चेर्ष्या।
ऋण्वन्ति परनिंदा ये विकथा दुःश्रुतिं जडाः (104)
केवल श्रुत सङ्घानं दूषणं चात्र धर्मिणाम्।
भवेयुर्बधिरास्ते कुज्ञानावरणपाकतः (105)

जो जड़ लोग नहीं सुने हुए भी पर दोषों को ईर्ष्या से कहते हैं परनिन्दा, विकथा और शत्रुओं को सुनते है केवली भगवान् श्रुत, संघ और धर्मात्माओं को दूषण लगाते हैं, वे कुज्ञानावरण कर्म के विपाक से बधिर(बहिरे) होते हैं।

मुख रोगी होने का कर्म-

हन्त ते कथयिष्यामि श्रृणु देवि समाहिता।
कुवक्तारस्तु ये देवि जिह्वया कटुकं भृशम।।
असत्यं परुषं घोरं गुरुन्, प्रतिपरान् प्रति।
जिह्वाबाधां तदान्येषां कुर्वते कोपकारणात्।।

प्रायशोऽनृतभूतिष्ठा नयः कार्यवेशन वा।।
तेषां जिह्वाप्रदेशस्था व्याधया सम्भवन्तिते।।

महा. भा.दा.ध.पृ. 5965

देवी! एकाग्रचित्त होकर सुनो, मैं प्रसन्नचित्त से तुम्हें सब कुछ बताता हूँ, जो कुवाक्य बोलने वाले मनुष्य अपनी जिह्वा से गुरुजनों या दूसरों के प्रति अत्यन्त कड़वे, झूठे,रूखे तथा घोर वचन बोलते हैं, जो क्रोध के कारण दूसरों की जीभ काट लेते हैं अथवा जो कार्यवश प्रायः अधिकाधिक झूठ ही बोलते हैं उनकी जिह्वा प्रदेश में ही रोग होते हैं।

कर्णरोगी होने का कर्म

कुश्रोतारस्तु, ये चार्थं परेषां कर्मनाशकः।
कर्ण रोगान् बहुविधाल्लभन्ते ते पुनर्भवे।।

जो पर दोष या निन्दायुक्त कुवचन सुनते हैं तथा दूसरों के कानों को हानि पहुँचातें है वे दूसरे जन्म में कर्ण संबंधी नाना प्रकार के रोगों का कष्ट भोगते हैं।

अमृत-तथा विष (विषमता) की आत्मकथा
(भौतिक से आध्यात्मिक अमृत व विष)

- आचार्य कनकनन्दी

(चालः- आत्मशक्ति...)

अमृत मेरा नाम है अति विशिष्ठ काम है।
अमिय, अमी, पीयूस, सुधा, सोम, सुरभोग (भी) नाम है।।

मुझे सभी ही जीव चाहते, किन्तु मैं अति दुलर्भ हूँ।
भौतिक से आध्यात्मिक उत्तरोत्तर दुर्लभ हूँ।
भौतिक रूप से मानव मुझे पाने हेतु सदा प्रयत्न है।
किमिया-केमेक्ट्री, औषधि से च्यवन प्रास में प्रयत्न है ।।

किन्तु इससे कभी भी मानव, न बन सकता अमर (अमृत) है।
मै तो आध्यात्मिक स्वभावमय जो शुद्ध-बुद्ध-आनन्द है।

हर जीव का शुद्ध स्वभाव ही होता अमृत स्वभाव है।
सत्य-शिव-शाश्वत-अनादि-अनिधन-सच्चिदानन्द भाव है।।

ज्ञानामृत हूँ मैं सुखामृत हूँ मैं आनन्दामृत हूँ निश्चय से।
इसे (मुझे) ही सभी जीव चाहते क्योंकि जीवों का मैं शुद्धभाव हूँ।
मेरे इस स्वरूप को प्राप्त हेतु करना होगा रागद्वेषमोह क्षय।
जिससे जन्म-जरा-मृत्यु-आधि-व्याधि नाश से जीव बने अमृतमय।।

<u>गाथा</u> - रयत्तणिच्छचगओ, समय सव्वत्थ सुन्दरो लोए।
बन्धकहा एयत्ते तेण विसंवादिणी होदि।। (3 समयसार)

शुद्ध होकर एकत्व को प्राप्त समय/(द्रव्य, आत्मा) सर्वथा सुन्दर लोक में।
एकत्व में बन्ध होने से विसंवाद होता है लोक में।।

भौतिक रूप में दूध-घी-दही-छाछ मधुर आदि मेरा रूप।
शुद्ध जल-वायु-फल-सब्जी-जड़ी-बुटी आदि मेरा रूप।
शिशुओं के हेतु स्वमातृदुग्ध भौतिक रूप में परम अमृत
सादा-सीधा जीवन-उच्च विचार, सहित प्राणायाम योगासन अमृत।।

प्रेम-सौहार्द-सहयोग-समन्वय सामाजिक रूप में अमृत हूँ।
व्यक्ति से ले सामूहिक व राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय में अमृत हूँ।
अमृत वचन है हित वचन जो आत्मा को अमृत बनाने में हेतु है।
अमृत संकल्प है वह आत्मा-संकल्प जिसमें मोह नाश की प्रतीज्ञा है।।

इससे भिन्न अन्य सभी मुझ से परे विष रूप है।
असत्य से रागद्वेष मोह व प्रदूषण-मिलावट विष रूप है।
इत्यादि मेरा अनेक रूप जिसे न जानते अज्ञानी-मोही स्वार्थी जीव।
वे मुझे विष मानते व करते, विष को वे मेरा रूप मानते।।

शुद्ध रूप में मैं हूँ अमृत रूप, अशुद्ध में बन जाता हूँ विष।
यथा ताजा अंगुर अमृत रूप, अशुद्ध में मैं बन जाता मद्य स्वरूप।

इससे परे मेरा नहीं कोई स्वरूप, शुद्ध आत्मा ही मेरा परम रूप।
शुद्ध बनकर जीव बने, अमृत, इस हेतु 'कनक' सदा प्रयासरत ।।

ओबरी : 24.01.2018 मध्याह्न - 1.52

प्रदेश में 2 करोड़ लोग, 21 लाख बच्चे प्रदूषण के बीच रह रहे

जयपुर। राजस्थान में प्रदूषण भयंकर रूप लेता जा रहा है लेकिन सरकार इस पर कोई विशेष ध्यान नहीं दे रही। ग्रीनपीस इंडिया की सोमवार को आई रिपोर्ट बताती है कि प्रदेश में 2 करोड़ से ज्यादा लोग तय मानकों से दोगुने प्रदूषण के बीच रहने को मजबूर हैं। वहीं, 5 साल तक के 21 लाख बच्चे भी ऐसी ही जगहों पर रह रहे हैं। इसके अलावा बेहद गंभीर तथ्य यह भी है कि प्रदेश के 4.5 करोड़ से ज्यादा लोग ऐसी जगह रह रहे हैं जहां सरकार द्वारा प्रदूषण के किसी भी तरह के आंकड़े नहीं जुटाती। उत्तर प्रदेश में यह आंकड़ा 13.3 करोड़ बिहार में 8.9 करोड़ और मध्य प्रदेश में 4.8 करोड़ है। राजस्थान में फिलहाल 10 जगह ही वायु प्रदूषण से संबंधित आंकड़े इकट्ठे किए जा रहे हैं।

जानिए .... दोगुने प्रदूषण में रहने वालों की 5 राज्यों में क्या है स्थिति

राज्य	जनसंख्या (करोड़ में)	बच्चे (लाख में)
यूपी	6.4	63
राजस्थान	2.0	21
महाराष्ट्र	1.9	14
दिल्ली	1.7	14
बिहार	1.5	17

शब्द शक्ति (शब्दों की व्यापकता)

- आचार्य कनकनंदी

(चाल:- आत्मशक्ति...)

द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के अनुसार शब्दों के होते अर्थ भिन्न-भिन्न।

एक शब्द के अनेक अर्थ हो जाते हैं 'धातुनां अनेक अर्थ' के अनुसार।।
नय प्रमाण व निक्षेप के अनुसार भी शब्दार्थ हो जाते भिन्न-भिन्न।
विषय व सन्दर्भ उद्देश्य अनुसार भी शब्दार्थ भी हो जाते भिन्न-भिन्न।।(1)

यथा 'द्रव्य' के अनेक अर्थ है 'षट्द्रव्य' धन, संपत्ति, वित्त, संपदा, दौलत।
विभूति, समृद्धि तथा द्रव्यार्थिकनय व द्रव्यनिक्षेप व भौतिक पदार्थ ।।
'धन' भौतिक सम्पत्ति तथा आत्मार्थे ज्ञानधन, तषोधन व सन्तोषधन।
गणित में धन होता है मिलना, भौतिक में होता है एक ध्रुव।। (2)

'गुण' है द्रव्यों के विशेष लक्षण 'द्रव्या-श्रया निर्गुणा गुणा'।
गुण होता है गणित में गुणाकार, तथाहि उत्तम गुण व दुर्गुण।।
'अक्षर' है अविनाशी परम सत्य, धर्म-आकाश व परमात्मा।
वर्णमाला के होते हैं, अक्षर, समस्त शुद्ध द्रव्य तो परम अक्षर।। (3)

'गौ' है गाय व आँख, इन्द्रिय, बाण, बाल व स्वर्ग भूमि।
सूर्य, माता व किरण, वचन, गति व ज्ञानार्थे में होती प्रवृत्ति।।
'धर्म' है वस्तु स्वभावमय, उत्तमक्षमादि होते हैं दशधा धर्म।
सभी शुभ कार्य भी होते हैं धर्म जो 'धरती उत्तम सुखे सः धर्म' ।। (4)

'रस' है भोजन के षट् रस, काव्य के भी होते हैं नवरस।
आनन्द, प्रेम, स्वाद, अर्क व तत्त्व, वैराग्य, शान्त पारा, मेल।।
'तत्त्व' है सार, धर्म व सत्य, परिणाम, उद्देश्य व सूक्ष्म ज्ञान।
'तंत्र' है सिद्धान्त, प्रबन्ध, शासन, उपाय, औषधि व खजाना।। (5)

'शिव' है कल्याण, 'मंगल, सुख, पानीय, सूर्य व श्रेष्ठ।
'शिखी' है अग्नि, मयूर, वृक्ष, मुर्गा, वाण, शस्त्र, पृथक।।
'अज' है राजा, स्मर, चंद्रमा, शंकर, बकरा, यव, ब्रह्म,श्रीकृष्ण।
'ललाम' पुरुष, पताका, चिह्न, घोड़ा,भूषण, सुन्दर, शेष, राजा।। (6)

'मन्द' है हर्ष, गर्व, सुख, खेद, वृद्धि, स्नेह व भाग्यक्षय।
'समाधि' है निर्मम, निरहंकार, छिन्नसंशय, प्रदाता, देशकालज्ञ।।
इत्यादि शब्दों के होते अनेकविध अर्थ तत्त्वज्ञान हेतु विज्ञेय।
वाच्य-वाचक व ज्ञान-ज्ञेय सम्बन्ध हेतु 'कनक' को मान्य शब्दज्ञान।। (7)

ओबरी 27.01.2018 मध्याह्न 02:25

खजूर की आत्मकथा व आत्मव्यथा

- आचार्य कनकनन्दी

(चालः- आत्मशक्ति...)

मैं हूँ खूजर गुणों में भरपूर...मेरा उपयोग मानव बहु करते।
कृतघ्न बनते व निन्दा करते...स्व अयोग्यता से मेरी तुलना करते।।
मैं सीधा बढता विस्तारवादी न होता...अन्य को दबाकर नहीं फैलता।
स्व-रक्षा हेतु कठोर बाहर से होता...मधुर रस व फल से भरीत होता।। (1)

'नीरा' मेरा रस मधुर गुणकारी, अनेक रोगों को यह दूर करता।
अज्ञानी-मोही-नशेडी मानव, 'ताडी' बनाकर नीरा को मद्य बनाता।।
मेरा गाभा/ (गर्भ) भी मधुर-शीतल-मनोहर...इससे मेरा उर्ध्व विकास होता।
मेरी पत्तियाँ भी इससे निकलती, बहुउपयोगी भी पत्तियाँ होती।। (2)

दुधारू पशुओं को भी मेरी पत्ती खिलाते, जिस से दुग्ध उत्पादन अच्छा होता।
झाडू भी बनाते सफाई भी करते, छत में लगाते व छाया भी करते।।
मेरे फल तो होते हैं, मधुर, पौष्टिक-स्वास्थ्यप्रद व गुणों से भरपूर।
पिण्ड खजुर तथा खारक कहते, छोटे आकार को खजुरफल कहते।। (3)

मेरे फलों को तो मनुष्य (भी) खाते, पशु-पक्षी आदि के भोजन बनते।
मेरा स्कन्ध तो लम्बा व सिधा होता, गृहनिर्माण आदि में काम आता।।
कीट-पतंग व पशु-पक्षी तक.. मेरे आश्रय से भी जीते जीवन।
कम-पानी में भी फलता-फूलता-परोपकार हेतु भी जीवन जीता।। (4)

मैं नहीं हूँ कृतघ्न स्वार्थी मानव सम...परोपजीवी शोषणकारी समान।
मुझ से शिक्षा ले स्वार्थी-दंभी मानव, इस हेतु, 'सूरी कनक' बनाया काव्य।। (5)
ओबरी 17.01.2018 रात्रि 10:33

खजुर खाएं रोग भगाएं

खजूर हमेशा से भोजन का अहम हिस्सा रहा है। खजूर की खासियत यह है कि इसे आप फ्रेश भी खा सकते हैं और सुखाकर भी इस्तेमाल कर सकते हैं। एक खजूर की लंबाई तीन से सात सेंटीमीटर तक हो सकती है। जहां पके हुए खजूर का रंग गहरे पीले और लाल रंग का होता है वही सूखा खजूर ज्यादातर भूरे रंग का होता है। मिठास के आधार पर खजूर को तीन हिस्सों में बांटा जाता है- नरम खजूर, हल्का सूखा खजूर और पूरी तरह से सूखा हुआ खजूर। हालांकि खजूर के ये तीनों प्रकार लगभग एक जैसे ही होते हैं लेकिन स्वाद और आकार में थोड़ा बहुत फर्क हो सकता है। खजूर एक ऐसा फल है जो आपकी सेहत के लिए बहुत ही अच्छा है। इसमें ढेरों पोषक तत्व पाए जाते हैं और माना जाता है कि ये कई बीमारियों को दूर कर सकता है। यहां पर हम आपको खजूर के ऐसे ही कुछ चमत्कारी फायदों के बारे में बता रहे हैं -

डाइजेशन सुधारे, भगाए कब्ज - खजूर में भरपूर मात्रा में फाइबर होता है जो आपके पाचन तंत्र की सफाई करने के काम आता है। अगर पाचन ठीक रहेगा तो कब्ज की शिकायत भी नहीं होगी।

दिल बनाए सेहतमंद - खजूर में मौजूद फाइबर आपके दिल को भी मजबूत और सेहतमंद बनाने का काम करते हैं। खजूर में पोटेशियम भी होता है जो हार्ट अटैक के खतरे को काफी हद तक टाल सकता है।

ज्वलनरोधी गुणों से भरपूर - खजूर में भरपूर मात्रा में मैग्नीशियम पाया जाता है। मैग्नीशियम में ज्वलनरोधी गुण होता है, जो हार्ट की बीमारी (खून का जमना आदि), गठीया और अल्जाइमर जैसे रोगों को आपसे दूर रखता है।

ब्लड प्रेशर करे कंट्रोल - मैग्नीशियम ब्लड प्रेशर को कंट्रोल करने का भी काम करता है। खजूर में मौजूद पोटैशियम अधिक ब्लड प्रेशर को कम करने का काम करता है।

नहीं आएगा हार्ट अटैक – अमेरिकन जर्नल ऑफ क्लीनिकल न्यूट्रिशन की एक रिसर्च के मुताबिक अगर कोई व्यक्ति एक दिन में 100 मिलीग्राम मैग्नेशियम ले तो हार्ट अटैक का खतरा 9 फिसदी तक कम हो सकता है।

एनीमिया में भी कारगत – रेड ब्लड सेल्स और आयरन की कमी के चलते कई लोगों को एनीमिया की शिकायत हो जाती है। एनीमिया यानी कि शरीर में खून की कमी खजूर में भरपूर मात्रा में आयरन पाया जाता है। ऐसे में यह एनिमिया के उपचार का रामबाण इलाज है। लगातार खजूर का सेवन करने से शरीर में आयरन की कमी पूरी हो जाती है।

नर्वस सिस्टम की देखभाल – खजूर में वो सभी विटामिन होते हैं जो नर्वस सिस्टम के लिए जरूरी हैं। ये विटामिन नर्वस सिस्टम की कार्य प्रणाली को दुरुस्त रखते हैं। यही नहीं इसमें मौजूद पोटेशियम दिमाग को अलर्ट और हेल्दी रखते हैं।

प्रेग्रेंट महिलाओं के लिए फायदेमंद – आयरन से भरपूर खजूर मां और होने वाले बच्चे दोनों के लिए बेहद उपयोगी है। खजूर में मौजूद पोषक तत्व यूट्रेस यानी कि गर्भाशय की मांसपेशियों को मजबूती देने का काम भी करते हैं। खजूर मां के दूध को भी जरूरी पोषक तत्व मुहैया कराता है। साथ ही बच्चे की डिलीवरी के बाद होने वाली ब्लीडिंग की भरपाई भी करता है।

रंतौधी का इलाज – रोजाना खजूर खाने से न सिर्फ आंखे स्वस्थ रहती है, बल्कि यह रंतौधी के इलाज में भी कारगर है। रतौंधी से छूटकारा पाने के लिए खजूर का पेस्ट बनाकर उसे आंखों के चारों ओर लगाने से फायदा मिलेगा। आप चाहें तो खजूर खाकर भी रतौंधी से मुक्ति पा सकते हैं।

नहीं लगेगें दांतों में कीड़े – खजूर में Fluorine पाया जाता है। यह ऐसा केमिकल है जो दांतों से प्लाक हटाकर कैविटी नहीं होने देता। यही नहीं टूथ इनेमल यानी कि दंतवल्क को भी मजबूती देता है।

स्किन और बालों के लिए गुणकारी – विटामिन से भरपूर खजूर त्वचा के लचीलेपन को बरकरार रखकर उसे कोमल बनाता है। खजूर में मौजूद विटामिन Bz स्ट्रेच मार्क्स हटाने में भी कारगर है। यही नहीं यह बालों को भी स्वस्थ बनाए

रखता है। विटामिन Bz की कमी से बाल कमजोर होकर झड़ने लगते हैं और दोमुहें भी हो जाते हैं । **(चिकित्सा संसार)**

नारिकेल की आत्मकथा व परोपकारिता

– आचार्य कनकनंदी

(चाल :– छूटो मेरा नाम...आत्मशक्ति...)

नारियल मेरा नाम है ...कल्पवृक्ष सम काम है।
हरअंग से परोपकार करूँ, मेरे फल का श्रीफल' नाम है।।
मेरा अंकुर होता देरी से...विकास होता (है) धीरे-धीरे।
फल भी आते देरी से ...फल भी पकते देरी से।। (1)

किन्तु जो मुझे बोता-पालता...खाद-पानी से दीर्घ काल।
उसकी सेवा भी (मैं) करता रहता...अनेक दशक तक अनेक प्रकार।
मेरा फल तो बहु उपयोगी...पानी से लेकर गिरि/(दल) तक।
मधुर-शीतल-स्वास्थकर...अनेक रोगहर बलकर ।।(2)

डाभ का पानी तो बहु उपकारी...प्राकृतिक ग्लुकोज प्यासहर।
गरमी व पित्त को करता दूर...प्रदूषण रहित प्रदूषण हर।।
उक्त गुणयुक्त मेरी भलाई होती...तथाहि कच्चा दल (गिरी) भी हितकर
नाना मिष्ठान भी इससे बनते...सुखा दल (गोल) से उत्तम तेल ।।(3)

पूजा सत्कार स्वागत सज्जा में ...फलों का होता बहु प्रयोग।
दीर्घकाल तक होते (फल) सुरक्षित...बाह्य प्रदूषण से अप्रभावित।।
मेरी पत्ति से चटाई बने तथाहि...विजना खिलोना आदि भी।
पत्ति के सींक से झाड़ू भी बनती...छाया भी करते पत्ति से भी।। (4)

मेरी पत्ति से बया पक्षी नीड (भी) बनाते...आश्रय से पशु-पक्षी निवास करते
सरल-सबल व लचीला मै होता...जिससे बवंडर से भी बच जाता।।
उर्ध्वाकार (मेरा) होता है विकास...(मेरे) स्कन्ध आश्रय से चढ़ती (पानादि) लताएँ
मेरा स्कन्ध होता सरल-लम्बा...मजबूत होने से बनते (घर के) छज्जा। (5)

जटा से बनती मजबूत रस्सी...शीघ्र न सड़ती गलती।
(मेरे) मूल मृदाक्षरण की करते रक्षा...आपादमस्तक (यह) मेरी परोपकारीता।
मुझ से भी शिक्षा लो तुम मानव...स्व पर उपकार से बनो महामानव
जीना है तो जीने दो सभी को ...मेरे गुण (भी) अच्छे लगे 'सूरी कनक' को (6)

किं चास्तां तावद्विशिष्टविवेकवतां पुंसामुपकार स्मरणं चैतन्यमात्रवतामेकेन्द्रियाणामपि दृश्यते ह्यपकारस्मरणमित्युत्प्रेक्षा च।

'प्रथमयसि पीतं तोयमल्पं स्मरन्तः
शिरसि निहितभारा नालिकेरा नराणाम्।
उदकममृतकल्पं दद्युरजीवितान्तं,
न हि कृतमुपकारं साधवो विस्मरन्ति,।। उक्तं च तदेतत्सर्वम्

विशिष्ट विवेकशाली पुरुषों के द्वारा उपकार का स्मरण तो दूर रहो, चैतन्यमात्र वाले एकेन्द्रिय जीवों के भी उपकारका स्मरण देखा जाता है। कहा है 'प्रथम अंकुर अवस्था में पिये गये थोड़े से जल का स्मरण रखते हुए नारियल के वृक्ष अपने मस्तक पर नारियलों का बोझा लादकर मनुष्यों को जीवन पर्यन्त अमृत के तुल्य जल प्रदान करते हैं। ठीक ही है साधुजन किये उपकार को नहीं भूलते।'

नारियल (कोकोस न्यूसीफरा)

(संस्कृत - नारिकेल, सदाफल हिंदी-नारियल अंग्रेजी - कोकोनट)

रसायनिक इकाइयां : नारियल में प्रोटीन, तेल, कार्बोज, रेशा और विटामिन-सी आदि तत्व पाए जाते हैं। पूजा-विधि विधान में इसका स्थान सर्वोपरि है।

औषधि गुण: यह वात, पित्त नाशक और गरिष्ठ तथा रक्तवर्द्धक होता है। साथ ही यह स्नायु तंत्र को उत्तेजित करता है।

प्रयुक्त मात्रा : एक बार में मूल चूर्ण 5-10 ग्राम और गिरी 10-20 ग्राम

प्रयोग :

नारियल का पानी या दूध पेट में शीतलता प्रदान करता है, जिससे पेशाब में होने वाली जलन ठीक हो जाती है।

ज्वर में नारियल का पानी इस्तेमाल करना लाभदायक है।

रोचक तथ्य : रोजाना मंदिरों में चढ़ने वाले नारियल की संख्या लाखों-करोड़ों में होती है। भारतीय रसोई नारियल गिरी और तेल के बिना अधूरी मानी जाती है। नारियल का धार्मिक महत्व तो है ही, अपने गुणों के कारण यह फल औषधि, रसोई, व्यापार और मंगल-प्रतीक के रूप में भी स्वीकार्य है। नारियल का वर्णन कहावतों, लोकोक्तियों में भी बहुतायत में होता है और मांगलिक संस्कारों में इसकी अहम उपस्थिति है ही।

सेहद को संवारता है नारियल

नेचुरल एनर्जी बूस्टर कहे जाने वाले नारियल में कई अहम पौष्टिक तत्त्व मौजूद होते हैं। सेहत और स्वाद के अनुसार इसे कई तरीके से खाया जा सकता है। जिसमें नारियल पानी तो खास है ही साथ ही इसकी सूखी गिरी, कच्ची गिरी, नारियल तेल और नारियल का दूध शामिल हैं। जानते हैं इनके फायदे और इस्तेमाल के बारें में -

सूखी गिरी

डाइट : नेचुरल ऑयल होने के कारण इसमें वसा की मात्रा बढ़ जाती है इसलिए इसे सीमित मात्रा में लेकर वजन को नियत्रिंत कर सकते हैं। रोजाना इसका एक छोटा टुकड़ा खाने के अलावा बारीक काटकर खीर या मिठाई में मिलाकर भी खा सकते हैं।

पौष्टिकता : जरूरी विटामिन व मिनरल के अलावा यह मेंगनीज तत्त्व से भरपूर है।

फायदे : सूखने के दौरान इसमें नेचुरल ऑयल बनने लगता है जो हड्डियों और मांसपेशियों को मजबूती करता है। मेंगनीज तत्त्व त्वचा को चमकदार व ब्लड शुगर लेवल को मेंटेन रखता है।

न खाएं : अधिक वजन वाले व डायबिटीज पीड़ित डॉक्टरी सलाह से ही खाएं।

स्टोरेज : एयरटाइट कंटेनर में इसे लंबे समय तक रख सकते हैं।

नारियल दूध

डाइट : इसे हफ्ते में 3-4 बार ले सकते हैं। खास बात यह है कि कच्चे नारियल को कूदकर निकाला गया ताजा दूध ही शरीर के लिए पौष्टिक है।

पौष्टिकता : 100 ग्राम नारियल के दूध से 154 कैलोरी ऊर्जा मिलती है। साथ ही इसमें आयरन, फॉस्फोरस और मैगनीशियम तत्त्व भी होते हैं। अधपके नारियल में से ही दूध निकल सकता है।

फायदे : खासकर बच्चों के लिए यह संपूर्ण डाइट होने के साथ उनमें रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने या काम करता है।

नहीं पीएं : अधिक वजन और हृदय से जुड़ी समस्या वाले इसे कम खाएं।

स्टोरेज : इसे तुरंत इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

नारियल तेल

डाइट : एक दिन में रोजाना इसकी 10-40 ग्राम मात्रा खाने में किसी भी तरह से ले सकते हैं।

पौष्टिकता :100 ग्राम नारियल तेल से 862 कैलोरी ऊर्जा मिलती है। इसमें एंटीऑक्सीडेंट्स ज्यादा और बुरा कोलेस्ट्रोल बेहद कम होता है।

फायदे : इस तेल की मालिश नियमित करने से जोड़ों और मांसपेशियों को न केवल बाहरी रूप से बल्कि आंतरिक रूप से भी मजबूती मिलती है। त्वचा जलने पर इस तेल को रेगुलर लगाने से घाव जल्दी ठीक होता है साथ ही निशान भी न के बराबर रहता है। यह मस्तिष्क को ताकत देने के अलावा ठंडा रखता है।

न खाएं : अधिक वजन और हृदय से जुड़ी समस्या वाले इसे कम खाएं।

स्टोरेज : यह स्वयं प्रिजर्वेटिव के तौर पर इस्तेमाल होता है। आमतौर पर यह खराब नहीं होता लेकिन एक साल के अंतराल में इसे बदल सकते है।

डाइट में किसी भी तरह से नारियल को शामिल करना शरीर को एनर्जी देता है। बच्चों के लिए यह एनर्जी ड्रिंक है। यह रोगों की आशंका को कम करने में सक्षम है। खास बात यह है कि जिसे भूख कम लगने और किसी बीमारी के चलते खाने में अरुचि हो तो वे कच्ची गिरी खाने के साथ एक गिलास पानी पी सकते हैं। इससे उन्हें

पेट भरा हुआ महसूस होगा। लिवर से जुड़े रोगों में यह फायदेमंद है।

वैद्य भानु प्रकाश शर्मा, आयुर्वेद विशेषज्ञ, जयपुर

इसमें कैल्शियम और पोटेशियम अधिक मात्रा में होता है जिसे किडनी के मरीज आसानी से पचा नहीं पाते। इसलिए वे इसका अधिक प्रयोग न करें।

डॉ. एस. बनर्जी, प्रोफेसर एंड हैड, इंटरनल मेडिसिन, एसएमएस अस्पताल, जयपुर

नारियल पानी

डाइट : रोजाना एक नारियल का पानी पी सकते हैं।

पौष्टिकता : 100 ग्राम नारियल पीने से 19 केलोरी ऊर्जा मिलती है। इसमें कैल्शियम, मिनरल आदि तत्व मौजूद होते हैं।

फायदे : वैसे तो इसे सभी वर्ग के व्यक्ति खा सकते हैं लेकिन खासकर गर्भवती महिलाओं, छोटे बच्चों की हड्डियों का विकास या जिनके जोड़ों में दर्द की समस्या रहती है, उनके लिए फायदेमंद है। हल्का व आसानी से पचने वाले गुणों के कारण यह कमजोर पाचन तंत्र या बीमारी से उठे मरीजों की सेहत को जल्दी सुधारता है। ताकत बढ़ाने, प्यास या शरीर में जलन या यूरिन की समस्या को दूर करने में मदद करता है।

न पीएं : जिनके बार-बार पथरी बनने की दिक्कत हो यानी जिनके शरीर में कैल्सियम की मात्रा ज्यादा हो वे इसे कम ही लें।

स्टोरेज : इसे तुरंत पी लेना चाहिए। ध्यान रखें कि मार्केट में पैक्ड बोतल में मिलने वाला नारियल पानी को पैकिंग से 48 घंटे के अंदर पीना जरूरी है।

कच्ची गिरी

डाइट : पानी सहित कटा आधा कच्चा नारियल खा सकते हैं। भोजन में इससे तैयार चटनी या सब्जी को भी शामिल कर सकते हैं।

पोष्टिकता : इसकी 100 ग्राम मात्रा से 354 कैलोरी, ऊर्जा, फाइबर और प्रोटीन मिलता है।

फायदे : खासकर बच्चों में यह भूख शांत करने और मसूढ़ों को मजबूती देता है। डाइजेस्टिव सिस्टम को सही कर विभिन्न अंगों की कार्यप्रणाली सुधारता है।

स्टोरेज : ज्यादा देर खुले में रहने से इसमें फंगस या बैक्टिरिरिया पनप जाते हैं इसलिए ताजा ही खाएं।

शाक (पत्ति) की आत्मकथा-आत्मव्यथा-शिक्षा

- आचार्य कनकनन्दी

(चालः- आत्मशक्ति...क्या मिलिए...)

मैं हूँ शाक गुणों में विशेष...मुझ से ही बना है शाकाहार।
मेरे होते नाम भी अनेक, ...पत्ता-पत्रि-पल्लव। (लिफ) आदिक।।
मेरी लम्बाई भी होती अनेक...मिलिमिटर से ले बहु मिटर तक।
आकार भी होते हैं अनेक विध...रंग अनेक किंतु हरारंग प्रमुख।। (1)

वसन्त में गिर जाता हूँ विशेषता...किन्तु चिर हरित न गिरता हूँ।
गिरने के बाद कोपल निकलकर...विकास कर पत्र मैं बनता हूँ।।
मैं ही भोजन बनाता हूँ वृक्षों के ...प्रकाश संश्लेषण के माध्यम से।
जिससे वृक्षों का पोषण होता...जिससे वृक्षों का विकास होता ।। (2)

जिससे वृक्षों में फूल-फल आते...जिससे मनुष्य से तीर्यंच पलते।
खाद्य श्रृंखला का मैं प्रमुख केन्द्र...मेरे बिन न जीवित होंगे प्राणी वृन्द।।
भोज पत्र व ताड पत्र में पूर्व में...ग्रन्थ व संदेश लिखा जाता था।
अतएव चिट्ठी को पत्र भी कहते...ज्ञानसुरक्षा प्रचार में उपयोगिता।। (3)

शाकाहारी प्राणीओं का मैं मूलाधार...अधिकतर पशु व मनुष्यों के।
मेरा आहार है अधिक अहिंसक...स्वास्थ्य-सबल व हष्ट-पुष्ट कारक।।
मांसाहार जो नहीं करते वे होते...निरामिष भोजी पशु-पक्षी मानव।
किन्तु मेरी प्रमुखता के कारण...इन्हें व्यवहार से कहते शाकाहारी जीव।। (4)

मुझ से अनेकविध बनते औषध...स्व-रस से लेकर भस्म तक भी।
विभिन्न सब्जियाँ व चटनी बनती... मुझ पर परोसकर खाते मनुष्य भी।।

तुलसी-वथुआ-पालक-धनियाँ...तेजपत्ता-पोदिना व मेथी-पान।
मेरे बहुउपयोगी हैं स्वरूप...औषधि से ले भोजन स्वरूप।। (5)

बकरा-बकरी-भेड-मेंढा...मुझे खाकर ही जीवित होते।
अतएव इनका दूध बहुगुणयुक्त...अनेक औषधि में होता प्रयुक्त।।
गाय-बैल व भैंस व भैंसा...हाथी-ऊँट-हिरण व हिप्पो।
बन्दर-चिंपाजी-गोरिला-पाण्डा-प्रमुखताः-मुझ से होते जीवित।। (6)

विजना-चटाई-छत-छाता बनाते...स्वरस रंग से भी चित्र बनाते।
मेरे आकार के चित्र (व) अलंकार बनाते...जीवित से मृत्यु में भी उपयोग करते।
मैं प्रदूषण को भी शोषण करता...छाया से भी ताप नियंत्रित होता।
मेरे परित्यक्त प्राणवायु के द्वारा...प्राणी जगत भी जीवित रहता।। (7)

वृक्षों के अनुपात से मेरे आकर...नहीं होते है समनुपाती भी।
बड़े वृक्षों में भी मेरे आकर छोटे...छोटे वृक्षों में भी होते (हैं) बड़े।।
इमली-बबुल-आंवला आदि में...मेरे आकार होते हैं छोटे।
कमल-केला-अरबी-तम्बाकू में ...मेरे आकार होते हैं बड़े ।। (8)

मेरे रस-गुण भी होते विभिन्न...खट्टा-मीठा-कड़वा व विषाक्त।
तम्बाखू-गांजा आदि में विषाक्त...तो भी मानव इस में होते आसक्त।।
पोषक मैं हूं तो मारक भी मैं हू...जब मानव करते विषाक्त का सेवन।
प्रदूषणों से (भी) मानव मुझे करे विषाक्त...जिससे संत्रस्त प्राणी जगत्।। (9)

मेरे उपकारी गुणों से मानव सीखे...स्व-पर उपकार करने की शिक्षा।
जीना है तो अन्य को भी जीने दो...'सूरी कनक' ने मेरे से लिखी शिक्षा।। (10)

ओबरी 21.01.2018 रात्रि 08:18

तुलसी (ओसीमम सैक्टम)

(संस्कृत : वुंदा, बहुमंजरी। हिंदी : तुलसी, रामतुलसी अंग्रेजीः होली बेसिल)

रासायनिक इकाइयां : इनके पत्तों में उड़नशील तेल पाया जाता है। इसके

पत्ते, तना और बीज - तीनों इस्तेमाल में लाए जाते हैं। भारतीय रसोई में तुलसी का महत्वपूर्ण स्थान है। विविध प्रकार के व्यंजनों में इसका इस्तेमाल खास उद्देश्य से प्रेरित होता है। इसका प्रयोग भोजन को पाचक बनाता है और तुलसी मिली चाय अनेक रोगों से बचाती है।

औषधिय गुण : तुलसी कफनाशक, पित्तनाशक और वातनाशक तो है ही साथ ही हृदय को भी मजबूत बनाती है और मुत्रिविकार, पसली दर्द और कुष्ठ रोग खत्म करती है। इसकी दो किस्में होती हैं - सफेद तुलसी और श्यामा तुलसी

प्रयुक्त मात्रा : पत्ते और बीज। रस 8 से 12 मिली चूर्ण 2 से 4 ग्राम

प्रयोग : तुलसी के पौधे घर के आसपास लगाएं। इससे वायु शुद्ध रहती है और मलेरिया फैलाने वाले मच्छर नजदीक नहीं आते।

तुलसी की पत्तियों का रस काली मिर्च के साथ देने से मलेरिया ज्वर शीघ्र उतर जाता है।

रोचक तथ्य : थाई करी और स्टिरफ्राइ नामक खाद्य पदार्थों में तुलसी का इस्तेमाल होता है।

पुदीना

(संस्कृत - रोचनी, पुदीना हिंदी - पोदीना। अंग्रेजी-होसमिंट)

रासायनिक इकाइयां : इसमें मेंन्थाल पाइपरीटोन, पाइनीन, लिमोनिन, कैम्पीन आदि तत्त्व पाए जाते हैं। भारतीय रसोई में पुदीना की चटनी का खास स्थान है। पुदीना व्यंजनों के बीच चटनी के रूप में इस्तेमाल होते हैं।

औषधीय गुण : यह कफ, खांसी, बेचैनी को कम तो करती है, इसके नियमित इस्तेमाल से हैजा जैसी बीमारी से मुक्ति मिल जाती है।

प्रयुक्त मात्रा : पत्तों का रस 1-3 मिली, और अर्क 6-10 बूंदे एक बार में।

प्रयोग : पुदीना के पत्तों की चटनी मुख की बदबू दूर करती है और हृदय को ठंडक पहुंचाती है। यदि पेट में जलन हो रही हो तो इसकी पत्तियां शक्कर में मिलाकर खाएं, लाभ होता है।

रोचक तथ्य : गर्मी में शीतल पेयों के साथ जैसे शर्बत आदि में पीने के लिए

पुदीना दिया जाता है। भारतीय खाने में, विशेषकर गर्मी के मौसम में इसकी चटनी स्वाथ्यवर्द्धक होती है। इसकी पत्तियों की चटनी गुणकारी तथा स्वाथ्यवर्द्धक है। गर्मी में पुदीना का शर्बत पीना स्वास्थवर्द्धक है।

सलाद रखेगा मस्तिष्क जवां

अगर आप अपने भोजन में नियमित रूप से सलाद लेते हैं, तो इससे आपका दिमाग वास्तविक उम्र से 11 वर्ष कम आयु के व्यक्ति के बराबर सक्रिय रहता है। मतलब उम्र की आधी शताब्दी पार करने के बाद भी आप दिमागी रूप से 40 साल के व्यक्ति जितने फूर्तीले हो सकते हैं। न्यूरोलॉजी नामक जनरल में प्रकाशित शोध में यह बात सामने आई है। दिन में दो प्लेट सलाद का नियमित सेवन डिमेन्शिया (मतिभ्रम) से बचाता है।

शिकागों की रश यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं के मुताबिक हरी पत्तेदार सब्जियां ही दिमाग का सही आहार है। इस शोध में 81 वर्ष से अधिक के 960 लोगों को शामिल किया गया। इन लोगों का 10 साल तक निरंतर रिकॉर्ड जांचा गया, जिसमें सामने आया कि कुछ लोग ऐसे थे जो रोज अच्छी मात्रा में सलाद का सेवन करते थे। कुछ ऐसे थे जो कम सलाद खाते थे। कम मात्रा में सलाद खाने वालों की अपेक्षा सलाद का अधिक सेवन करने वाले लोगों का दिमाग उनकी उम्र से 11 साल जवान था।

बच्चों के पेट में कीड़ों की समस्या दूर करता बथुआ

बथुए को साग की तरह खाने के अलावा लोग रायते के रूप में भी खाते हैं। इसमें आयरन, कैल्शियम, विटामिन-ए, फॉस्फोरस पोटेशियम आदि पोषक तत्त्व भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। रक्त शोधन करने के अलावा यह अन्य कई प्रमुख रोगों के इलाज और बचाव में भी उपयोगी है।

सफेद दाग, फोड़े-फुंसी, कुष्ठ जैसे त्वचा रोगों में राहत के लिए इसे खा सकते हैं। उबालकर इसका रस पीने और सब्जी बनाकर भी खा सकते हैं। बथुए के उबले पानी से त्वचा को धोने से भी फायदा होता है।

बथुए को नैचुरल ब्लड प्यूरिफायर भी कहते हैं। यह रक्त में मौजूद विषैले

पदार्थों को बाहर निकालता है। इसके लिए बथूए को नीम की 4-5 पत्तियों के साथ मिलाकर खाने से रक्त साफ होता है। साथ ही पाचनतंत्र दुरुस्त रहता है।

अक्सर बच्चों के पेट में कीड़े होने की शिकायत होती है। ऐसे में यदि उन्हें बथुए का साग बनाकर खिलाएं तो फायदा होगा। बथुए के पत्तों को धोकर आटे में गूंथकर रोटी या परांठा बनाकर भी दे सकते हैं। इसके अलावा कच्चे बथुए के एक कप रस में स्वाद के अनुसार नमक मिलाकर भी दिया जा सकता है।

युरिन करने के दौरान यदि जलन की समस्या रहती है तो आधा किलो बथुए को तीन गिलास पानी में उबालें और फिर इस पानी को छानकर पीएं। इसमें पिसी कालीमिर्च, नींबू का रस व सेंधा नमक भी मिलाकर पी सकते हैं।

ध्यान रखें कि इसे सीमित मात्रा से ज्यादा खाने पर डायरिया की समस्या हो सकती है।

असाध्य बीमारियों का इलाज है तुलसी

तुलसी अनेक असाध्य तथा जीवन शैली से जुड़े रोगों का अचूक ईलाज है। तुलसी सांस की बीमारी मुहं के रोगों, बुखार, दमा फेफड़ों की बीमारी, हृदय रोग तथा तनाव से छूटकारा पाने में रामबाण साबित होती है। तुलसी शरीर में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ानें में वायरल संक्रमण बालों तथा त्वचा के रोगों का भी कारगर उपाय है।

पंतजलि आयुर्वेदिक हरिद्वार के आचार्य बालकृष्ण जी के अनुसार निम्नलिखित रोगों में तुलसी के प्रयोग से सस्ता तथा सुलभ तरीके से उपचार किया जा सकता है।

प्रयोग विधि

शिरो रोग

- तुलसी के 5 पत्तों को प्रतिदिन पानी के साथ निगलने से बुद्धि मेधा तथा मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है।
- तुलसी तेल को 1.2 बूंद नाक में टपमाने से पुराना सिद दर्द तथा अन्य सिर संबंधी रोग दूर होते हैं।
- तेल को मुंह पर मलने से चेहरे का रंग साफ हो जाता है।

कर्ण रोग

- **कर्णशुलः** तुलसी पत्ता स्वरस को गर्म करके 2.2 बूंद कान में टपकाने से कर्णशूल का शमन होता है।
- तुलसी के पत्ते, एरंड की कोपले और चुटकी भर नमक को पीसकर कान पर उससका गुनगुना लेप करने से कान के पीछे कर्णशुल की सूजन नष्ट होती है।
- **दंतशुलः** काली मिर्च और तुलसी के पत्तों की गोली बनाकर दांत के नीचे रखने से दंतशूल दूर होता है।
- तुलसी के रस को हल्के गुनगुने पानी में मिलाकर कुल्ला करने से कंठ के रोगों में लाभ होता है।
- तुलसी रस युक्त जल में हल्दी और सैंधा नमक मिलाकर कुल्ला करने से मुख, दांत तथा गले के विकार दूर होते हैं।

वक्ष रोग

सर्दी खाँसी, प्रतिश्चाय एवं जुकाम तुलसी पत्ता मंजरी सहित 50 ग्राम, सोंठ 25 ग्राम तथा काली मिर्च 15 ग्रोम को 500 मिली जल में मिलाकर क्वाथ करे चैथाई शेष रहने पर छाने तथा इसमें 10 ग्राम छोटी इलायची के बीजों का महीन चूर्ण डालें व 200 ग्राम चीनी डालकर पकायें और एक बार की चाशनी हो जाने पर छानकर रख लें।

इस शर्बत का आधे से डेढ़ चम्मच की मात्रा में बच्चों को तथा 2 से चार चम्मच तक बड़ों को सेवन कराने से खांसी, श्वास, काली खांसी कुक्कर खांसी, गले की खराश आदि में फायदा होता है।

इस शर्बत में गर्म पानी मिलाकर लेने से जुकाम तथा दमा में बहुत लाभ होता है।

तुलसी की मंजरी, सोंठ मिलाकर चटाने से सूखी खांसी और बच्चे के दमें में लाभ होता है।

त्वचा रोग

कुष्ठ रोग 10.20 मिलीमी तुलसी पत्रा स्वरस को प्रतिदिन प्रातःकाल पीने से कुष्ठ रोग में लाभ होता है।

तुलसी के पत्रों को नींबू के रस में पीसकर, दाद, वातरक्त कुष्ठ पर लेप करने से लाभ होता है।

सफेद दाग झांई-तुलसी पत्र स्वरस नींबू रस कंसौदी पत्र स्वरस तीनों को बराबर बराबर लेकर उसे तांबे के बरतन में डालकर चौबीस घंटे के लिए धूप में रख दें गाढा हो जाने पर रोगी को लेप करने से दाग तथा अन्य चर्म विकास साफ होते हैं, इसे चेहरे पर भी लगाया जाता है।

नाड़ीव्रण - तुलसी बीजों को पीसकर लेप करने से दाह तथा नाडीव्रण का शमन होता है।

शीतपित्त - शरीर पर तुलसी स्वरस का लेप करने से शीतपित्त तथा उदर्द का शमन होता है।

शक्तिवृद्धि के लिये -20 ग्राम तुलसी बीजचूर्ण में 40 ग्राम मिश्री मिलाकर महीन-महीन पीस लें, इस मिश्रण को 1 ग्राम की मात्रा में शीत ऋतु में कुछ दिन सेवन करने से वात-कफ रोगों से बचाव होता है। दुर्बलता दूर होती है शरीर की रोग-प्रतिरोध क्षमता बढ़ती है व वायु मंडल सशक्त होता है।

ज्वर रोग

मलेरिया ज्वर - तुलसी का पोधा मलेरिया प्रतिरोध है। मलेरिया में तुलसी पत्रों का क्वाथ तीन-तीन घंटे के अन्तर से सेवन करें। तुलसी मूल क्वाथ को आधा ओंस की मात्रा में दिन में दो बार देने से ज्वर तथा विषम ज्वर उतर जाता है।

साधारण ज्वर -तुलसी पपत्रा, श्वेत जीरा, छोटी पीपल तथा शक्कर, चारों को कुटकर प्रातः सायं देने से लाभ होता है।

विष चिकित्सा

सर्पविष- 5 से 10 मिली तुलसी पत्रा स्वरस को पिलाने से और इसकी मंजरी और जड़ों को बार-बार दंशित स्थान पर लेप करने से सर्पदंश की पीड़ा में लाभ मिलता है। अगर रोगी बेहोश हो गया हो तो इसके रस को नाक में टपकाते रहना चाहिये।

शिरोगत विष - विष का प्रभाव यदि शिर प्रदेश में प्रतीत हो तो बन्धु जीव, भारंगी तथा काली तुलसी गूल के स्वरस अथवा चूर्ण का नस्य देना चाहिये।

7 तुलसी के पत्रा तथा 5 लौंग लेकर एक गिलास पानी में पकायें। पानी पककर

जब आधा शेष रह जाये तब थोड़ा सा सेंधा नमक डालकर गर्म-गर्म पी जायें यह काढ़ा पीकर कुछ समय के लिये वस्त्र ओढ़कर पसीना लें। इससे ज्वर तुरन्त उतर जाता है तथा सर्दी, जुकाम व खांसी भी ठीक हो जाती है। काढ़े को दिन में दो बार 2-3 दिन तक ले सकते हैं।

अस्थिसंधि रोग

वातव्याधि 2 से 4 ग्राम तुलसी पंचांग चूर्ण का सुबह-शाम दूध के साथ सेवन करने से संधिशोध एवं गठिया के दर्द में लाभ होता है।

उदर रोग

वमन - 10 मिली तुलसी पत्रा स्वरस में समभाग अदरक स्वरस तथा 500 मिग्रा. इलायची चूर्ण मिलाकर लेने से छर्दि बंद हो जाती है।

अग्निमांद्य - तुलसी पत्रा के स्वरस अथवा फाण्ट को दिन में तीन बार भोजन से पहले पिलाने से अजीर्ण अग्निमांद्य बालकों को वकृत प्लीहा की विकृतियों में लाभ होता है।

अपच- तुलसी की 2 ग्राम मंजरी को पीसकर काले नमक के साथ दिन में 3 से 4 बार देने से लाभ होता है।

हार्ट है शरीर का पंपिंग स्टेशन स्वस्थ रहने से रहोगे फिट

फोलिक एसिड लेते रहें

होमोसिस्टीन और अमीनो एसिड रक्तवाहिनियों को कठोर करती है जो वाहिनियों की बीमारियों का मुख्य कारण होता है विटामिन बी जहां होमोसिस्टीन के स्तर को कम करता है तो फोलिक एसिड रक्त वाहिनियों की दीवारों की मोटाई को कम करता है। इसके अलावा फोलिक एसिड रक्त में हेमोसिस्टीन के स्तर को कम कर स्ट्रोक की आशंका को 12 प्रतिशत कम करता है। पालक, पुदीना, चना, सोया आदि से फोलिक एसिड प्राप्त किया जा सकता है।

ओमेगा 1 फैटी एसिड रहेगा मददगार

आइकोपेंटइनॉइक एसिड और डोकोसाहेवसेनों इक एसिड जैसे ओमेगा 3

फैटी एसिड हार्ट के लिए लाभकारी होते हैं। इनकी उपस्थिति रक्त का थक्का जमने, कॉलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने, जलन आदि को रोकने और दिल की धड़कन को सुचारू तौर पर चलने में मददगार होता है। ओमेगा 3 हमारी शरीर में नहीं बनता है इसलिए डाइट के जरिए ही इसे लेना पड़ता है। वेजिटेबल ऑयल्स अखरोट, अलसी के बीज और तेल व पत्तेदार सब्जियों के जरिए इसे प्राप्त किया जा सकता है।

लाइकोपीन से बीपी कंट्रोल

इसे एमयूएफए यानी मूफा भी कहते हैं जो हार्ट के लिए अच्छा होता है। मोनो अनसैचुरेटेड फैट एलडीएल कॉलेस्ट्रॉल का कम होना और एचडीएल कॉलेस्ट्रॉल का कम होना और एचडीएल कॉलेस्ट्रोल का ज्यादा होना के तौर पर जाना जाता है, जो हमारी कोशिकाओं के विकास और उन्हें मेंटेन रखने के लिए कुछ जरूरी पदार्थ उपलब्ध करवाता है। सैचुरेटेड और ट्रांस फैट की जगह मूफा का सेवन हार्ट के लिए मूंगफली का तेल, सनफ्लावर का तेल आदि मफा के अहम स्रोत होते हैं। बादाम, मूंगफली, आडूं, अखरोट आदि भी लाभकारी होते हैं।

हरी सब्जियां दिमाग को रखती चुस्त-दरुस्त

अक्सर डॉक्टर हरी सब्जियां खाने की सलाह देते हैं लेकिन हाल ही हुई रिसर्च में भी सामने आया है कि हरी सब्जियां आपके दिमाग को अधिक सक्रिय रखने में मदद करती है। अमरीका की रश यूनिवर्सिटी में हुए एक शोध के अनुसार हरी सब्जियां दिमाग को 11 साल पीछे की ओर ले जाती है और आपकी याद्दाश्त अधिक बेहतर हो पाती है। यह स्टडी 81 वर्ष के 960 लोगों पर की गई। जिनमें कोई भी याद्दाश्त की समस्या से पीड़ित नहीं था।

सर्दी में हृदय रोगों से बचाता है हरी-मेथी का सेवन

कई औषधिय गुणों से भरपूर पत्तेदार मेथी सामान्य रूप से होने वाले रोगों में दवा का काम करती है। इसमें मौजूद प्रोटीन, फाइबर, विटामिन-सी, नियासिन, आयरन आदि तत्त्व शरीर के प्रमुख हार्मोन्स को स्त्रावित कर शारीरिक कार्यप्रणाली को सुचारू करते हैं। इसकी खास बात यह है कि सर्द हवाओं से हृदय पर पड़ने वाले

दबाव को दूर करती है। सर्दी के मौसम में इसका सेवन शरीर को फिट रखता है।

मैग्नीशियम का स्तर बनाएं

तनाव की स्थिति स्ट्रेस हार्मोन के अत्यधिक रिलीज होने से बनती है। ऐसे में कोशिश करें कि अपने खान-पान में मैग्नीशीयम तत्व से युक्त चीजों को ज्यादा खाएं। इस तत्व की खासियत यह है कि यह हार्मोन के स्त्राव को कंट्रोल रखने के साथ स्वभाव को सामान्य बनाए रखता है। भोजन में हरी पत्तेदार सब्जियां खाने के अलावा सूखे मेवे, बीज मौसमी फल आदि खाएं।

लाभदायक है पालक में पाए जाने वाले नाइट्रेट

पालक में पाए जाने वाले नाइट्रेट आपको बढ़ानें के साथ ही मजबूत बनाते हैं। आम धारणा यह है कि लौह तत्व के कारण पालक लाभकारी होता है, लेकिन वैज्ञानिकों का मानना है कि इसमें पाए जाने वाले नाइट्रेट इससे भी ज्यादा लाभकारी है। वैज्ञानिकों का मानना है कि पत्तेदार सब्जियों में प्रचुर मात्रा में पाए जाने वाले नाइट्रेट जीवकोषों को मजबूत बनाते हैं और इन्हीं जिनके माध्यम से हमारी शरीर का विकास होता है। यह हमारे शरीर की कोशिकाओं को जरूरी इंधन देता है।

'मोटाबॉलिज्म' नामक जर्नल में प्रकाशित रिपोर्ट में कहा गया है कि अभी कुछ समय पहले तक यह समझा जाता था कि नाइट्रेट में शरीर को फायदा पहुंचाने संबंधी कोई गुण नहीं होता है। स्वीडन के वैज्ञानिकों का मत है कि अकार्बनिक नाइट्रेट का तीन दिनों तक थोड़ी में भी सेवन करना बेहद फायदेमंद रहता है। वैज्ञानिकों के अनुसार पथ्य नाइट्रेट शरीर में नाइट्रिक ऑक्साइड की मात्रा बढ़ाता है। इसका काम रक्त नलिकाओं को खोलना और रक्तचाप की संभावना को कम करना है। इससे हमारे शरीर में रक्तसंचार बेहतर होता है।

दीर्घायु बनाए ओमेगा 3

एनल्स ऑफ इंटरनल मेडिसिन' में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार रोजाना आधा कप पकाया हुआ पालक, थोड़े से अखरोट और हिंल्सा की सर्विंग या 50 ग्राम टोफू रोज खाने से हार्ट डिजीज का खतरा कम किया जा सकता है। वैज्ञानिकों ने 1992 में 2692 स्वस्थ वयस्कों के रक्त में ओमेगा-3 फैटी एसिडस का

लेवल मापा और 2008 में दोबारा उसे चेक किया। इनके खानपान की आदतें जानी गई। वैज्ञानिकों ने पाया कि जिनमें ओमेगा-3 का लेवल उच्च था उनके हार्ट डिसीज से मरने का जोखिम 35 फीसदी कम था।

नीम की पत्तियां

नीम की पत्तियां खून को साफ करती है। नीम की पत्तियों के नियमित इस्तेमाल से लीवर और पाचन ग्रंथि की कार्यप्रणाली सुधरती है। यह मधुमेह के रोगियों में ब्लड शुगर के स्तर को भी सामान्य रखती है।

स्वाद के साथ सेहत भी बनाता है

तेजपत्ते का सेवन

तेजपत्ता को आयुर्वेद में एक औषधि बताया गया है। खाने में इसके इस्तेमाल से स्वाद और महक दोनों बढ़ती है। यह कई बीमारियों में फायदा पहुंचाता है।

दमा के रोगियों के लिए यह बहुत फायदेमंद है। मिश्री, अदरक, पीपल और तेजपत्ता को बराबर मात्रा में मिलाकर चटनी बनाएं। रोजाना एक चम्मच इसकी चटनी लें।

खांसी - से निजात पाने के लिए एक चम्मच तेजपत्ता के चूर्ण को शहद के साथ ले, राहत मिलेगी।

सिरदर्द - बार-बार छींक आना और सर्दी-जुकाम में तेजपत्ता के चूर्ण की चाय पीने से इन दिक्कतों में आराम मिलता है। चाय की पत्ती की जगह तेजपत्ता का चूर्ण का इस्तेमाल करें।

खाने में रोजाना तेजपत्ता का पत्ता इस्तेमाल करते हैं तो हृदय रोगों का खतरा काफी हद तक कम हो सकता है।

दांतों की मजबूती चमक बढ़ाने और कीड़े की समस्या से राहत पाने के लिए तेजपत्ता के चूर्ण से हफ्ते में 3-4 दिन मंजन करें।

पेट में गैस की समस्या तो इसका चूर्ण पानी के साथ लें। इससे पेट में जलन यानी एसिडिटी आदि की दिक्कत भी दूर होगी।

मुंह की दुर्गंध को दूर करने के लिए तेजपत्ता का पत्ता खाना खाने के बाद चबाएं।

मूल की आत्मकथा (मूल का वैश्विक स्वरूप)

(वृक्ष से ले विश्व-संसार-धर्म-मोक्ष-आदि के मूल)

- आचार्य कनकनंदी

(चालः- आत्मशक्ति..., पूछ मेरा क्या नाम रे...)

मूल मेरा नाम है, मूलभूत मेरा काम है।
हर-द्रव्य-गुण-पर्यायों में मेरा प्रमुख काम है।। (स्थायी)

यथा वृक्षों में मैं प्रमुख भाग, 'मूल' रूप में ख्यात हूँ।
तथाहि मैं हर विषयों के प्रमुख रूप में स्थित हूँ।।
वृक्षों की स्थिति वृद्धि हेतु, मैं प्रधानभूत अंग हूँ।
मैं धरती से रस पीकर, वृक्षों को करूँ हृष्ट-पुष्ट हूँ।।(1)

मेरे द्वारा रस पीने से, वृक्षों का अन्वयार्थ पादप है।
उस रस से पत्तियाँ भोजन बनाने से वृक्ष होते परिपुष्ट है।।
ऐसा ही भाषा में, 'अक्षर मूल है, जिससे बनते शब्द पद भी।
जिससे बनते वाक्य से लेकर, कविता व महाग्रन्थ भी।। (2)

समाज हेतु 'मूल है मानव', इनके हेतु शिक्षा-संस्कार भी।
नीति-नियम व कानून राजनीति-संविधान से ले धर्म भी।।
भौतिक विश्व के 'मूल परमाणु,' जिससे बने स्कन्ध-महास्कन्ध भी।
जल-वायु-अग्नि-पृथ्वी से ले, समस्त भौतिक-जैविक-रसायण भी।। (3)

समस्त लोक-अलोक के मूल होते जीवादि षट द्रव्य हैं।
इनके अस्तित्व बिना कुछ न संभव तीनों काल में भी हैं।।
संसार भ्रमण के 'मूल कर्म' हैं, जो द्रव्य-भाव-नोकर्म रूप में।
इनमें भी 'मूल भावकर्म' जो राग-द्वेष-मोह स्वरूप है।। (4)

मुक्ति प्राप्ति के 'मूल धर्म है, धर्म के भी 'मूल आत्मश्रद्धान (आत्मविश्वास) है
'दया धर्म का मूल है मोक्ष का भी 'मूल रत्नत्रय' है।।

'मूलगुण' या 'मूलव्रत' होता उससे ही होते उत्तर गुण भी।
मूलस्वभाव होता है उससे ही होते हैं उत्तर स्वभाव भी।। (5)

मुझे (मूल) से ही मौलिकता बने जो शुद्ध-सम्पूर्ण-स्वतंत्र है।
इससे (मुझसे) ही यौगिक-मिश्रादि बने मेरे बिना ये न संभव है।।
वृक्ष मूल सिंचन से यथा पूर्ण वृक्ष होते लाभान्वित है।
तथाहि हर विषय में ज्ञेय मेरे बिना न किसी का अस्तित्व है।। (6)

और कुछ भी मेरे स्वरूप है यथा, महल हेतु नींव मूल है।
वस्त्र हेतु मूल धागा है धागा हेतु मूल होते तन्तु है।।
जीविका हेतु मूल कृषि है, आध्यात्मिक संस्कृति हेतु ऋषि है।
समाज हेतू मूल समता-समन्वय-सहयोग-समवंटन है।। (7)

विकास हेतु 'मूल आत्मविश्वास', ज्ञान व आचरण सहयोगी है।
धैर्य साहस व संयम-अनुभव, इसके भी सहयोगी है।।
अज्ञानी-मोही-स्वार्थी मानव मूल को ही भूल जाते हैं।
उन्हें समझाने हेतु 'सूरी कनक', मेरे व्यापक रूप बताते हैं ।। (8)
ओबरी 23.01.2018 रात्रि 07:36

मैं ही मेरे संसार-मोक्ष का ईश्वर मैं हूँ

(मैं ही मेरे पाप-पुण्य व मोक्ष के कर्त्ता-धर्त्ता-भोक्ता-विधाता हूँ)

- आचार्य कनकनंदी

(चालः- कसमें वादे .... आत्मशक्ति ... क्या मिलिए...)

मैं ही मेरा कर्त्ता-धर्त्ता-भोक्ता विधा मैं ही हूँ।
संसार से मोक्ष तक अतः मेरा ईश्वर मैं ही हूँ।।
अशुभ भाव जब मेरे होते... पापबन्ध करता हूँ।
इससे निम्न गतियों में .... अनेक दुःख भोक्ता हूँ।।1।।
शुभ भाव जब मेरे होते .... पुण्यबन्ध करता हूँ।

इससे उच्चगतियों में ... संसार सुख भोक्ता हूँ।।
ऐसे शुभ-अशुभ भाव ... कर रहा हूँ (मैं) अनादि से।
जिससे पुण्य-पाप विधाता ... बना हूँ अनादि से।। (2)

इससे पंचपरिवर्तनों में .... चौरासी-लक्ष्य-योनि पाकर।
चतुर्गति रूपी संसार में ... जन्म-मरण (किया) अनन्त बार।।
सुद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव अथवा ... पंचलब्धियों को पाकर।
उपशम सम्यक्त्व पाकर पुनः त्याग किया अनेक बार।। (3)

सम्यक्त्व रहित अवस्था में, पंच परिवर्तन (किया) अनन्त बार।
विश्व के हर द्रव्य-क्षेत्र-काल में जन्मा-मरा भी अनन्त बार।।
विश्व के हर पुद्गल द्रव्य को ... ग्रहण व त्याग भी किया।
आहार-भोजन-शरीर आदि के ... हेतु ग्रहण-त्याग किया।। (4)
इस दृष्ट से पूर्ण विश्व मेरे ... जन्म-मरण के स्थान है।
विश्व के पूर्ण भौतिक द्रव्य ... मेरे अपशिष्ट पदार्थ है।।
एक बार भी सम्यक्त्व होने से ... मेरा अनन्त संसार हुआ नाश।
कुछ भव से ले अधिक से अधिक ... अर्द्ध पुद्गल परिवर्तन में मोक्ष।।(5)

अभी तो देव-शास्त्र-गुरु श्रद्धान सह... स्व-शुद्धात्मा का करूं श्रद्धान।
अतः ज्ञान चारित्र-युक्त अशुभ त्याग से शुभ में परिणमन।।
शुभ परिणमन सहित शुद्ध हेतु ... कर रहा हूँ लक्ष्य निर्धारण।।
जिससे पाप नाश से सातिशय पुण्य से अन्त में परिनिर्वाण।। (6)

मोक्ष से बनूँगा शुद्ध-बुद्ध-आनन्दमय सच्चिदानन्द।
पुण्य-पाप से रहित स्व-शुद्धात्मा का ही कर्त्ता-भोक्ता।।
अतएव मैं ही मेरे सभी अवस्थाओं का कर्त्ता-भोक्ता।।
भले बाह्य निमित्त अनेक है, तथापि निश्चय से स्व-कर्त्ता-भोक्ता।। (7)

यह है मेरा वैश्विक रूप अनन्त भूत से भविष्य का।
मैं हूँ स्वयंभू-स्वतंत्र-अविनाशी स्वरूप 'कनक' का।। (8)

(यह कविता 'प्रार्थना द्वारा समाधान पाने की तकनीकें' के लेखक 'डा. जोसेफ मर्फी' से प्रभावित होकर रची।)

संदर्भ :-

''मैं अब जिन्दगी में कभी नहीं मानूंगा कि दूसरों में मुझसे नुकसान पहुँचाने की क्षमता या शक्ति है। मैं जानता हूँ कि उनमें ऐसी कोई शक्ति नहीं है''। जैसा आ तुरन्त अनुमान लगा सकते हैं,उनका यह कथन उपचारक प्रक्रिया का 51 प्रतिशत हिस्सा था; बाकी काम आसान था। वे जान गए थे कि वे मानसिक लुटेरों-हत्यारों और उपद्रवियों को शह दे रहे थे, जो उनकी शान्ति और आन्तरिक शान्ति छीन रहे थे। उनके नकारात्मक, विनाशकारी विचारों ने ही उनका पेप्टिक अल्सर उत्पन्न किया था। उनके विचार ही उन्हें लूटने वाले चोर थे।

मैं अपनी रूह पोशीदा भेजी -
इस जिन्दगी के बाद की जिन्दगी को समझाने के लिए,
और मेरी रूह लौटकर मेरे पास पाई
और बोली, ''मैं खुद ही जन्नत व दोजख हूँ।'' - *उमर खय्याम*

यह सोचना तथा जानना होगा कि जवाब या समाधान आपके पास आ चुका है, क्योंकि सर्वज्ञता और सर्वदृष्टा आपके भीतर ही वास करता है।

बाइबल कहती हैः यह शाश्वत जीवन है, ताकि वे जान सकें कि आप ही एक मात्र सच्चे ईश्वर हो (जॉन : 3)

जीवन कभी जन्म नहीं लेता और यह कभी मरेगा भी नहीं पानी इसे गीला नहीं कर सकता, आग इसे जला नहीं सकती हवा इसे उड़ा नहीं सकती।

यह महान् सत्य याद रखना चाहिए : जैसा इंसान अपने दिल में सोचता है, वैसा ही वह होता है। खान-पान, व्यायाम और किसी भी तरह के खेल इस आदमी को युवा नहीं रखेंगे।

यह जीवन शाश्वत है, ताकि वे जान सकें कि आप ही अकेल ईश्वर हो (जॉन 17:3)। ईश्वर ही आपका जीवन है और आपकी वास्तविकता है, यह तथ्य जानना या इससे परिचित होने का मतलब यह जानना भी है कि आप अमर है।

दरअसल, हम सभी आयामों में जी रहे हैं,क्योंकि हम ईश्वर में जी रहे हैं, जो असीमित है।

आत्मा का फल है प्रेम, प्रसन्नता, शान्ति, धैर्य, नम्रता, अच्छाई, आस्था, विनय, संयम, इसके खिलाफ कोई नियम नहीं है (गैलेशियन्स 5 : 22 -23)। आप असीमित की सन्तान है, जिसका कोई अन्त नहीं है और आप अमरता की सन्तान हैं।

अपने व्याखानों में वे एक ईश्वर, ''मैं'', में विश्वास पर आधारित जीवन सिद्धान्तों और अवचेतन मन की शक्ति को समझने के महत्त्व पर जोर देते थे।

मैं पुरुषों और स्त्रियों को उनका दैवी उद्गम बताना चाहता हूँ और उनके भीतर मौजूद शक्तियों के बारे में भी। मैं यह जानकारी देना चाहता हूँ कि यह शक्ति उनके भीतर है और वे अपने खुद के सहाय हैं और अपनी मुक्ति हासिल करने में खुद सक्षम हैं। यही बाइबल का संदेश है और हमारी नब्बे प्रतिशत दुविधा इस कारण है, क्योंकि हमने बाइबल के जीवन बदलने वाले सत्यों की गलत, शाब्दिक व्याख्या कर ली है।

उनका संदेश सादर रूप में यह था : ''आप सम्राट है, अपने संसार के शासक हैं, क्योंकि आप ईश्वर के साथ एक हैं।'' (डॉ. जोसेफ मर्फ़ी)

महावीर जयंती उपलक्ष्य में 'स्व' में स्थिर होने की साधना के निमित्त

परपरिणती त्यागसे बनूँ परम स्वतंत्र-सुखी

- आचार्य कनकनंदी

(चालः- मन रे...!, तू काहे न .... सायोनारा ....)

आत्मन्! तू शुद्ध-बुद्ध-स्वतंत्र बन ऽऽऽ
इससे ही मिलेगा तुझे आत्मिक सुख ऽऽऽ अतः परपरिणती त्यज ऽऽऽ (ध्रुव)
परपरिणती में / (से) होता विभाव भाव ...विभाव ही अशुद्ध व परतंत्रऽऽऽ
इससे ही मिलता आत्मिक दुःख .... आत्मिक दुःख ही अधर्म व संसार ऽऽऽ
यह ही परतंत्र व विकार ऽऽऽ (आत्मन्) (1)

तेरा ही तू कर्त्ता-धर्त्ता-भोक्ता बनो ..... यह ही तेरी परमस्वतंत्रता ऽऽऽ
अन्य के कर्त्ता-धर्त्ता-भोक्ता त्यागो .... यह ही तेरी परम स्वाधीनता ऽऽऽ
इसे ही कहते स्व आत्माधीनता ऽऽऽ (आत्मन्)ऽऽऽ
पर परिणती में /(से) होते राग-द्वेष-मोह ...ईर्ष्या-तृणा-घृणा-वैर-विरोध ऽऽऽ
इससे ही बन्धते कर्म दुःख ऽऽऽ (आत्मन्) (3)

हर जीव स्वयं का ही कर्ता-भोक्ता ऽऽऽ तेरे से होता है स्वतंत्र ऽऽऽ
अन्य का परिणमन होता उसमें ऽऽऽ उसके हेतु तू न करो परिणमन
अन्यथा तू होाग उसका गुलाम ऽऽऽ (आत्मन्) (4)

अन्य के भाव-व्यवहार कथन से ... भले ले लो तू सही शिक्षा ऽऽऽ
किन्तु उनके कारण न बनो दोषी .... न करो राग-द्वेष-मोह-ईर्ष्या ऽऽऽ
केवल बनो तू ज्ञाता - दृष्टा ऽऽऽ (आत्मन्) (4)

यह ही तेरा परम धर्म है .... मोक्षमार्ग से लेकर मोक्ष ऽऽऽ
समता-शान्ति विशुद्धि प्रगति .... आध्यात्मिक साधना व अहिंसा ऽऽऽ
'कनक' स्व-स्वभाव में करो निष्ठा ऽऽऽ
शुद्ध-बुद्ध-आनन्द में करो प्रतिष्ठा ऽऽऽ (आत्मन्) (6)

मेरे हेतु ग्राह्य-अग्राह्य-माध्यस्थ

- आचार्य कनकनंदी

(चालः- तेरे प्यार का आसरा...., तु दिल की ....)

स्व-पर-विश्वहित चिन्तन करूँ,स्व-पर-विश्व अहित चिन्ता न करूँ।
संकल्प-विकल्प-संक्लेश त्यागूँ, इस हेतु मैं पावन संकल्प करूँ।
मैत्री-प्रमोद-करुण्य-माध्यस्थ धरूँ, ईर्ष्या-घृणा-वैर-विरोध त्यागूँ।
स्व-पर गुण-दोषों से शिक्षा मैं लहूँ, स्व-गुण बढ़ाऊँ परदोष न स्वीकारूँ (1)

ख्याति-पूजा-लाभ-वर्चस्व त्यागूँ, निस्पृह-निराडम्बर-वैरागी बनूँ।
आकर्षण-विकर्षण-द्वन्द्व मैं त्यागूँ, समता-शान्ति-सन्तुष्ठी धरूँ।।

शोध-बोध से हित सत्य ग्रहण करूं, प्रतिस्पर्द्धा व नकल नहीं मैं करूँ।
दबाव-प्रलोभन-ठगी न करूँ, सहज-सरल-निर्भय भाव मैं धरूँ ।। (2)

आत्मविश्वास-ज्ञान-चारित्र धरूँ,दीन-हीन-विकार भाव न धरूँ।
'स्वाभिमान' 'सोऽहं' 'अहं' भाव मैं धरूं, 'अहंकार' 'मककार'भाव मैं त्यागूँ।।
ज्ञान-ज्ञेय-हेय-उपादेय मैं जानू, निर्विकल्प-वीतरागज्ञान मैं चाहूँ/त्यागूँ।
अशुभ-शुभ व शुद्ध मैं जानूँ, शुभ से भी परे शुद्ध ही चाहूँ।। (3)

स्वधर्मी-विधर्मी व अधर्मी जानूँ, स्वधर्मी वात्सल्य अन्यसे मैत्र्यादि करूँ।
पापात्मा-पुण्यात्मा व शुद्धात्मा जानूँ, शुद्धनय से सभी को शुद्ध मैं मानूँ
स्व-पर-विश्व हित हेतु चाहूँ, स्वहित सह परहित मैं करूँ।
उपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा त्यागूँ, स्व-शुद्धात्मा का ध्यान-अध्ययन मैं करूँ।। (4)

मैं ही मेरे द्वारा मुझे मैं पाऊँ, निर्विकार-निर्विकल्प-निष्कम्प बनूँ।
रागी-द्वेषी-अज्ञानी मोही न बनूँ,रागी-द्वेषी-अज्ञानी से माध्यस्थ रहूँ।।
आत्मानुभव-आत्मविशुद्धि बढ़ाता जाऊँ पर निन्दा-पर अहित त्यागता जाऊँ।
एकत्व-विभक्त से स्व-शुद्धात्मा बनूँ, 'कनक' शुद्ध-बुद्ध-आनन्द बनूँ।। (5)

''आचार्य कनकनन्दीजी गुरूदेव के श्री चरणों में समर्पित''

''मेरी श्रृद्धा यहाँ क्यों झूक जाती हैं''

बार-बार मेरी श्रद्धा यहाँ क्यों झूक जाया करती है।
तेरे चरणों में आकर ही क्यों रूक जाया करती है।।
मेरे अन्तस से प्रश्न उठता तुझमें ऐसी क्या बात है।
जो हरपल करते स्व का ध्यान समता भी तेरे साथ है।।
ये पीछी कमण्डल और रूप दिगम्बर बहुतों ने धार लिया है।
पर जो इसमें तुमने खोजा और इसका जो सार लिया है।।
वर्तमान के इस युग में नहीं किसी ने ऐसा प्रयत्न किया है।

जैन धर्म की सत्य, प्रभावना में तुमने जो साथ दिया है।।
ऐसा किसी ने नहीं किया है ऐसा किसी ने नहीं दिया है।
प्रेरणा आपका मुख नहीं आपका जीवन हमें बताता है।।
क्योंकि मुख तो अल्प पर जीवन तो असिमित सिखाता है।
कर्म बन्धन बहुत बुरा है उसे छोड़ना ऐसा सब कहते हैं।।
पर आप उसको छोड़ने का सच्चा उपक्रम करते हैं।
समता और शान्ति में है सच्चा धर्म ऐसा भी सब कहते है।।
पर समता और शान्ति में कोई ना रह पाते हैं।
ये बात अलग है आप समता में रमते जाते हैं।।
कर्मों को अब डर लगता है ये कैसा मनुष्य पाया है।
जो मेरी ही वंश परम्परा का नाश करने आया है।।
मेंरे दुश्मन के ये तो परम मित्र बन गये हैं।
शुभ और शुद्ध भावों के सुन्दर चित्र बन गये हैं।।
शुभ और शुद्ध भाव भी सोचे ये व्यक्तित्व भी कैसा है।
हमने तो अंगुली पकडाई ये हाथ पकड़ कर बैठा है।।
दिन भर हमको जकड़े रखे रात को भी ना आराम मिले।
हमको पाकर ऐसे खुश हो जैसे हनुमत को राम मिले।।
अब ना ये हमको छोडेंगे बात समझ में आई है।
इसलिये हमने भी इनके पास ही रहने की कसम खाई है।।
ऐसे शुद्ध भावों में रहने वाले गुरुवर को शत-शत वंदन है।
द्वय चरणों में ''सुनीति' का श्रद्धा से अभिनन्दन है।।

आ.सुनीतिमती माताजी, 5.01.2018 श्रवणबेलगोल